विषय - सूची

विशेष जानने योग्य बाते

मुद्रक श्री जवाहर प्रिंटिंग वर्क्स, ८० रबिन्द्र सरणी, कलकत्ता-७

प्रमुख जैन तीर्थक्षेत्र

[बिहार प्रान्त]

सम्मेद शिखर—इस क्षेत्र से २० तीर्थङ्कर एव असख्यात मुनि मोक्ष गये है। पारसनाथ स्टेशन से एव गिरिडीह से शिखरजी जाने के लिये मोटर मिलती है।

गुणावा—नवादा स्टेशन से डेढ़ मील। यहाँ से गौतम स्वामी मोक्ष गये है।

पावापुरी—नवादा से मोटर जाती है। यहाँ से महावीर स्वामी कार्तिक कृष्णा ३० को मोक्ष गये हैं। जल-मन्दिर दर्शनीय है।

राजगृही—विपुलाचल, सोनागिरि, रत्नागिरि, उदयगिरि, वैभारगिरि—ये पञ्च पहाड़ियाँ प्रसिद्ध हैं। इन पर २३ तीर्थङ्करो का समवशरण आया था।

कुण्डलपुर—नालन्दा स्टेशन से ३ मील दूर—भगवान महावीर का जन्मस्थान है।

चम्पापुरी—भागलपुर स्टेशन। यहाँ से वासुपूज्य स्वामी मोक्ष गये है।

गुलजार बाग—(पटना) यहाँ से सेठ सुदर्शन मुक्ति गये हैं।

[उड़ीसा प्रान्त]

खण्डगिरि-उदयगिरि—भुवनेश्वर स्टेशन से ४ मील पर दो पहाड़ियाँ है। यहाँ स कलिंग देश के ५०० मुनि मोक्ष गये है।

[उत्तर प्रदेश]

सिंहपुरी—बनारस से ७ मील। यहाँ श्रेयांसनाथ भगवान के गर्भ, जन्म, तप—ये तीन कल्याणक हुए थे। वर्तमान मे सारनाथ के नाम से प्रख्यात है।

चन्द्रपुरी—बनारस से १३ मील अथवा 'सारनाथ' से ६ मील गगा के किनारे पर है। यहाँ पर चन्द्रप्रभु भगवान का जन्म हुआ था।

अयोध्या—आदिनाथजी, अजितनाथजी, अभिनन्दननाथजी, सुमतिनाथजी, अनन्तनाथजी का जन्मस्थान।

अहिक्षेत्र—बरेली-अलीगढ़ लाइन पर आमला स्टेशन से ८ मील। यहाँ भगवान पार्श्वनाथ के ऊपर कमठ ने घोर उपसर्ग किया था और उन्हे केवलज्ञान प्राप्ति हुआ था।

हस्तिनापुर—शान्तिनाथ, कुन्थनाथ, और अरहनाथ तीर्थङ्करो के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान कल्याणक हुए थे।

चौरासी—मथुरा शहर से १॥ मील। यहाँ से जम्बू स्वामी मोक्ष गए थे।

शौरीपुर—शिकोहाबाद से १० मील पर बटेश्वर ग्राम है। यहाँ पर नेमिनाथ स्वामी के गर्भ और जन्म—ये दो कल्याणक हुए थे।

[मध्य प्रान्त : बुन्देलखण्ड]

सोनागिरि—ग्वालियर-झाँसी लाइन पर सोनागिर स्टेशन से ३ मील दूर पहाड़ पर ७७ दिगम्बर जैन मन्दिर हैं। यहाँ से नंग-अनंगकुमार आदि साढ़े पाँच करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं।

देवगढ़—जाखलौन स्टेशन से ९ मील दूरी पर है। भगवान शान्तिनाथ जी की १२ फीट उत्तुंग विशाल प्रतिमा है। ९ मानस्तम्भ हैं तथा ३१ मन्दिर हैं।

पपौरा—ललितपुर से २६ मील और टीकमगढ़ से ३ मील है। चारों ओर कोट बना है। यहाँ लगभग ८० मन्दिर हैं। कार्तिक सुदी ७, को मेला भरता है।

अहार—ललितपुर स्टेशन से ५० मील टीकमगढ़ है। यहाँ से १२ मील पूर्व में यह क्षेत्र स्थित है। यहाँ पर १८ फुट उत्तुंग श्री शान्तिनाथ की खड्गासन प्रतिमा है।

चन्देरी—मुंगावली से २४ मील। यहाँ से मोटर जाती है। यहाँ की चौबीसी भारतवर्ष में प्रसिद्ध है। ललितपुर से २० मील, वर्षा में मोटर नहीं चलती।

थोवनजी—चन्देरी से ८ मील। यहाँ २५ जिन मन्दिर हैं। भगवान शान्तिनाथ की २० फुट उत्तुंग सौम्य मूर्ति अपनी विशालता के लिये प्रसिद्ध है।

खजुराहो—[illegible] से छतरपुर से [illegible] मील है। यहाँ तक पक्की सड़क गई है। ३१ दि० जैन मन्दिर हैं। यहाँ के प्राचीन मन्दिरों की शिल्पकला दर्शनीय है।

द्रोणगिरि—छतरपुर से बक्स्वाहा मोटर जाती है। निकटवर्ती स्टेशन [illegible] सागर है। यहाँ से गुरुदत्तादि मुनि मोक्ष गये हैं।

बीनाजी अतिशय क्षेत्र—सागर से ४० मील मोटर द्वारा देवरी, फिर ३ मील बैल गाड़ी पर। यहाँ भगवान शान्तिनाथजी की खड्गासन १८ फुट ऊँची मूर्ति दर्शनीय है।

नैनागिरि—सेन्ट्रल रेलवे के सागर स्टेशन से ३० मील। सागर से मोटर दलपतपुर जाती है, वहाँ से ७ मील है। यहाँ से वरदत्तादि मुनि मोक्ष गये हैं।

कुण्डलपुर—सेन्ट्रल रेलवे की कटनी-बीना लाइन पर दमोह स्टेशन से २३ मील। यहाँ पर भगवान महावीर स्वामी की मनोज्ञ मूर्ति है, जिसके माहात्म्य के सम्बन्ध में अनेक किंवदन्तियाँ हैं। कुल ५६ मन्दिर हैं।

मुक्तागिरि—मध्यप्रान्त के एलिचपुर स्टेशन से १२ मील पर पहाड़ी जंगल में है। यहाँ से साढ़े तीन करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं।

रामटेक—स्टेशन से तीन मील की दूरी पर धर्मशाला है। दस बडे-बड़े मन्दिर हैं। इनमे १ मन्दिर मे एक प्रतिमा १४ फुट की दर्शनीय है।

[मध्य भारत - मालवा]

मक्सी-पार्श्वनाथ—सेन्ट्रल रेलवे की भोपाल-उज्जैन शाखा मे इस नाम का स्टेशन है। यहाँ से १ मील पर एक प्राचीन जैन मन्दिर है। उसमे पार्श्वनाथ की बड़ी मनोज्ञ प्रतिमा है।

सिद्धवरकूट—इन्दौर से खण्डवा लाईन पर ओंकारेश्वर स्टेशन से होते हुए अथवा सनावद से ६ मील पर है। यहाँ २ चक्रवर्ती, १० कामदेव एव साढे तीन करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं।

बड़वानी—बड़वानी स्टेशन से ५ मील पर चूलगिरि पहाड है, जिसकी तलहटी में बावनगजा (कुम्भकर्ण) की प्रसिद्ध खड्गासन प्रतिमा है। पौष मे यहाँ मेला लगता है। यहाँ से इन्द्रजीत और कुम्भकर्ण आदि मुनि मोक्ष गये हैं।

ऊन—यह प्राचीन क्षेत्र पावागिरि के नाम से प्रसिद्ध हुआ है। यहाँ पर बहुत से मन्दिर और मूर्तियाँ जमीन से निकली हैं तथा दर्शन करने योग्य हैं।

[राजस्थान प्रान्त]

श्रीमहावीरजी—पश्चिम रेलवे की नागदा-मथुरा लाईन पर श्री महावीरजी स्टेशन है, यहाँ से ४ मील पर क्षेत्र है। भगवान महावीर स्वामी की अति मनोज्ञ प्रतिमा पास के ही एक टीले के अन्दर से निकली थी।

पद्मपुरी—स्टेशन शिवदासपुरा। भगवान पद्मप्रभु की अतिशयपूर्ण, भव्य और मनोज्ञ प्रतिमा के अतिशय के कारण इस क्षेत्र का नाम पद्मपुरी पड़ा है।

केशरियानाथ—उदयपुर स्टेशन से ४० मील पर। यहाँ ऋषभदेव स्वामी का बहुत विशाल मन्दिर है। यहाँ भारत के सभी तीर्थों से अधिक केशर भगवान को चढ़ती है, इसी से इसका नाम केशरियानाथ पड़ा है।

तिजारा—अलवर एव दिल्ली से बस द्वारा। चन्द्रप्रभु भगवान की अतिशय युक्त मूर्ति दर्शनीय है।

[बम्बई प्रदेश]

तारंगा—स्टेशन तारगा-हिल से ३ मील दूर पहाड़ पर यह क्षेत्र है। यहाँ से वरदत्तादि साढ़े तीन करोड़ मुनि मोक्ष गये हैं।

गिरनार—काठियावाड मे जूनागढ़ स्टेशन से ४-५ मील की दूरी पर गिरनार पर्वत की तलहटी है। पहाड पर ७००० सीढ़ियो की चढ़ाई है। यहाँ स नेमिनाथ स्वामी तथा ७२ करोड सात सौ मुनि मोक्ष गये हैं।

शत्रुञ्जय—पालिताना स्टेशन से २ मील पर है। यहाँ न युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन तथा ८ करोड मुनि मोक्ष गये हैं।

पावागढ—वडोदा से २८ मील की दूरी पर यह क्षेत्र है। यहाँ स ल्व, कुश आदि पाँच करोड मुनि मोक्ष गये हैं।

मागीतुंगी—मनमाड स्टेशन से ७० मील पर घन जगल मे पहाड पर यह क्षेत्र है। यहाँ से रामचन्द्र, सुग्रीव, गवय गवाक्ष, नील आदि ९९ करोड मुनि मोक्ष गये है।

गजपन्था—नासिक रोड स्टेशन से ६ मील नसरुन ग्राम के पास। यहाँ से वलभद्र आदि आठ करोड मुनि मोक्ष गये हैं।

कुन्थलगिरि—वार्सी टाऊन रेलवे स्टेशन से २१ मीन दूरी पर। यहाँ से देशभूषण, कुलभूषण मुनि मोक्ष गये हैं।

[मैसूर प्रान्त]

मूडवद्री—कारकल से दस मील पर यह एक अच्छा कस्वा है। यहाँ १८ मन्दिर है। यहाँ के मन्दिरो मे हीरा, पन्ना, पुखराज, मूँगा, नीलम की मूर्तियाँ हैं।

जैनवद्री—(**श्रवणवेलगोला**) हसन जिले के अन्तर्गत यह क्षेत्र है। हसन से मोटर जाती है। श्रवणवेलगोला मे चन्द्रगिरि और विन्ध्यगिरि नाम की दो पहाडिया पास-पास हैं। पहाड पर ५७ फीट ऊँची वाहुवली की मनोज्ञ प्रतिमा है। १२ वर्ष वाद महामस्तकाभिषेक होता है।

वैणूर—गोम्मट स्वामी की ६० फीट ऊँची एक प्रतिमा है तथा अन्य हजारो मनोज्ञ मूर्तियाँ यहाँ पर हैं—मन्दिर दर्शनीय हैं।

हडवेरी—यहाँ एक मन्दिर पूरा कसौटी पत्थर का वना हुआ है।

कारकल—यहाँ प्राचीन और मनोज्ञ १२ मन्दिर लाखो रुपयो की लागत से बने है। पर्वत पर श्री वाहुबली स्वामी की विशाल मूर्ति कायोत्सर्ग अवस्था मे देखने योग्य है।

वारंग—यहाँ एक मन्दिर तालाव के मध्य भाग में है। किश्ती मे बैठ कर जाने से दर्शन होते है।

वन्दना

रचयिता — स्व० कवि भगवत् जैन, एत्मादपुर (आगरा)

शिवपुर पथ परिचायक जय हे, सन्मति युग निर्माता।
गङ्गा कल-कल स्वर में गाती, तव गुण गौरव गाथा।
सुर नर किन्नर तव पद युग में, नित नत करते माथा॥
हम भी तव यश गाते, सादर शीश झुकाते।
हे सद् बुद्धि प्रदाता॥
दुःख हारक सुख दायक जय हे, सन्मति युग निर्माता।
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे॥
सन्मति युग निर्माता॥१॥

मंगल कारक दया प्रचारक, खग पशु नर उपकारी।
भविजन तारक कर्म विदारक, सब जग तव आभारी॥
जब तक रवि शशि तारे, तब तक गीत तुम्हारे।
विश्व रहेगा गाथा॥
चिर सुख शान्ति विधायक जय हे, सन्मति युग निर्माता।
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे॥
सन्मति युग निर्माता॥२॥

भ्रातृ भावना भुला परस्पर, लड़ते हैं जो प्राणी।
उनके उर में विश्व प्रेम, फिर भरे तुम्हारी वाणी॥
सब में करुणा जागे, जग से हिंसा भागे।
पायें सब सुख साता॥
हे दुर्जय दुख दायक जय हे, सन्मति युग निर्माता।
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे॥
सन्मति युग निर्माता॥३॥

आवश्यक नियम

इनके पालन से आत्म-कल्याण के साथ-साथ
जीवनचर्या मे भी उत्थान होता है।

(१) प्रतिदिन देव-पूजन, शास्त्र-स्वाध्याय व गुरु-भक्ति करें।

(२) रात्रि भोजन व अभक्ष्य पदार्थों का भक्षण नही करें।

(३) २४ घण्टे मे कम से कम १५ मिनिट स्व-चिन्तन करें।

(४) चिन्तन द्वारा दिन भर मे हुई गलतियो का पश्चाताप करें।

(५) चमडे की वस्तुओ का प्रयोग न करें।

(६) अफीम, भाग, तम्बाखू आदि मादक द्रव्यो का प्रयोग न करें।

(७) अनैतिक कार्य न करे व हित-मित-प्रिय वचन बोले।

(८) नगदी, सोना, चाँदी, जायदाद आदि की मर्यादा निश्चित करें।

(९) विकथाओ (स्त्री, राज्य, चोरी, भोजन) मे अपना समय नष्ट नही करे।

(१०) अपनी आय का कम से कम १/१० हिस्सा दान के कार्यों मे लगाये।

(११) अष्टमी, चतुर्दशी या महीने मे कम से कम १ उपवास या एकाशन करें।

(१२) आहार के लिये हरी सब्जी, अनाज, फल आदि की गिनती कर नियम ले लें।

पदार्थों की मर्यादा

नाम	शीत	ग्रीष्म	वर्षा
बूरा (घर में बनाया)	१ माह	१५ दिन	७ दिन
दूध (दुहने के पश्चात)	४८ मि०	४८ मि०	४८ मि०
दूध (उबालने के बाद)	२४ घण्टे	२४ घण्टे	२४ घण्टे
दही (गर्म दूध का)	२४ घण्टे	२४ घण्टे	२४ घण्टे
छाछ	४८ मि०	४८ मि०	४८ मि०
घी, तेल व गुड़ — जब तक स्वाद न बिगड़े			
आटा (सब तरह का)	७ दिन	५ दिन	३ दिन
(पिसे हुए) मसाले	७ दिन	५ दिन	३ दिन
नमक (पिसा हुआ)	४८ मि०	४८ मि०	४८ मि०
नमक (मसाला मिला देने पर)	६ घण्टे	६ घण्टे	६ घण्टे
खिचड़ी, रायता, कढ़ी, तरकारी	६ घण्टे	६ घण्टे	६ घण्टे
रोटी, पूड़ी, हलवा (जलवाले पदार्थ)	१२ घण्टे	१२ घण्टे	१२ घण्टे
मोन मिले पदार्थ	२४ घण्टे	२४ घण्टे	२४ घण्टे
पकवान (पानी रहित)	७ दिन	५ दिन	३ दिन
दही (मीठे पदार्थ सहित)	४८ मि०	४८ मि०	४८ मि०

गुड़ मिला दही या छाछ सर्वथा अभक्ष्य है।

बारह भावना

अनित्य भावना — राजा राणा छत्रपति हाथिन के असवार।
मरना सबको एक दिन अपनी-अपनी बार॥१॥

अशरण भावना — दल बल देवी देवता मात-पिता परिवार।
मरती बिरियां जीव को कोई न राखनहार॥२॥

संसार भावना — दाम बिना निर्धन दुखी तृष्णा वश धनवान।
कहूँ न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान॥३॥

एकत्व भावना — आप अकेला अवतरै, मरै अकेला होय।
यूं कबहूं इस जीव को साथी सगा न कोय॥४॥

अन्यत्व भावना — जहाँ देह अपनी नहीं तहाँ न अपना कोय
घर सम्पत्ति पर प्रगट ये पर हैं परिजन लोय॥५॥

अशुचि भावना — दिपै चाम-चादर मढ़ी हाड़-पिंजरा देह।
भीतर या सम जगत् में और नहीं घिन गेह॥६॥

आस्रव भावना — मोह नींद के जोर जगवासी घूमैं सदा।
कर्म चोर चहुँ ओर सरवस लूटैं सुध नहीं॥७॥

संवर भावना — सतगुरु देय जगाय मोह नींद जब उपशमै।
तब कछु बनहिं उपाय कर्म चोर आवत रुकैं॥८॥

निर्जरा भावना — ज्ञान दीप तप तेल भर घर शोधैं भ्रम छोर।
या विधि बिन निकसैं नहीं पैठे पूरब चोर॥
पञ्च महाव्रत संचरण समिति पञ्च परकार।
प्रबल पञ्च इन्द्रिय विजय धार निर्जरा सार॥९॥

लोक भावना — चौदह राजु उतंग नभ लोक पुरुष संठान।
तामें जीव अनादि तैं भरमत हैं बिन ज्ञान॥१०॥

बोधिदुर्लभ भावना— धनकनकञ्चन राज सुख, सबहि सुलभ करि जान।
दुर्लभ है संसार में, एक जथारथ ज्ञान ॥११॥

धर्म भावना —जाचे सुरतरु देय सुख, चिन्तन चिन्ता रैन।
विन जाचे विन चिन्तये, धर्म सकल सुख दैन ॥१२॥



संक्षिप्त सूतकविधि।

सूतकमें देव शास्त्र गुरुका पूजन प्रक्षालादिक करना, तथा मंदिरजीकी जाजम वस्त्रादिको स्पर्श नहीं करना चाहिये। सूतक का समय पूर्ण हुये बाद पूजनादि करके पात्रदानादि करना चाहिये।

१—जन्मका सूतक दश दिन तक माना जाता है।

२—यदि स्त्रीका गर्भपात (पांचवें छठे महीनेमें) हो तो जितने महीनेका गर्भपात हो उतने दिनका सूतक माना जाता है।

३—प्रसूति स्त्रीको ४५ दिनका सूतक होता है, कहीं कहीं चालीस दिनका भी माना जाता है। प्रसूतिस्थान एक मास तक अशुद्ध है

४—रजस्वला स्त्री चौथे दिन पतिके भोजनादिकके लिये शुद्ध होती है परन्तु देव पूजन, पात्रदानके लिये पांचवें दिन शुद्ध होती है। व्यभिचारिणी स्त्रीके सदा ही सूतक रहता है।

५ मृत्युका सूतक तीन पीढी तक १२ दिनका माना जाता है। चौथी पीढीमें छह दिनका, पांचवीं छठी पीढी तक चार दिनका, सातवीं पीढीमें तीन, आठवीं पीढीमें एक दिन रात, नवमी पीढी में स्नानमात्रमें शुद्धता हो जाती है।

६—जन्म तथा मृत्युका सूतक गोत्रके मनुष्यको पांच दिनका होता है। तीन दिनके बालककी मृत्युका एक दिनका आठ वर्षके बालककी मृत्युका तीन दिन तकका माना जाता है। इसके आगे बारह दिनका।

७—अपने कुलके किसी गृहत्यागीका सन्यास मरण, वा किसी कुटुम्बीका संग्राममें मरण हो जाय तो एकदिनका सूतक माना जाता है।

८—यदि अपने कुलका कोई देशांतरमें मरण करै और १२ दिन पहले खबर सुने तो शेष दिनोंका ही सूतक मानना चाहिये। यदि १२ दिन पूर्ण हो गये हों तो स्नानमात्र सूतक जानो।

९—गौ, भैंस, घोडी आदि पशु अपने घरमें जनै तो एक दिनका सूतक और घरके बाहर जनै तो सूतक नहीं होता। दासी दास तथा पुत्रीके घरमें प्रसूति होय तो एक दिन, मरण हो तो तीन दिनका सूतक होता है। यदि घरसे बाहर हो तो सूतक नहीं। जो कोई अपनेको अग्नि आदिकमें जलाकर वा विष, शस्त्रादिसे आत्महत्या करै तो छह महीनेतकका सूतक होता है। इसी प्रकार और भी विचार है सो आदिपुराणसे जानना।

१०—बच्चा हुये बाद भैंसका दूध १५ दिन तक, गायका दूध १० दिन तक, बकरीका ८ दिन तक अभक्ष्य (अशुद्ध) होता है। देशभेदसे सूतक विधानमें कुछ न्यूनाधिक भी होता है परन्तु शास्त्रकी पद्धति मिलाकर ही सूतक मानना चाहिये। ॥समाप्त॥

* श्री जिनाय नम *



णमोकार मन्त्र

णमो अरिहन्ताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ १ ॥

दर्शन पाठ

दर्शनं देव देवस्य, दर्शनं पापनाशनं।
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनं ॥
दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वन्दनेन च।
न चिरं तिष्ठते पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम् ॥
वीतरागमुखं दृष्ट्वा, पद्मरागसमप्रभं।
अनेक जन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति ॥
दर्शनं जिन सूर्यस्य, संसारध्वान्तनाशनं।
बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थप्रकाशनं ॥
दर्शनं जिन चन्द्रस्य, सद्धर्मामृतवर्षणं।
जन्मदाहविनाशाय, वर्धनं सुखवारिधेः ॥

जीवादितत्वप्रतिपादकाय. सम्यक्त्वमुख्याष्टगुणार्णवाय ।
प्रशान्तरूपाय दिगम्बराय. देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥
चिदानन्दैकरूपाय जिनाय परमात्मने ।
परमात्मप्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ! ॥
नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्त्रये ।
वीतरागात्परो देवो.न भूतो न भविष्यति ॥
जिनेभक्तिर्जिनेभक्तिर्जिनेभक्तिर्दिनेदिने ।
सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु भवे-भवे ॥
जिनधर्मविनिर्मुक्तो, मा भवच्चक्रवर्त्यपि ।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि. जिनधर्मानुवासितः ॥
जन्मजन्मकृतपापं जन्मकोटिमिरर्जितं ।
जन्ममृत्युजरारोगं हन्यते जिनदर्शनात् ॥
अद्याभवत्सफलता नयनद्वयस्य,
देव । त्वदीयचरणाम्बुजवीक्षणेन ।
अद्य त्रिलोकतिलक प्रतिभाषते मे,
संसारवारिधिरयं चुलुकप्रमाणम् ॥

भाषा दर्शन पाठ

प्रभु पतितपावन मैं अपावन, चरण आयो शरणजी।
यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरणजी॥
तुम ना पिछान्यो आन मान्यो, देव विविध प्रकारजी।
या बुद्धि सेती निज न जान्यो, भ्रमगिन्यो हितकारजी॥
भव विकट वनमें करम वैरी, ज्ञान धन मेरो हरयो।
तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिरयो॥
धन घड़ी यो धन दिवस यो ही, धन जनम मेरो भयो।
अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभुको लख लयो॥
छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासापैं धरैं।
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुण जुत, कोटि रवि छविको हरैं॥
मिट गयो तिमिर-मिथ्यात मेरो, उदय रवि आतम भयो।
मो उर हरष ऐसो भयो, मनु रङ्क चिंतामणि लयो॥
हाथ जोड़ नवाय मस्तक, वीनऊँ तुव चरणजी।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारण तरणजी॥
जाचूँ नहीं सुरवास पुनि, नर राज परिजन साथजी।
बुध जाचहूँ तुव भक्ति भव-भव, दीजिये शिवनाथजी॥

पंच मंगल (अभिषेक) पाठ

पणविवि पञ्च परमगुरु गुरु जिन शासनो ।
सकलसिद्धिदातार सु विघनविनाशनो ॥
शारद अरु गुरु गौतम सुमति प्रकाशनो ।
मङ्गल कर चउ-संघहि पापपणासनो ॥ १ ॥

पापहिपणासन गुणहि गरुवा, दोष अष्टादश रहिउ ।
धरिध्यान करमविनाश केवल, ज्ञान अविचल जिन लहिउ ।
प्रभु पञ्च कल्याणक विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं ।
त्रैलोकनाथ सु देव जिनवर जगत मङ्गल गावहीं ॥ १ ॥

१–गर्भ कल्याणक

जाके गर्भ कल्याणक धनपति आइयो ।
अवधिज्ञान—परवान सु इन्द्र पठाइयो ॥
रचि नव बारह जोजन, नयरि सुहावनी ।
कनकरयणमणिमण्डित, मन्दिर अति बनी ॥ २ ॥

अति बनी पौरि पगारि परिखा, सुवन उपवन सोहये ।
नर-नारि सुन्दर चतुर भेष सु देख जनमन मोहये ॥
तहं जनकगृह छ मास प्रथमहिं, रतनधारा बरसियो ।
पुनि रुचिकवासिनि जननि-सेवा करहि सब विधि हरषियो ॥ २ ॥

सुरकुञ्जरसम कुञ्जर धवल धुरन्धरो ।
केहरि-केशरशोभित, नख शिख सुन्दरो ॥

कमलाकलश-न्हवन, दुइ दाम सुहावनी।
रविशशि मण्डल मधुर, मीन जुग पावनी ॥३॥

पावनि कनक घट जुगमपूरण कमलकलित सरोवरो।
कल्लोलमाला कुलित सागर सिंहपीठ मनोहरो॥
रमणीक अमर विमान फणपति-भुवन रविछवि छाजहीं।
रुचि रतनराशि दिपन्त दहन सु तेजपुञ्ज विराजहीं॥ ३॥

ये सखि सोलह सुपने सूती शयनहीं।
देखे माय मनोहर, पश्चिम रयनहीं॥
उठि प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकाशियो।
त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहं भासियो ॥४॥

भासियो फल तिहि चिन्ति दम्पति, परम आनन्दित भये।
छ मास परि नव मास पुनि तहं रैन दिन सुखसों गये॥
गर्भावतार महन्त महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गावहीं॥ ४॥

२-जन्म कल्याणक

मतिश्रुत अवधि विराजित, जिन जब जनमियो।
तिहुँ लोक भयो छोभित, सुरगन भरमियो॥
कल्पवासि-घर घण्ट, अनाहद बज्जियो।
ज्योतिष घर हरिनाद, सहज गल गज्जियो ॥५॥

गज्जियो सहजहि सख भावन, भवन शब्द सुहावने।
विन्तरनिलय पटु पटह वजहि, कहत महिमा क्यों बने ॥
कम्पित सुरासन अवधिबल, जिन-जनम निहचें जानियो।
धनराज तब गजराज मायामयी निरमय आनियो ॥ ५ ॥

जोजन लाख गयन्द, वदन सौ निरमये।
वदन वदन वसुदन्त, दन्त सर संठये ॥
सर-सरसौ पनवीस, कमलिनी छाजहीं।
कमलिनि-कमलिनि, कमल पच्चीस विराजहीं ॥६॥

राजही कमलिनी कमल्ऽठोतर सौ मनोहर दल बने।
दल दलहिं अपछर नटहिं नवरस, हाव भाव सुहावने ॥
मणि कनक किंकणि वर विचित्र सु अमरमण्डप सोहये।
घन घण्ट चँवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहये ॥ ६ ॥

तिहिं करि हरि चढ़ि आयउ सुर परिवारियो।
पुरहि प्रदच्छिण दे त्रय, जिन जयकारियो ॥
गुप्त जाय जिन-जननिहिं, सुखनिद्रा रची।
मायामयि शिशु राखि तौ, जिन आन्यो सची ॥७॥

आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपति न हूजिये।
तब परम हरषित हृदय हरि ने, सहस लोचन कीजिये ॥
पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इन्द्र, उछङ्ग धरि प्रभु लीनऊ।
ईशान इन्द्र सु चन्द्र छवि, शिर छत्र प्रभु के दीनऊ ॥ ७ ॥

सनतकुमार माहेन्द्र चमर दुई ढारहीं।
शेष शक्र जयकार, शबद उच्चारहीं ॥

उच्छवसहित चतुरविधि, सुर हरषित भये ।
जोजन सहस निन्यानवै, गगन उलंघि गये ॥८॥
लंघि गये सुरगिरि जहा पाण्डुक, वन विचित्र विराजहीं ।
पाण्डुक-शिला तह अर्द्धचन्द्र समान, मणि छवि छाजहीं ॥
जोजन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊँचों गनी ।
वर अष्ट-मङ्गल कनक कलशनि, सिंहपीठ सुहावनी ॥ ८ ॥
रचि मणिमण्डप शोभित, मध्य सिंहासनो ।
थाप्यो पूरव-मुख तहँ, प्रभु कमलासनो ॥
बाजहिं ताल मृदङ्ग, वेणु वीणा घने ।
दुन्दुभि प्रमुख मधुर धुनि, अवर जु बाजने ॥९॥
बाजने बाजहिं शची सब मिलि, धवल मङ्गल गावही ।
पुनि करहिं नृत्य सुराङ्गना सब, देव कौतुक धावहीं ॥
भरि क्षीर-सागर जल जु हाथहिं, हाथ सुरगिरि ल्यावहीं ।
सौधर्म अरु ईशान इन्द्र सु कलश ले प्रभु न्हावहीं ॥ ९ ॥
वदन उदर अवगाह, कलशगत जानिये ।
एक चार वसु योजन, मान प्रमानिये ॥
सहस-अठोतर कलशा, प्रभु के शिर ढरै ।
पुनि श्रृङ्गार प्रमुख, आचार सबै करै ॥१०॥
करि प्रगट प्रभु महिमा महोच्छव, आनि पुनि मातहिं दयो ।
धनपतिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गयो ॥
जनमाभिषेक महन्त महिमा, सुनत सब सुख पावहीं ।
भणि 'रूपचन्द्र' सुदेव जिनवर, जगत मङ्गल गावहीं ॥१०॥

लघु-अभिषेकपाठः

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं
स्याद्वाद-नायक-मनन्त-चतुष्टयार्हम् ।
श्रीमूलसंघ-सुदृशां सुकृतैकहेतु-
र्जैनेन्द्र-यज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥ १ ॥

[श्लोकमिमं पठित्वा जिनचरणाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्]

श्रीमन्मन्दर-सुन्दरे शुचिजलैर्धौतैः सदर्भाक्षतैः
पीठे मुक्तिवरं निधाय रचितं त्वत्पाद-पद्मस्रजः ।
इन्द्रोऽहं निज-भूषणार्थकमिदं यज्ञोपवीतं दधे
मुद्रा-कङ्कण-शेखराण्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे ॥२॥

[इति पठित्वा यज्ञोपवीत-धारणम् ।]

सौगन्ध्य-संगत-मधुव्रत-झङ्कृतेन
संवर्ण्यमानमिव गन्धमनिन्द्यमादौ ।
आरोपयामि विबुधेश्वर-वृन्द-वन्द्य-
पादारविन्दमभिवन्द्य जिनोत्तमानाम् ॥३॥

[इति पठित्वा नवस्थानेषु तिलककरणम्]

ये सन्ति केचिदिह दिव्य-कुल-प्रसूता
नागाः प्रभूत-बल-दर्पयुता विबोधाः ।
संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां
प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम् ॥४॥

[इति पठित्वा नागसन्तर्पणं भूमिशोधनं च]

क्षीरार्णवस्य पयसा शुचिभिः प्रवाहैः
प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेकवारम् ।
अत्युद्घमुद्यतमहं जिनपादपीठं
प्रक्षालयामि भव-संभव-तापहारि ॥ ५ ॥

[इति पठित्वा पीठप्रक्षालनम्]

श्रीशारदा-सुमुख-निर्गत-बीजवर्णं
श्रीमङ्गलीक-वर-सर्वजनस्य नित्यम् ।
श्रीमत्स्वयं क्षयति तस्य विनाशविघ्नं
श्रीकार-वर्ण-लिखितं जिन-भद्रपीठे (१)॥६॥

[इति पठित्वा पीठे श्रीकारलेखनम्]

इन्द्राग्नि-दण्डधर-नैऋत-पाशपाणि-
वायूत्तरेश-शशिमौलि-फणीन्द्र-चन्द्राः ।
आगत्य यूयमिह सानुचराः सचिह्नाः
स्वं स्वं प्रतीच्छत बलि जिनपाभिषेके ॥७॥

[पुरोलिखितान्मन्त्रानुच्चार्य क्रमशो दशदिक्पालकेभ्योऽर्घ्यसमर्पणम्]

१ ॐ आं क्रौं ह्रीं इन्द्र आगच्छ आगच्छ इन्द्राय स्वाहा ।
२ ॐ आं क्रौं ह्रीं अग्ने आगच्छ आगच्छ अग्नये स्वाहा ।
३ ॐ आं क्रौं ह्रीं यम आगच्छ आगच्छ यमाय स्वाहा ।
४ ॐ आं क्रौं ह्रीं नैऋत आगच्छ आगच्छ नैऋताय स्वाहा ।
५ ॐ आं क्रौं ह्रीं वरुण आगच्छ आगच्छ वरुणाय स्वाहा ।
६ ॐ आं क्रौं ह्रीं पवन आगच्छ आगच्छ पवनाय स्वाहा ।

७ ॐ आं क्रौं ह्रीं कुबेर आगच्छ आगच्छ कुबेराय स्वाहा ।
८ ॐ आं क्रौं ह्रीं ऐशान आगच्छ आगच्छ ऐशानाय स्वाहा ।
९ ॐ आं क्रौं ह्रीं धरणीन्द्र आगच्छ आ० धरणीन्द्राय स्वाहा ।
१० ॐ आं क्रौं ह्रीं सोम आगच्छ आगच्छ सोमाय स्वाहा ।

इति दिक्पालमन्त्राः

दध्युज्ज्वलाक्षत-मनोहर-पुष्प-दीपैः
पात्रार्पितं प्रतिदिनं महतादरेण ।
त्रैलोक्य-मङ्गल-सुखालय-कामदाह-
मारार्तिकं तव विभोरवतारयामि ॥८॥

[पात्रार्पितैर्दधितण्डुलपुष्पदीपैर्जिनस्यारार्तिकावतरणम्]

यं पाण्डुकामल-शिलागतमादिदेव-
मस्नापयन्सुरवराः सुरशैलमूर्ध्नि ।
कल्याणमीप्सुरहमक्षत-तोय-पुष्पैः
संभावयामि पुर एव तदीय-बिम्बम् ॥९॥

[जलाक्षतपुष्पाणि निक्षिप्य श्रीवर्णे प्रतिमास्थापनम्]

सत्पल्लवार्चित-मुखान्कलधौतरौप्य-
ताम्रारकूट-घटितान्पयसा सुपूर्णान् ।
संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान्
संस्थापयामि कलशाञ्जिनवेदिकान्ते ॥१०॥

[आम्रादिपल्लवशोभितमुखांश्चतुःकलशान् पीठचतुःकोणेषु स्थापयेत्]

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमल-बहुलेनामुना चन्दनेन
श्रीदृक्पेयैरमीभिः शुचि-सदकचयैरुद्गमैरेभिरुद्धैः ।
हृद्यैरेभिर्निवेद्यैर्मख-भवनमिमैर्दीपयद्भिः प्रदीपैः
धूपैः प्रायोभिरेभिः पृथुभिरपि फलैरेभिरीशं यजामि ॥११॥

[ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।]

दूरावनम्र-सुरनाथ-किरीट-कोटी-
संलग्न-रत्न-किरण-च्छवि-धूसराङ्घ्रिम् ।
प्रस्वेद-ताप-मल-मुक्तमपि प्रकृष्टै-
र्भक्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाऽभिषिञ्चे ॥१२॥

[ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालसन्तं वृषभादिमहावीर-पर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करपरमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे ... नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे मासे ... ...मासे ... पक्षे ... शुभदिने मुन्यार्यिका-श्रावक-श्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं जलेनाभिषिञ्चे नम ।]

[इति पठित्वा जिनस्य जलाभिषेक कृत्वा उदकचन्दनेति श्लोकं पठित्वा अर्घ्यं समर्पयेत्]

उत्कृष्ट-वर्ण-नव-हेम-रसाभिराम-
देह-प्रभा-वलय-संगम-लुप्त-दीप्तिम् ।
धारां घृतस्य शुभ-गन्ध-गुणानुमेयां
वन्देऽर्हतां सुरभि-संस्नपनोपयुक्ताम् ॥१३॥

[ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्त इत्यादिमन्त्रं पठित्वा घृतेनाभिषिञ्चे इति पठित्वा घृताभिषेकं कुर्यात् ।]

संपूर्ण-शारद-शशाङ्क-मरीचि-जाल-
स्यन्देरिवात्मयशसामिव सुप्रवाहैः।
क्षीरैर्जिनाः शुचितरैरभिषिच्यमानाः
संपादयन्तु मम चिर-समीहितानि ॥१४॥

[उपरितन मन्त्र पठित्वा जलेनाभिषिञ्चे इत्यस्मिन्स्थाने क्षीरेणाभिषिञ्चे इत्युच्चार्य क्षीराभिषेक कुर्यात् ।]

दुग्धाब्धि-वीचि-पयसाञ्चित-फेनराशि-
पाण्डुत्व-कान्तिमवधीरयतामतीव ।
दध्नां गता जिनपतेः प्रतिमा सुधारा
संपद्यतां सपदि वाञ्छित-सिद्धये नः ॥१५॥

[उपरितन मन्त्र पठित्वा जलेनाभिषिञ्चे इत्यस्मिन्स्थाने दध्नाभिषिञ्चे इति पठित्वा दध्यभिषेक कुर्यात् ।]

भक्त्या ललाट-तटदेश-निवेशितोच्चै-
र्हस्तैश्च्युता सुरवरासुर-मर्त्यनाथैः ।
तत्काल-पीलित-महेक्षु-रसस्य धारा
सद्यः पुनातु जिन-बिम्ब-गतैव युष्मान् ॥१६॥

[उपरितन मन्त्र पठित्वा जलेनाभिषिञ्चे इत्यस्मिन्स्थाने इक्षुरसेनाभिषिञ्चे इति पठित्वा इक्षुरसाभिषेक कुर्यात् ।]

संस्नापितस्य घृत-दुग्ध-दधीक्षुवाहैः
सर्वाभिरौषधिभिरर्हत उज्ज्वलाभिः ।
उद्वर्तितस्य विदधाम्यभिषेकमेला-
कालेय-कुंकुम-रसोत्कट-वारि-पूरैः ॥१७॥

[उपरितनमन्त्रमुच्चार्य जलेनाभिषिञ्चे इत्यस्मिन्स्थाने सर्वौषधिभि-
रभिषिञ्चे इति पठित्वा सर्वौषधिभिरभिषेकं कुर्यात् ।]

द्रव्यैरनल्प-घनसार-चतुःसमाद्यै-
रामोद-वासित-समस्त-दिगन्तरालैः ।
मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुङ्गवानां
त्रैलोक्य-पावनमहं स्नपनं करोमि ॥१८॥

[जलेनाभिषिञ्चे इति स्थाने सुगन्धजलेनेति पठित्वा स्नपन कुर्यात्]

इष्टैर्मनोरथ-शतैरिव भव्यपुंसां
पूर्णैः सुवर्ण-कलशैर्निखिलैर्वसानैः ।
संसार-सागर-विलंघन-हेतु-सेतु-
माप्लावये त्रिभुवनैकपतिं जिनेन्द्रम् ॥१९॥

[उपरितनमन्त्रेणैव समस्तकलशैरभिषेक कुर्यात्]

मुक्ति-श्री-वनिता-करोदकमिदं पुण्याङ्कुरोत्पादकं
नागेन्द्र-त्रिदशेन्द्र-चक्र-पदवी-राज्याभिषेकोदकम् ।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-दर्शनलता-संवृद्धि-संपादकं
कीर्ति-श्री-जय-साधकं तव जिन स्नानस्य गन्धोदकम् ॥२०॥

[श्लोकमिमं पठित्वा गन्धोदक गृह्णीयात्]

इति श्रीलघ्वभिषेकविधि समाप्त ।

विनय पाठ दोहावली

इह विधि ठाड़ो होयके, प्रथम पढ़ै जो पाठ ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ ॥ १ ॥
अनन्त चतुष्टयके धनी, तुम ही हो सिरताज ।
मुक्ति वधूके कन्त तुम, तीन भुवन के राज ॥ २ ॥
तिहुँ जगकी पीड़ा हरण, भवदधि शोषणहार ।
ज्ञायक हो तुम विश्वके, शिव सुखके करतार ॥ ३ ॥
हरता अघ अंधियार के, करता धर्म प्रकाश ।
थिरतापद दातार हो, धरता निजगुण राश ॥ ४ ॥
धर्मामृत उर जलधिसों, ज्ञानभानु तुम रूप ।
तुमरे चरण सरोज को, नावत तिहुँजग भूप ॥ ५ ॥
मैं वन्दौं जिनदेव को, कर अति निर्मल भाव ।
कर्मबन्ध के छेदने, और न कछू उपाव ॥ ६ ॥
भविजनकों भवकूपतैं, तुमही काढनहार ।
दीनदयाल अनाथपति, आतम गुण भण्डार ॥ ७ ॥
चिदानन्द निर्मल कियो, धोय कर्मरज मैल ।
सरल करी या जगत में, भविजनको शिवगैल ॥ ८ ॥

तुम पदपङ्कज पूजतैं, विघ्न रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरें, विष निरविषता थाय ॥ ९ ॥
चक्री खगधर इन्द्र पद, मिलैं आपतैं आप।
अनुक्रम तें शिवपद लहैं, नेम सकलहनि पाप ॥१०॥
तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन।
जन्म जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन ॥११॥
पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव।
अञ्जन से तारे प्रभू, जय जय जय जिनदेव ॥१२॥
थकी नाव भवदधि विषैं, तुम प्रभु पार करेव।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव ॥१३॥
रागसहित जगमें रुल्यो, मिले सरागी देव।
वीतराग भेट्यो अबै, मेटो राग कुटेव ॥१४॥
कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यञ्च अज्ञान।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान ॥१५॥
तुमको पूजैं सुरपति, अहिपति नरपति देव।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव ॥१६॥
अशरणके तुम शरण हो, निराधार आधार।
मैं डूबत भवसिन्धु में, खेय लगाओ पार ॥१७॥

इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान।
अपनो विरद निहारिकैं, कीजै आप समान ॥१८॥
तुमरी नेक सुदृष्टितैं, जग उतरत है पार।
हाहा डूब्यो जात हौं, नेक निहार निकार ॥१९॥
जो मैं कहहूँ औरसौं, तो न मिटै उरझार।
मेरी तो तोसौं बनी, तातैं करौं पुकार ॥२०॥
वन्दौं पांचो परमगुरु, सुर गुरु वन्दत जास।
विघन हरण मङ्गल करण, पूरण परम प्रकाश ॥२१॥
चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय।
शिवमग साधक साधु नमि, रच्यो पाठ सुखदाय ॥२२॥

पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्।

श्री शान्तिनाथ स्तुति

मत्तगयन्द (सवैया)

शांतिजिनेश जयौ जगतेश, हरै अघताप निशेशकी नाई।
सेवत पाय सुरासुरराय, नमैं शिरनाय महीतलताई ॥
मौलि लगे मनिनील दिपे, प्रभुके चरणौ झलके वह झांई।
सूघन पाय-सरोज-सुगन्धिकिधौं चलि ये अलिपङ्कति आई ॥

पूजा प्रारम्भ

ॐ जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ।
णमो अरिहन्ताणं. णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं. णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः (पुष्पांजलि क्षिपेत्)

चत्तारि मङ्गलं—अरिहन्ता मङ्गलं, सिद्धा मङ्गलं,
साहू मङ्गलं केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं ।
चत्तारि लोगुत्तमा—अरिहन्तालोगुत्तमा, सिद्धालोगुत्तमा,
साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मोलोगुत्तमा ।
चत्तारिसरणं पवज्जामि—अरिहन्ते सरणं पवज्जामि,
सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहूसरणं पवज्जामि ।
केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि ॥ ॐ नमोऽर्हते स्वाहा

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा ।
ध्यायेत्पंचनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥
अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥ २ ॥
अपराजित मन्त्रोऽयं सर्वविघ्न विनाशनः ।
मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मतः ॥ ३ ॥
एसो पञ्च णमोयारो सव्वपावप्पणासणो ।

मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होइ मंगलं ॥ ४ ॥

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ।

सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहं ॥ ५ ॥

कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनं ।

सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहं ॥ ६ ॥

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति शाकिनी-भूत-पन्नगाः ।

विषो निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥ ७ ॥

इत्याशीर्वाद पुष्पांजलि क्षिपेत ।

पंच कल्याणक अर्घ

उदकचन्दनतन्दुल पुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूप फलार्घकैः ।

धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं भगवान के गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाण पंच कल्याणकेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंच परमेष्ठी का अर्घ

उदकचन्दनतन्दुल पुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूप फलार्घकैः ।

धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिन इष्टमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं श्री अरहन्तसिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सहस्रनाम का अर्घ

उदकचन्दनतन्दुल पुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूप फलार्घकैः ।

धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाम अहं यजे ॥

ॐ ह्री श्री भगवज्जिनसहस्रनामेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

स्वस्ति मंगल

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं, स्याद्वादनाय-
कमनन्तचतुष्टयार्हं । श्रीमूलसंघ सुदृशां सुकृ-
तैक हेतुर्जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥१॥

स्वस्तित्रिलोकगुरवे जिनपुंगवाय.स्वस्ति स्वभाव-
महिमोदयसुस्थिताय । स्वस्ति प्रकाशसहजोर्जित-
दृङ्मयाय. स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥२॥

स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाप्लवाय, स्वस्ति स्व-
भावपरभावविभासकाय । स्वस्ति त्रिलोकविततैक-
चिदुद्गमाय,स्वस्ति त्रिकालसकलायतविस्तृताय ॥३॥

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धि-
मधिकामधिगन्तुकामः । आलम्बनानि विविधान्य-
वलम्ब्यवल्गन्, भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञं ॥४॥

अर्हत्पुराण पुरुषोत्तमपावनानि, वस्तून्यनून-
मखिलान्ययमेक एव । अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवल-
बोध वह्नौ, पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥५॥

ॐ ह्रीं विधियज्ञप्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे परिपुष्पांजलिं क्षिपेत ।

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः।
श्रीसम्भवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः॥
श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः।
श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः॥
श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः।
श्रीश्रेयांसः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः॥
श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनन्तः।
श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः॥
श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरहनाथः।
श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः॥
श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः।
श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः॥

इति जिनेन्द्र स्वस्तिमङ्गलविधानम्। (पुष्पाजलि क्षेपण)

नित्याप्रकंपाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनःपर्ययशुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्तिक्रियासुःपरमर्षयोनः॥

यहा से प्रत्येक श्लोक के अन्त में पुष्पाजलि क्षेपण करना चाहिये।

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं सम्भिन्नसंश्रोतृपदानुसारि ।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघ्राणविलोकनानि ।
दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः ।
प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

जङ्घावलिश्रेणिफलांबुतन्तु प्रसूनबीजांकुरचारणाह्वाः ।
नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि
मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः ।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः ।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

आमर्ष सर्वौषधयस्तथाशीर्विषं विषादृष्टि विषंविषाश्च ।
सखिल्ल विड्जल्लमलौषधीशाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः

क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो मधुस्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः ।
अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

इति स्वस्ति मङ्गल विधान ।

देव-शास्त्र-गुरु पूजा भाषा

अडिल्ल छन्द ।

प्रथम देव अरहन्त सुश्रुत सिद्धान्त जू ।
गुरु निरग्रन्थ महन्त मुकतिपुरपंथ जू ॥
तीन रतन जग माहिं सो ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ॥

दोहा—पूजों पद अरहन्त के, पूजों गुरुपद सार ।
पूजों देवी सरस्वती, नितप्रति अष्ट प्रकार ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर सवौषट आह्वानन ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

गीता छन्द ।

सुरपति उरगनरनाथ तिनकर, बंदनीक सुपदप्रभा ।
अति शोभनीक सुवरण उज्ज्वल, देखि छवि मोहित सभा ॥
वर नीर क्षीरसमुद्रघट भरि अग्र तसु बहुविधि नचूं ।
अरहंत श्रुतसिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूं ॥

दोहा—मलिन वस्तु हरलेत सब, जल स्वभाव मलछीन
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥१॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जे त्रिजग उदर मंझार प्राणी तपत अतिदुद्धर खरे।
तिन अहितहरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे॥
तसु भ्रमर लोभित घ्राणपावन सरसचंदन घसि सचूँ।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ॥

दोहा—चन्दन शीतलता करे, तपत वस्तु परवीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥२॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

यह भवसमुद्र अपार तारण, के निमित्त सुविधि ठई।
अति दृढ़ परमपावन जथारथ भक्ति वर नौका सही॥
उज्जल अखंडित सालि तंदुल पुञ्ज धरि त्रयगुण जचूँ।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ॥

दोहा—तंदुल सालि सुगन्ध अति, परम अखंडित बीन।
जासों पूजों परमपद देवशास्त्र गुरु तीन॥३॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

जे विनयवंत सुभव्य-उर-अम्बुजप्रकाशन भान हैं।
जे एक मुख चारित्र भाषत त्रिजगमाहिं प्रधान हैं॥
लहि कुंदकमलादिक पहुप, भव भव कुवेदनसों बचूँ।
अरहन्त श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ।

दोहा—विविध भाँति परिमलसुमन, भ्रमर जास आधीन।
जासों पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥४॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्य. कामवाणविध्वसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

अति सबल मदकंदर्प जाको क्षुधा-उरग अमान है।
दुस्सह भयानक तासु नाशनको सुगरुड़समान है॥
उत्तम छहों रसयुक्त नित, नैवेद्य करि घृतमें पचूँ।
अरहन्त श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ॥
दोहा—नानाविधि संयुक्तरस, व्यञ्जन सरस नवीन।
जासों पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥५॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्य क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जे त्रिजग-उद्यम नाश कीने, मोह-तिमिर महाबली।
तिहि कर्मघाती ज्ञानदीपप्रकाशजोति प्रभावली॥
इह भाँति दीप प्रजाल कंचन के सुभाजनमें खचूँ।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ॥
दोहा—स्वपर प्रकाशक जोति अति, दीपक तमकर हीन।
जासों पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥६॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै।
वर धूप तासु सुगन्धताकरि, सकलपरिमलता हँसै॥
इह भाँति धूप चढ़ाय नित भव-ज्वलनमांहि नहीं पचूँ।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ॥
दोहा—अग्निमाँहिं परिमलदहन, चंदनादि गुणलीन।
जासों पूजौं परमपद देव शास्त्र गुरु तीन।७॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

लोचन सुरसना घ्रान उर उत्साह के करतार हैं।
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फलगुणसार हैं।
सो फल चढ़ावत अर्थपूरन, परम अमृतरस सचूँ।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ॥
दोहा—जे प्रधान फल फलविषैं पंचकरण रस लीन।
जासों पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥८॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूँ।
वर धूप निरमल फल विविध, बहु जनमके पातक हरूँ।
इह भाँति अर्घ चढ़ाय नित भवि करत शिव-पंकति मचूँ।
अरहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ॥

दोहा—वसुविधि अर्घ संजोयकै, अति उछाह मन कीन।
जासों पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥९॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाला, दोहा

देव शास्त्र गुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार।
भिन्न भिन्न कहुँ आरती, अल्प सुगुणविस्तार ॥

पद्धरी छन्द।

चउ कर्मसु त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादश दोषराशि।
जे परम सुगुण हैं अनन्त धीर, कहवतके छयालिस गुण गंभीर ॥
शुभ समवशरण शोभा अपार, शतइन्द्र नमत कर शीस धार।
देवाधिदेव अरहंत देव, वन्दौं मन वच तन करि सु सेव ॥
जिनकी ध्वनि ह्वै ओंकाररूप, निरअक्षरमय महिमा अनूप।
दश-अष्ट महाभाषा समेत, लघुभाषा सात शतक सुचेत ॥
सो स्याद्वादमय सप्तभंग, गणधर गूंथे बारह सुअंग।
रवि शशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहु प्रीति ल्याय ॥
गुरु आचारज उवझाय साधु, तन नगन रतनत्रयनिधि अगाध।
संसार-देह वैराग धार, निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥
गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस, भवतारन तरन जिहाज ईश।
गुरु की महिमा वरनी न जाय, गुरु नाम जपों मन वचन काय ॥

सोरठा—कीजै शक्ति प्रमान, शक्ति विना सरधा धरै ।
'द्यानत' सरधावान, अजर अमरपद भोगवै ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—श्री जिनके परसाद तें, सुखी रहैं सब जीव ।
यातैं तन मन वचन तैं, सेवो भव्य सदीव ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

श्रीपार्श्वनाथ स्तुति

छप्पय (सिंहावलोकन)

जनम - जलधि - जलजान , जान जनहंस - मान सर ।
सरव इन्द्र मिलि आन, आन जिस धरहिं शीसपर ॥
परउपकारी बान, बान उत्थपइ कुनय गन ।
गनसरोजवर भान, भान मम मोह तिमिर घन ॥
घनवरन देह दुख-दाह हर, हरखत हेरि मयूर - मन ।
मनमथ-मतङ्ग-हरि पासजिन, जिन विसरहु छिन जगत जन ॥

श्री देव शास्त्र गुरु,
विदेह क्षेत्र विद्यमान बीस तीर्थङ्कर तथा
अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी पूजा

दोहा—देवशास्त्र गुरु नमनकरि, बीस तीर्थङ्कर ध्याय।
सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूं चित्त हुलसाय॥

ॐ ह्री श्री देवशास्त्रगुरु समूह। श्री विद्यमान विंशति तीर्थङ्कर समूह। श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठि समूह। अत्रावतरावतर सवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अष्टक

चाल—करले-करले तू नित प्राणी श्री जिन पूजन करले रे।

अनादिकाल से जग मे स्वामिन् जलसे शुचिता को माना।
शुद्धनिजातम सम्यक् रत्नत्रयनिधि को नहि पहिचाना॥
अब निर्मल रत्नत्रय जल ले देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्री श्रीदवशास्त्रगुरुभ्य, श्री विद्यमान विशति तीर्थङ्करेभ्य, श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यो, जन्ममृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

भव आताप मिटावन की निज मे ही क्षमता समता है।
अनजाने अबतक मैंने पर में की झूठी ममता है॥
चन्दन सम शीतलता पाने श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री वीस तीर्थङ्कर सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्य, श्री विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्य, श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यो, संसारतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अक्षय पदके बिना फिरा जगत की लख चौरासी योनि में।
अष्ट कर्म के नाश करन को अक्षत तुम ढिग लाया मैं॥
अक्षयनिधि निज की पाने अब देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्य, श्री विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्य, श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पुष्प सुगन्धी से आतम ने शील स्वभाव नशाया है।
मन्मथ वाणों से विध करके चहुँ गति दुःख उपजाया है॥
स्थिरता निजमे पाने को श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्य, श्री विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्य, श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यो कामवाणविध्वंसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

षट्रस मिश्रित भोजन से ये भूख न मेरी शान्त हुई।
आतम रस अनुपम चखने से इन्द्रिय मन इच्छा शमन हुई॥
सर्वथा भूख के मेटन को श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्य, श्री विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्य, श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यो, क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जड दीप विनश्वर को अबतक समझा था मैने उजियारा ।
निज गुण दरशायक ज्ञान दीपसे मिटा मोह का अंधियारा ॥
ये दीप समर्पित करके मै श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ ॥

ॐ ह्री श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्य, श्री विद्यमान विशति तीर्थङ्करेभ्य, श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यो, मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

ये धूप अनल मे खेने से कर्मों को नहीं जलायेगी ।
निज मे निज की शक्ती ज्वाला जो राग द्वेष नशायेगी ॥
उस शक्ति दहन प्रगटानेको श्री देव शास्त्र गुरुको ध्याऊँ ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ ॥

ॐ ह्री श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्य, श्री विद्यमान विशति तीर्थङ्करेभ्य, श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यो, अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

पिस्ता बदाम श्री फल लवग चरणन तुम ढिग मै ले आया ।
आतमरस भीने निजगुण फल मम मन अब उनमे ललचाया ॥
अब मोक्ष महा फल पानेको श्री देव शास्त्र गुरुको ध्याऊँ ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थङ्कर सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ ॥

ॐ ह्री श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्य, श्री विद्यमान विशति तीर्थङ्करेभ्य, श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यो, मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

अष्टम वसुधा पाने को कर में ये आठों द्रव्य लिये ।
सहज शुद्ध स्वाभाविकतासे निजमे निज गुण प्रकट किये ॥
ये अर्घ समर्पण करके मैं श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः, श्री विद्यमान विंशति तीर्थंकरेभ्यः, श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यो, अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

जयमाला

नसे घातिया कर्म अर्हन्त देवा, करें सुर असुर नर मुनि नित्य सेवा ।
दरश ज्ञान सुख बल अनन्तके स्वामी, छियालीस गुण युक्त महा ईश नामी ॥
तेरी दिव्य वाणी सदा भव्य मानी, महा मोह विध्वंसिनी मोक्ष दानी ।
अनेकान्तमय द्वादशांगी वखानी, नमो लोक माता श्री जैन वाणी ॥
विरागी अचारज उवज्झाय साधू, दरश ज्ञान भण्डार समता अराधू ।
नगन वेषधारी सुएका विहारी, निजानन्द मंडित मुकति पथ प्रचारी ॥
विदेह क्षेत्र में तीर्थङ्कर बीस राजे, विहरमान वन्दु सभी पाप भाजें ।
नमू सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी, अनाकुल समाधान सहजाभिरामी ॥

छन्द

देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थंकर सिद्ध हृदय बिच धरले रे ।
पूजन ध्यान गान गुण कर के भवसागर जिय तरले रे ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्य, श्री विद्यमान विंशति तीर्थंकरेभ्य, श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

भूत भविष्यत् वर्तमान की, तीस चौबीसी मैं ध्याऊँ।
चैत्य चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम, तीन लोक के मन लाऊँ॥

ॐ ह्री त्रिकाल सम्बन्धी तीस चौबीसी त्रिलोक सम्बन्धी कृत्रिमाकृत्रिम चैत्यालयेभ्यो अर्घं०

चैत्य भक्ति आलोचना चाहूँ कायोत्सर्ग अघनाशन हेत।
कृतिमाकृत्रिम तीन लोक मे राजत है जिनबिम्ब अनेक॥
चतुर निकाय के देव जजें ले अष्ट द्रव्य निज भक्ति समेत।
निज शक्ति अनुसार जजूं मैं कर समाधि पाऊँ शिव खेत॥

पुष्पाजलि क्षिपेत्।

पूर्व मध्य अपराह्न की वेला पूर्वाचार्यो के अनुसार।
देव बन्दना करूँ भाव से सकल कर्म की नाशन हार॥
पञ्च महा गुरु सुमिरन करके कायोत्सर्ग करूँ सुखकार।
सहज स्वभाव शुद्ध लख, अपना जाऊँगा अब मै भव पार॥

(कायोत्सर्ग पूर्वक ६ बार णमोकार मन्त्र जपें)

शोडष कारण भावना भाऊँ, दशलक्षण हिरदय धारूँ।
सम्यक् रत्नत्रय गहि करके अष्ट कर्म बन को जारूँ॥

ॐ ह्री षोडश कारण भावना दशलक्षण धर्म सम्यक् रत्नत्रयेभ्यो अर्घं०।

श्री कैलाशपुरी पावा चम्पा गिरिनार सम्मेद जजूँ।
तीरथ सिद्ध क्षेत्र अतिशय श्री चौबीसों जिनराज भजूँ॥

ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य तथा सिद्धक्षेत्रातिशयक्षेत्रेभ्यो अर्घ०।

देव-शास्त्र-गुरु-पूजा

युगलकिशोर जैन 'युगल' विरचित

* स्थापना *

केवल रवि-किरणोंसे जिसका सम्पूर्ण प्रकाशित है अन्तर।
उस श्री जिनवाणी में होता, तत्वों का सुन्दरतम दर्शन ॥
सद्दर्शन-बोध-चरण-पथ पर, अविरल जो बढ़ते हैं मुनिगण।
उन देव परम आगम गुरुको, शत-शत वन्दन शत-शत वंदन ॥

ॐ [illegible] आह्वानन ।
ॐ ह्रीं [illegible] स्थापन ।
ॐ ह्रीं [illegible] भव भव वषट् ।

इन्द्रिय के भोग मधुर विष सम, लावण्यमयी कञ्चन काया।
यह सब कुछ जड़की क्रीड़ा है, मैं अब तक जान नहीं पाया ॥
मैं भूल स्वयं के वैभव को, पर ममता में अटकाया हूं।
अब निर्मल सम्यक-नीर लिये, मिथ्या मल धोने आया हूं ॥

ॐ ह्रीं [illegible] निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जड़ चेतनकी सब परिणति प्रभु! अपने अपनेसें होती है।
अनुकूल कहें प्रतिकूल कहें, यह झूठी मन की वृत्ति है ॥
प्रतिकूल संयोगों में क्रोधित, होकर संसार बढ़ाया है।
सन्तप्त हृदय प्रभु! चंदन सम, शीतलता पाने आया है ॥

ॐ ह्रीं [illegible] चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

उज्ज्वल हूं कुन्द धवल हूँ प्रभु ! पर से न लगा हूं किंचित् भी।
फिर भी अनुकूल लगे उनपर, करता अभियान निरंतर ही॥
जड़ पर झुक झुक जाता चेतन, की मार्दवकी खंडित काया।
निज शाश्वतअक्षत-निधिपाने, अब दासचरणरजमें आया॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

यह पुष्प सुकोमल कितना है, तन में माया कुछ शेष नहीं।
निज अन्तरका प्रभु ! भेद कहूं, उसमें ऋजुता का लेश नहीं॥
चिंतन कुछ, फिर सम्भाषण कुछ,वृत्ति कुछ की कुछ होती है।
स्थिरता निज में प्रभु पाऊं जो, अन्तर का कालुष धोती है॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्य. कामवाणविध्वंसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

अबतक अगणित जड़ द्रव्योंसे, प्रभु ! भूख न मेरी शांत हुई।
तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त रही वह रिक्त रही॥
युग युग से इच्छा सागर में, प्रभु ! गोते खाता आया हूं।
पंचेन्द्रिय मन के षट्-रस तज, अनुपम रस पीने आया हूं॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्य क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जग के जड़ दीपक को अब तक, समझा था मैंने उजियारा।
झंझा के एक झकोरे में जो बनता घोर तिमिर कारा॥
अतएव प्रभो यह नश्वर दीप, समर्पण करने आया हूं।
तेरी अन्तर लौ, से निज अन्तर, दीप जलाने आया हूँ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

जड़ कर्म घुमाता है मुझको यह मिथ्या भ्रांति रही मेरी।
मैं रागीद्वेषी हो लेता, जब परिणति होती है जड़ की॥
यों भाव-करम या भाव-मरण, सदियों से करता आया हूँ।
निज अनुपम गंध अनल से प्रभु, पर-गंध जलाने आया हूँ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

जग में जिसको निज कहता मैं, वह छोड़ मुझे चल देता है।
मैं आकुल व्याकुल हो लेता, व्याकुलका फल व्याकुलता है॥
मैं शान्त निराकुल चेतन हूँ, है मुक्तिरमा सहचर मेरी।
यह मोह तड़प कर टूट पड़ें, प्रभु सार्थक फल पूजा तेरी ॥८॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

क्षण भर निजरसको पी चेतन, मिथ्या मलको धो देता है।
काषायिक भाव विनष्ट किये, निज आनंद अमृत पीता है॥
अनुपम सुख तब विलसित होता, केवल रवि जगमग करता है
दर्शन बल पूर्ण प्रगट होता, येही अर्हन्त अवस्था है॥
यह अर्घ समर्पण करके प्रभु, निजगुनका अर्घ बनाऊंगा।
और निश्चित तेरे सदृश प्रभु! अर्हन्त अवस्था पाऊंगा ॥९॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाला

भववनमें जीभर घूमचुका, कण-कणको जीभर-भर देखा।
मृग-सम-मृग-तृष्णाके पीछे,मुझको न मिली सुखकी रेखा॥
झूठे जग के सपने सारे, झूठी मन की सब आशायें।
तन-जीवन-यौवन अस्थिर है, क्षण भंगुर पलमें मुरझाए॥
सम्राट महाबल सेनानी, उस क्षण को टाल सकेगा क्या ?
अशरण मृत कायामें हर्षित,निज जीवन डाल सकेगाक्या॥
संसार महा दुख सागरके प्रभु दुख मय सुख-आभासों में।
मुझको न मिला सुख क्षणभर भी,कंचनकामिनि-प्रासादोंमें॥
मैं एकाकी एकत्व लिये, एकत्व लिये सब ही आते।
तन धन को साथी समझा था, पर ये भी छोड़ चले जाते॥
मेरे न हुये ये मैं इनसे, अति भिन्न अखंड निराला हूँ।
निज में पर से अन्यत्व लिये, निज सम रस पीनेवाला हूँ॥
जिसके शृंगारों में मेरा, यह महंगा जीवन घुल जाता।
अत्यन्त अशुचि जड़ काया से, इस चेतन का कैसा नाता॥
दिन रात शुभाशुभ भावों से, मेरा व्यापार चला करता।
मानव वाणी और काया से, आस्रव का द्वार खुला रहता॥
शुभ और अशुभ की ज्वाला से, झुलसा है मेरा अन्तःस्थल।

शीतल समकित किरणें फूटें, संवर से जागे अन्त-र्बल ॥
फिर तप की शोधक वह्नि जगे, कर्मों की कड़ियाँ टूट पड़े,
सर्वाङ्ग निजात्म प्रदेशों से, अमृत के निर्झर फूट पड़ें ॥
हम छोड़ चलें यह लोक तभी, लौकान्त विराजें क्षणमें जा।
निज लोक हमारा वासा हो, शोकांत बनें फिर हमको क्या ॥
जागे मम दुर्लभ बोधि प्रभो, दुर्नय तम सत्वर टल जावे।
बस ज्ञाता दृष्टा रह जाऊं, मद-मत्सर-मोह विनश जावे ॥
चिर रक्षक धर्म हमारा हो, हो धर्म हमारा चिर साथी।
जग में न हमारा कोई था, हम भी न रहें जग के साथी ॥
चरणों में आया हूँ प्रभुवर! शीतलता मुझको मिल जावे।
मुर्झाई ज्ञान-लता मेरी, निज अन्तर्बल से खिल जावे ॥
सोचा करता हूँ भोगों से, बुझ जावेगी इच्छा ज्वाला।
परिणाम निकलता है लेकिन, मानों पावक में घी डाला ॥
तेरे चरणों की पूजा से, इन्द्रिय सुख की ही अभिलाषा।
अबतक ही समझ न पाया प्रभु! सच्चे सुखकी भी परिभाषा ॥
तुम तो अविकारी हो प्रभुवर! जग में रहते जग से न्यारे;
अतएव झुके तव चरणों में, जगके माणिक मोती सारे ॥
स्याद्वाद मयी तेरी वाणी, शुभनय के झरने झरते हैं।

उस पावन नौका पर लाखों, प्राणी भव-वारिधि तिरते हैं॥
हे गुरुवर! शाश्वत सुख-दर्शक यह नग्न स्वरूप तुम्हारा है,
जग की नश्वरता का सच्चा, दिग्दर्शन करने वाला है॥
जब जग विषयोंमें रच पचकर, गाफिल निद्रामें सोता हो।
अथवा वह शिव के निष्कंटक, पथ में विष-कंटक बोता हो॥
हो अर्द्ध निशा का सन्नाटा, वन में वनचारी चरते हों।
तब शान्त निराकुल मानस, तत्वों का चिन्तन करते हों॥
करते तप शैल नदी तट पर, तरु तल वर्षा की झड़ियों में।
समता रसपान किया करते, सुख-दुख दोनों की घड़ियोंमें॥
अन्तर ज्वाला हरती वाणी, मानों झड़ती हों फुलझड़ियाँ।
भव बन्धन तड़-तड़ टूट पड़े, खिल जावें अन्तर की कलियाँ।
तुमसा दानी क्या कोई हो, जगको दे दी जगकी निधियाँ॥
दिन रात लुटाया करते हो, सम-शम की अविनश्वर मणियाँ॥
हे निर्मल देव! तुम्हें प्रणाम, हे ज्ञान दीप आगम! प्रणाम!
हे शान्ति त्यागके मूर्तिमान, शिव पथ-पंथी गुरुवर! प्रणाम॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

बीस तीर्थंकर पूजा-भाषा

दीप अढ़ाई मेरु पन, अब तीर्थंकर बीस।
तिन सबकी पूजा करूँ, मन वच तन धरि शीस॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरा ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरा ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ ठ स्थापन।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरा ! अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट् सन्निधिकरणम्।

इन्द्र-फणींद्र-नरेन्द्र-वंद्य, पद निर्मल धारी।
शोभनीक संसार, सारगुण हैं अविकारी॥
क्षीरोदधि सम नीरसों (हो), पूजों तृषा निवार।
सीमंधर जिन आदि दे, बीस विदेह मंझार॥
श्रीजिनराज हो, भवतारण तरण जिहाज॥ १॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०॥ १॥

तीन लोकके जीव, पाप आताप सताये।
तिनकों साता दाता, शीतल वचन सुहाये॥
बावन चंदन सौं जजूं (हो) भ्रमन तपन निरवार॥सी०

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं०॥ २॥

यह संसार अपार महासागर जिनस्वामी।
तातैं तारे बड़ी भक्ति-नौका जगनामी॥
तंदुल अमल सुगंधसों (हो) पूजों तुम गुणसार॥ सी०

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्०॥ ३॥

भविक-सरोज-विकाश. निंद्य-तमहर रविसे हो।
जति-श्रावक आचार. कथनको, तुम ही बड़े हो॥
फूल-सुवास अनेकसों (हो) पूजौं मदन प्रहार॥ सी०
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्य कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं० ॥ ४ ॥
काम-नाग विषधाम. नाशको गरुड़ कहे हो।
क्षुधा महादवज्वाल. तासुको मेघ लहे हो॥
नेवज बहु घृत मिष्टसों (हो) पूजों भूखविडार॥ सी०
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्य क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ॥ ५ ॥
उद्यम होन न देत सर्व जगमांहि भर्यो है।
मोह-महातम घोर, नाश परकाश कर्यो है॥
पूजों दीप प्रकाशसों (हो) ज्ञानज्योति करतार॥ सी०
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्य. मोहान्धकारविनाशनाय दीपं० ॥ ६ ॥
कर्म आठ सब काठ, भार विस्तार निहारा।
ध्यान अगनिकर प्रकट, सरव कीनों निरवारा॥
धूप अनूपम खेवतै (हो) दुःख जलै निरधार॥ सी०
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं० ॥ ७ ॥
मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे हैं।
सबको छिनमें जीत जैनके मेरु खड़े हैं॥
फल अति उत्तमसों जजों (हो) वांछितफलदातार॥ सी०
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं० ॥ ८ ॥

जल फल आठों दर्व, अरघ कर प्रीति धरी है।
गणधर इन्द्रनहूतैं, थुति पूरी न करी है॥
'द्यानत' सेवक जानके (हो) जगतैं लेहु निकार॥ सी०

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं०॥ ९॥

जयमाला

सोरठा—ज्ञान-सुधा-कर चंद, भविक-खेतहित मेघ हो।
भ्रम-तम भान अमंद, तीर्थंकर वीसों नमों॥

चौपाई १६ मात्रा।

सीमंधर सीमंधर स्वामी, जुगमन्धर जुगमन्धर नामी।
बाहुबाहु जिन जगजन तारे, करम सुबाहु बाहुबल दारे॥ १॥
जात सुजातं केवलज्ञानं, स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं।
ऋषभानन ऋषभानन दोषं, अनन्तवीरज वीरज कोषं॥ २॥
सूरीप्रभ सूरीगुणमालं, सुगुण विशाल विशाल दयालं।
वज्रधार सब गिरिवज्जर हैं, चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं॥ ३॥
भद्रबाहु भद्रनिके करता, श्रीभुजंग भुजंगम भरता।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजैं, नेमिप्रभु जस नेमि विराजैं॥ ४॥
वीरसेन वीरं जगजानैं, महाभद्र महाभद्र बखानैं।
नमों जसोधर जसधरकारी, नमों अजितवीरज बलधारी॥ ५॥
धनुष पांचसै काय विराजै, आयु कोडि पूरब सब छाजै।
समवशरण शोभित जिनराजा, भवजल तारन तरन जहाजा॥ ६॥

सम्यक रत्न-त्रयनिधि दानी, लोकालोक प्रकाशक ज्ञानी।
शतइन्द्रनिकरि वंदित सोहैं, सुरनर पशु सबके मन मोहैं ॥ ७ ॥

दोहा—तुमको पूजैं वंदना, करैं धन्य नर सोय।
'द्यानत' सरधा मन धरैं सो भी धरमी होय ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्यमान बीस तीर्थंकरोंका अर्घ

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं श्रीसीमंधर-युगमंधर-बाहु-सुबाहु-संजात-स्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनन्तवीर्य-सूर्यप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-चन्द्रबाहु-भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरषेण-महाभद्र-देवयशोऽजितवीर्येति विंशतिविद्यमानतीर्थंकरेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अकृत्रिम चैत्यालयोंका अर्घ

कृत्याकृत्रिम-चारु-चैत्यनिलयान् नित्यं त्रिलोकीगतान्।
वंदे भावन-व्यंतरान् द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान्।
सद्गन्धाक्षत-पुष्प-दाम-चरुकैः सद्दीपधूपैः फलै-
र्द्रव्यैर्नीरमुखैर्यजामि सततं दुष्कर्मणांशांतये ॥ १ ॥

सवैया

सात किरोड़ बहत्तर लाख पताल विषै जिन मन्दिर जानो।
मध्यहि लोकमें चारसौ ठावन, व्यंतर ज्योतिष के अधिकानो ॥

लाख चौरासी हजार सत्यानवैं तेइस ऊरध लोक बखानो।
एकेकमें प्रतिमा शत आठ नमौं तिहुं जोग त्रिकाल सयानो॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसंबधिजिनबिम्बेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्षेषु वर्षान्तर-पर्वतेषु। नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु। यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिन पुंगवानां ॥२॥ अवनि-तल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानां॥ इह मनुज-कृतानां देवराजार्चितानां। जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥ ३ ॥ जंबू-धातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्र-त्रये ये भवाश्चन्द्रांभोज-शिखंडिकण्ठ-कनक प्रावृड्घनाभाजिनाः॥ सम्यग्ज्ञान-चरित्रलक्षण-धरा दग्धाष्टकर्मेन्धनाः। भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥ ४ ॥ श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरि वरे शाल्मलौ जंबूवृक्षे। वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचिके कुण्डले मानुषांके। इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुख-शिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भवन-महितले यानि चैत्यालयानि ॥ ५ ॥ द्वौ कुंदेंदु-तुषार-हार-धवलौ द्वाविंद्रनील-प्रभौ द्वौ बंधूक-समप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ। शेषाः षोड़श जन्म-मृत्यु-रहिताः संतप्त-हेम-प्रभा-स्ते संज्ञान-दिवाकराः सुर-नुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि कृत्याकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इच्छामि-भंते!चेइयभत्ति-काउसग्गो कओ तस्सालोचेउं। अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि, तीसु वि लोएसु भवणवासिय

वाणविंतरजोइसियकप्पवासियत्ति चउविहा देवाः सपरिवारा दिव्वेण-गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ह्वाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति। अहमवि इह सन्तो तत्थसंताइ णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वन्दामि णमस्सामि। दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसम्पत्ती होउ मज्झं॥ अथ पौर्वाह्णिक-माध्याह्निक-आपराह्णिक देववंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावंदनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

इत्याशीर्वाद पुष्पाजलि क्षिपेत्।

ताव कायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,

णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।

(यहाँ पर नौ बार णमोकार मत्र जपना चाहिये)

आत्मशक्ति

- जो कुछ है सो आत्मा में, यदि वहा नहीं तो कहीं नहीं।
- आत्मा अनन्त ज्ञान का पात्र है और अनन्त सुख का धारी है परन्तु हम अपनी अज्ञानतावश दुर्दशा के पात्र बन रहे हैं।
- आत्मा ही आत्मा का गुरु है और आत्मा ही उसका शत्रु है।
- अन्तरग की बलवता ही श्रेयोमार्ग की जननी है।

—'वर्णी वाणी' से

सिद्ध पूजा भाषा

[illegible] सिद्ध [illegible] भजन [illegible] शिव विराजें।
नमत सुरासुर इन्द्र, [illegible] रवि शशि [illegible]॥
चार [illegible] [illegible], मुनि [illegible] [illegible]।
तिन पद पूजन [illegible], [illegible] [illegible] [illegible]॥
[illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible]।
[illegible] [illegible], सिद्ध [illegible] [illegible]॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]

उज्ज्वल जल [illegible] लाय, जिन गुण गावत हैं।
सब सिद्धन को सु चढ़ाय, [illegible] बढ़ावत हैं॥
[illegible] सुखदायक [illegible], यह गुण गावत हैं।
पूजों श्रीसिद्ध महान, [illegible] [illegible] पावन हैं॥ १॥

[illegible]

कर्पूर सु केशर सार, चन्दन सुखकारी।
पूजों श्रीसिद्ध निहार, आनन्द मनधारी॥
जिन लोकालोक प्रकाश, केवल ज्ञान लयो।
यह ज्ञान सुगुण मनभास, निजरस मांहि पगो॥ २॥

[illegible] निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

मुक्ताफल की उनहार, अक्षत धोय धरे।
अक्षय पद प्रापति जान, पुराय भराडार भरे॥
जग में सु पदारथ सार, ते सब दरसावै।
सो सम्यग्दर्शन सार, यह गुरा मन भावै॥ ३॥

ॐ ह्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

सुन्दर सु गुलाब अनूप, फूल अनेक कहे।
श्री सिद्धन पूजत भूप, बहुविधि पुराय लहे॥
तहां वीर्य अनन्तो सार, यह गुरा मनमानो।
ससार समुद्रतै पार, तारक प्रभु जानो॥ ४॥

ॐ ह्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो कामवाणविध्वसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

फेनी गोजा पकवान, मोदक सरस बने।
पूजौ श्री सिद्ध महान्, भूखविथा जु हने॥
झलके सब एकहिवार, ज्ञेय कहे जितने।
यह सूक्षमता गुरा सार, सिद्धन के सु तने॥ ५॥

ॐ ह्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

दीपक की ज्योति जगाय, सिद्धन को पूजो।
करि आरति सनमुख जाय, निरमल पद हूजो॥
कुछ घाटि न वाढि प्रमारा, अगुरुलघु गुरा राख्यो।
हम शीस नवावत आय, तुम गुरा मुख भाखो॥ ६॥

ॐ ह्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

वरधूप सु दशविधि ल्याय, दश विधि गन्ध धरै ।
वसु कर्म जलावत आय, मानो नृत्य करै ॥
इक सिद्ध में सिद्ध अनन्त, सत्ता पद पावै ।
यह अवगाहन गुण सन्त, सिद्धन के गावै ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने अवगाहनगुणसम्पन्नाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

ले फल उत्कृष्ट महान, सिद्धन को पूजौं ।
लहि मोक्ष परम गुण धाम, प्रभुसम नहिं दूजौं ॥
यह गुण बाधाकरि हीन, बाधा नाश भई ।
सुख अव्याबाध सु चीन, शिव सुन्दरी सु लई ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने अव्याबाधगुणसम्पन्नाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल फल भरि कञ्चन थाल, अरचन कर जोरी ।
प्रभु सुनियो दीनदयाल, विनती है मोरी ॥
कामादिक दुष्ट महान, इनको दूर करो ।
तुम सिद्धसदा सुखदान, मद भव दुःख हरो ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने अनन्तानन्तगुणसम्पन्नाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाला, दोहा ।

नमों सिद्ध परमात्मा, अद्भुत परम रसाल ।
तिन गुण महिमा अगम है, सरस रची जयमाल ।

पद्धरि छन्द ।

जय जय श्री सिद्धन कूं प्रणाम, जय शिव सुख सागर के सुधाम ।
जय बलि बलि जात सुरेश जान, जय पूजत तन मन हर्ष ठान ॥

जय क्षायिक गुण सम्यक्त्व लीन, जय केवलज्ञान सुगुण नवीन।
जय लोकालोक प्रकाशवान, यह केवल अतिशय हिये जान॥
जय सर्व तत्त्व दरसे महान, सो दर्शन गुण तीजो महान।
जय वीर्य अनन्तो है अपार, जाकी पटतर दूजो न सार॥
जय सूक्ष्मता गुण हिये धार, सब ज्ञेय लख्यो एकहि सुवार।
इक सिद्ध में सिद्ध अनन्त जान, अपनो-अपनी सत्ता प्रमाण॥
अवगाहन गुण अतिशय विशाल, तिनके पद वन्दे नमित भाल।
कछु घाटि न बाधि कहे प्रमाण, गुण अगुरु लघु धारे महान॥
जय बाधा रहित विराजमान, सो अव्याबाध कह्यो बखान।
ये वसुगुण हैं व्यवहार सन्त, निश्चय जिनवर भाषे अनन्त॥
सब सिद्धनि के गुण कहे गाय, इन गुणकरि शोभित है जिनाय।
तिनको भविजन मनवचन काय, पूजत वसु विधि अति हर्ष लाय॥
सुरपति फणपति चक्री महान, बलि हरि प्रतिहरि मनमथ सुजान।
गणपति मुनिपति मिल धरत ध्यान, जय सिद्ध शिरोमणि जग प्रधान॥

सोरठा।

ऐसे सिद्ध महान, तुम गुण महिमा अगम है।
वरणन कर्यो बखान, तुच्छ बुद्धि भवि लालजू॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा।

करता की यह विनती, सुनो सिद्ध भगवान।
मोहि बुलाओ आप ढिग, यही अरज उर आन॥

इत्याशीर्वाद।

सिद्ध पूजा

ऊर्ध्वाधोरयुतं सबिंदु सपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं
वर्गापूरित-दिग्गतांबुज-दलं तत्संधि-तत्त्वान्वितं।
अन्तःपत्र - तटेष्वनाहतयुतं ह्रींकार - संवेष्टितं
देवं ध्यायति यः स मुक्ति-सुभगो वैरीभ-कंठीरवः।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

निरस्त-कर्म-संबंधं, सूक्ष्मं नित्यं निरामयम्।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्तमनुपद्रवम् ॥ १ ॥
(सिद्ध यन्त्र स्थापनम्)
द्रव्याष्टक।

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं हान्यादि-भाव-रहितं भव-वीत-कायं।
रेवापगा-वर-सरो-यमुनोद्भवानां, नीरैर्यजे कलशगैर्वर-सिद्ध-चक्रं॥१॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०।

आनंद-कंद-जनकं घन-कर्म-मुक्तं, सम्यक्त्व-शर्म-गरिमं जननार्ति-वीत।
सौरभ्य-वासित-भुवं हरि-चंदनानां, गंधैर्यजे परिमलैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥२॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनम्।

सर्वावगाहन-गुणं सुसमाधि-निष्ठं, सिद्धं स्वरूप-निपुणं कमलं विशालं।
सौगंध्य-शालि-वनशालि-वराक्षतानां, पुंजैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रम्॥३
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्०।

नित्य स्वदेह-परिमाणमनादिसंज्ञं, द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् ।
मन्दारकुन्दकमलादिवनस्पतीनां, पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥४॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्प० ।

ऊर्ध्वस्वभावगमनं सुमनोव्यपेतं । ब्रह्मादिबीजसहित गगनावभासम् ॥
क्षीरान्नसाज्यवटकै रसपूर्णगर्भैर्नित्यं यजे चरुवरैर्वर सिद्धचक्रम् ॥५॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य ० ।

आतंक-शोक-भय-रोग-मद-प्रशांतं - निर्द्वंद्वभावधरणं महिमानिवेशं ।
कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातैर्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥६॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीप ।

पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितांतं । त्रैकाल्यवस्तुविषये निविड़-प्रदीपम् ।
सद्द्रव्यगंधघनसारविमिश्रितानां । धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥७॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिनेऽष्टकर्मदहनाय धूप०।

सिद्धासुराधिपतियक्षनरेंद्रचक्रै र्ध्येयं शिवं सकलभव्यजनैः सुवंद्यं ।
नारङ्गिपूंगकदलीफलनारिकेलैः सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥८॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फल० ।

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः संगं वरं चन्दनं ।
पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकं ॥
धूपं गंधयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये ।
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वांछितं ॥९॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं। सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनंतवीर्यं।
कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजं। वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥१०॥

कर्माष्टक विनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मी-निकेतनम्।
सम्यक्त्वादि-गुणोपेत सिद्धचक्र नमाम्यहम्॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रैलोक्येश्वर-वन्दनीय-चरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं
यानाराध्य निरुद्ध-चण्ड-मनसः संतोऽपि तीर्थंकराः।
सत्सम्यक्त्व-विबोध-वीर्य-विशदाऽव्याबाधताद्यै र्गुणै-
र्युक्तां स्तानिह तोष्टवीमि सतत सिद्धान्विशुद्धोदयान्॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत।

जयमाला।

विराग सनातन शांतनिरंश निरामय निर्भय निर्मल हंस।
सुधाम विबोध-निधान विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१॥
विदूरित-संसृति-भाव निरंग, समामृत पूरित देव विसंग।
अबध कषाय-विहीन विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥२॥
निवारित दुष्कृत कर्म विपाश, सदामल-केवल-केलि-निवास।
भवोदधिपारग शांत विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥३॥
अनन्तसुखामृतसागर धीर, कलंकरजोमलभूरिसमीर।
विखंडितकाम विराम विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥४॥
विकार विवर्जित तर्जित शोक, विबोध सुनेत्रविलोकित लोक।
विहार विराव विरंग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥५॥
रजोमलखेदविमुक्त विगात्र, निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र।
सुदर्शनराजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥६॥

नरामरवंदित निर्मल भाव, अनन्तमुनीश्वरपूज्य विहाव।
सदोदय विश्वमहेश विमोह, प्रसीद, विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥७॥
चिदंभ वितृष्ण विदोष विनिद्र, परापर शंकरसार वितंद्र।
विकोप विरूप विशंक विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥८॥
जरामरणोज्झित वीतविहार विचिंतित निर्मल निरहंकार।
अचिंत्यचरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥९॥
विवर्ण विगंध विमान विलोभ, विमाय विकाय विशब्द विशोभ।
अनाकुल केवल सर्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१०॥

घत्ता— असमयसमयसारं चारुचैतन्यचिन्हं,
परपरणतिमुक्तं पद्मनंदीन्द्रवंद्यं।
निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं,
स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिं॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल छन्द।

अविनाशी अविकार परमरसधाम हो।
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो॥
शुद्धबुद्ध अविरुद्ध अनादि अनंत हो।
जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हो॥१॥
ध्यान अगनिकर कर्म कलंक सबै दहे,
नित्य निरञ्जनदेव सरूपी ह्वैरहे।

ज्ञायकके आकार ममत्व निवारिकै,
सो परमातम सिद्ध नमूं शिरनायकैं ॥२॥

सवैया

ध्यान हुताशनमें अरि ईंधन झोंक दियो रिपु रोक निवारी।
शोक हस्यो भविलोकनको वर केवलज्ञान मयूख उघारी॥
लोक अलोक विलोक भये शिव जन्म जरामृत पङ्क पखारी।
सिद्धन थोक वसै शिव लोक तिन्हैं पग धोक त्रिकाल हमारी॥
तीरथ नाथ प्रनाम करैं तिनके गुण वर्णन मैं बुधि हारी।
मोम गयो गलि मूसमझार रह्यो तहं व्योम तदाकृति धारी॥
लोक गहीर नदीपति नीर गये तरि तीर भये अविकारी।
सिद्धन थोक वसैं शिव लोक तिन्हैं पगधोक त्रिकाल हमारी॥

दोहा—अविचलज्ञान प्रकाशतैं, गुण अनन्तकी खान।
ध्यान धरैं सो पाइये, परमसिद्ध भगवान॥
अविनाशी आनन्दमय, गुण पूरण भगवान।
शक्ति हिये परमातमा, सकल पदारथ ज्ञान॥
चारों करम विनाशिके, उपज्यो केवल ज्ञान।
इन्द्र आय स्तुति करी, पहुँचे शिवपुर थान॥

इत्याशीर्वाद पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

सिद्ध पूजा का भावाष्टक

निजमनोमणिभाजनभारया, समरसैकसुधारसधारया।
सकल बोधकलारमणीयकं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥

मोय तृषा दुःख देत, सो तुमने जीती प्रभू।
जलसे पूजूं मैं तोय, मेरो रोग निवारियो ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिने (सम्यक्त्व, णाण दसण वीर्यत्व, सूक्ष्मत्व अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, अव्याबाधत्व अष्टगुण सहिताय) जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सहजकर्मकलंकविनाशनै रमलभावसुवासितचन्दनैः।
अनुपमानगुणावलिनायकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥

हम भव आतप मांहिं, तुम न्यारे संसारसूं।
कीज्यो शीतल छांह, चन्दनसे पूजा करूं ॥ चन्दनं ॥

सहजभावसुनिर्मलतंदुलैः सकल दोषविशालविशोधनैः।
अनुपरोध सुबोध निधानकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥

हम अवगुण समुदाय, तुम अक्षय गुणके भरे।
पूजूं अक्षत लाय, दोष नाश गुण कीजिये ॥ अक्षतं ॥

समयसारसुपुष्पसुमालया, सहजकर्मकरेण विशोधया।
परमयोगबलेन वशीकृतं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥

काम अग्नि है मोहि, निश्चय शील स्वभाव तुम ।
फूल चढ़ाऊँ तोहि, मेरो रोग निवारियो ॥ पुष्पं० ॥

अकृतबोधसुदिव्यनैवेद्यकैर्विहितजातिजरामरणांतकैः ।
निरवधिप्रचुरात्मगुणालय, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥

मोहि क्षुधा दुख भूरि, ध्यान खड्ग करि तुम हतो ।
मेरी बाधा चूर, नेवज से पूजा करूं ॥ नैवेद्यं० ॥

सहजरत्नरुचिप्रतिदीपकैः, रुचिविभूतितमःप्रविनाशनैः ।
निरवधिस्वविकाशप्रकाशनैः, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥

मोह तिमिर हम पास, तुम पै चेतन ज्योति है ।
पूजों दीप प्रकाश, मेरो तम निरवारियो ॥ दीपं० ॥

निजगुणाक्षयरूपसुधूपनैः, स्वगुणघातिमलप्रविनाशनैः ।
विशदबोधसुदीर्घसुखात्मक, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥

अष्टकर्मवन जार, मुक्ति मांहि तुम सुख करो ।
खेऊँ धूप रसाल, अष्ट कर्म निरवारियो ॥ धूपं० ॥

परमभावफलावलिसम्पदा, सहजभावकुभावविशोधया ।
निजगुणास्फुरणात्मनिरंजन, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥

अन्तराय दुःख टाल, तुम अनन्त थिरता लही ।
पूजूं फल दरशाय, विघ्न टाल शिवफल करो ॥ फलं० ॥

नेत्रोन्मीलिविकाशभावनिवहैरत्यन्तबोधाय वै ।
वार्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैः ॥
यश्चिंतामणिशुद्धभावपरमज्ञानात्मकैरर्चयेत् ।
सिद्धं स्वादुमगाधबोधमचलं सञ्चर्चयामो वयम् ॥९॥

हममें आठों दोष, जजहुं अर्घ ले सिद्धजी ।
दीज्यो वसु गुण मोय, कर जोड़े सेवक खड़ो ॥ अर्घं० ॥

तीस चोबीसका अर्घ

द्रव्य आठों जु लीना है, अर्घ करमें नवीना है ।
पूजतें पाप छीना है, भानुमल्ल जोर कीना है ॥
दीप अढ़ाई सरस राजै, क्षेत्र दश ता विषै छाजै ।
सात शत बीस जिन राजै, पूजतां पाप सब भाजै ॥

ॐ ह्रीं पाच भरत पांच ऐरावत दश क्षेत्रके विषैं तीस चौवीमीके सातसौ वीस जिन विम्वेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

सोलह कारण का अर्घ

जल फल आठों द्रव्य चढ़ाय,'द्यानत' बरत करो मनलाय ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दरश विशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर पद पाय ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि, विनयसम्पन्नता, शीलव्रतेष्वनतीचार, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, संवेग, शक्तितस्त्याग, शक्तितस्तप, साधुसमाधि, वैयावृत्यकरण, अरहतभक्ति, आचार्यभक्ति, बहुश्रुतभक्ति, प्रवचनभक्ति, आवश्यकापरिहाणि, मार्गप्रभावना, प्रवचन वात्सल्य षोडस-कारणेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचमेरु का अर्घ

आठ दरबमय अर्घ बनाय, द्यानत पूजों श्रीजिनराय।
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥
पांचों मेरु असी जिन धाम, सब प्रतिमाको करों प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि अस्सी जिन चैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो अर्घं०।

नन्दीश्वरद्वीप का अर्घ

यह अरघ कियो निज हेतु तुमको अरपतु हों।
द्यानत कीनों शिव खेत भूमि समरपतु हों॥
नन्दीश्वर श्रीजिनधाम बावन पुंज करों।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम आनन्दभाव धरों॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दशलक्षण धर्म का अर्घ

आठों द्रव्य संवार, द्यानत अधिक उछाह सों।
भव आताप निवार, दशलक्षण पूजों सदा॥ ४॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन, ब्रह्मचर्य दशलक्षणधर्मेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय का अर्घ

आठ दरब निरधार, उत्तमसों उत्तम लिये।
जन्म रोग निरवार, सम्यकरतनत्रय भजों॥ ५॥

ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय, त्रयोदशप्रकारसम्यक् चारित्रायऽर्घं।

पंचमेरु पूजा

तीर्थंकरोंके न्हवन-जलतैं, भये तीरथ शर्मदा।
तातैं प्रदच्छन देत सुरगन, पंचमेरुन की सदा॥
दो जलधि ढाई द्वीपमें, सब गनत-मूल विराजहीं।
पूजौं असी जिनधाम-प्रतिमा, होहिं सुखदुख भाजहीं॥

ॐ ह्रीं पचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर सवौषट्।
ॐ ह्रीं पचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।
ॐ ह्रीं पचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अथाष्टक। चौपाई आंचलीबद्ध (१५ मात्रा)

शीतलमिष्ट सुवास मिलाय, जलसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥
पांचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमाको करों प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥ १॥

ॐ ह्रीं पचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जल निर्वपामीति स्वाहा॥।

जल केशर करपूर मिलाय, गंधसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥ पांचों०॥२॥

ॐ ह्रीं पचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।

अमल अखंड सुगंध सुहाय, अच्छतसौं पूजौं जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥ पांचों०॥३॥

ॐ ह्रीं पचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बरन अनेक रहे महकाय, फूलनसौं पूजौं जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों०॥४॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।

मनवांछित बहु तुरत बनाय, चरुसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥५॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।

तमहर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीपसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥६॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो दीप निर्वपामीति स्वाहा।

खेऊं अगर अमल अधिकाय, धूपसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥७॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो धूप निर्वपामीति स्वाहा।

सुरस सुवर्ण सुगंध सुभाय, फलसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥८॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो फल निर्वपामीति स्वाहा।

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम सुदर्शन-स्वामि, विजय अचल मंदर कहा।
विद्युन्माली नाम, पंचमेरु जगमें प्रगट ॥१॥

वेसरी छन्द।

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै, भद्रशालवन भूपर छाजै
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन वच तन वन्दना हमारी ॥२॥
ऊपर पांच शतक पर सोहै, नंदनवन देखत मन मोहै ॥ चैत्या० ॥३॥
साढे बासठ सहस ऊंचाई, वनसुमनस शोभै अधिकाई ॥ चैत्या० ॥४॥
ऊँचा जोजन सहस छत्तीसं, पांडुकवन सोहै गिरिसीसं ॥ चैत्या० ॥५॥
चारों मेरु समान बखानो, भूपर भद्रसाल चहुं जानो।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वंदना हमारी ॥६॥
ऊंचे पांच शतक पर भाखे, चारों नन्दनवन अभिलाखे।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन वदना हमारी ॥७॥
साढे पचपन सहस उतगा, वन सौमनस चार बहुरगा।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वन्दना हमारी ॥८॥
उच्च अट्ठाइस सहस बताये, पांडुक चारों वन शुभ गाये।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन बन्दना हमारी ॥९॥
सुर नर चारन वन्दन आवैं, सो शोभा हम किह सुख गावैं।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मन वच तन वन्दना हमारी ॥१०॥

दोहा—पञ्चमेरुकी आरती पढ़ै सुनै जो कोय।
'द्यानत' फल जानैं प्रभू, तुरत महासुख होय ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं पचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वरद्वीप पूजा

अडिल्ल—सरब पर्वमें बड़ो अठाई परब है।
नन्दीश्वर सुर जांहिं लिये वसु दरब है॥
हमें सकति सो नाहि इहां करि थापना।
पूजों जिन गृह प्रतिमा है हित आपना॥१॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमा समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

कंचन-मणि-मय-भृङ्गार, तीरथ नीर भरा।
तिहुं धार दई निरवार, जामन मरन जरा॥
नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पुंज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनँद-भाव धरों॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिन प्रतिमाभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।॥ १ ॥

भव तप हर शीतल वास, सो चन्दन नाहीं।
प्रभु यह गुन कीजे सांच, आयो तुम ठाहीं॥ नंदी०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीं नन्दीश्वर द्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे द्विपचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहै।
सब जीते अक्ष-समाज, तुम सम अरु को है॥ नंदी० ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे द्विपचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो-अक्षय पदप्राप्तये अक्षत निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

तुम काम विनाशक देव, ध्याऊं फूलन सौं।
लहि शील लक्ष्मी एव, छूटूं सूलन सौं॥ नंदी० ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे द्विपचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो-कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवज इन्द्रिय-बलकार, सो तुमने चूरा।
चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा॥ नंदी० ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे द्विपचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

दीपक की ज्योति-प्रकाश, तुम तन मांहिं लसै।
टूटै करमनकी राश, ज्ञानकणी दरसै॥ नंदी० ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे द्विपचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

कृष्णागरु-धूप-सुवास, दश-दिशि नारि वरै।
अति हरष-भाव परकाश, मानो नृत्य करै॥ नंदी० ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे द्विपचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

बहुविधिफल ले तिहुँकाल. आनन्द राचत हैं।
तुम शिवफल देहु दयाल,तुहि हम जाचत हैं॥ नंदी० ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा॥ ८॥

यह अर्घ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हों।
'द्यानत' कीजो शिवखेत, भूमि समरपतु हों॥ नंदी०॥९॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला.

दोहा—कार्तिक फागुन साढ़के, अन्त आठ दिनमाहिं।
नन्दीश्वर सुर जात हैं, हम पूजैं इह ठाहिं॥१॥

छन्द

एक सौ त्रेसठ कोडि जोजन महा। लाख चौरासिया एक दिशमे लहा॥
आठमों द्वीप नन्दीश्वरं भास्वरं। भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥
चारदिशि चारअञ्जनगिरि राजहीं। सहस चौरासिया एक दिश छाजहीं॥
ढोलसम गोल ऊपर तले सुन्दरं। भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥
एक इक चारदिशि चार शुभ बावरी। एक इक लाख जोजन अमल जल भरी॥
चहुं दिशा चार वन लाख जोजन वरं। भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥
सोल वापीन मधि सोलगिरि दधिमुखं। सहस दश महा जोजन लखत ही सुखं॥
बावरी कौन दोमाहि दो रतिकरं। भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥
शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे। चार सोलै मिलैं सर्व बावन लहे॥
एक इक सीस पर एक जिनमंदिरं। भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥

बिंब अठ एक सौ रतनमयि सोहही। देव देवी सरव नयन मन मोहही॥
पांचसै धनुष तन पद्मआसन परं। भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥
लालनख मुख नयन श्याम अरु श्वेत हैं। श्याम रंग भौंह सिर केश छवि देत हैं॥
बचन बोलत मनो हसत कालुष हरं। भौन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं॥
कोटिशशि भानुदुति तेज छिप जात है। महावैराग परिणाम ठहरात है॥
वयन नहिं कहैं लखि होत सम्यक् धरं। भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥

सोरठा — नंदीश्वर जिनधाम, प्रतिमा महिमाको कहै।
'द्यानत' लीनो नाम, यहै भगति शिव सुखकरै॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म - विश्वास

- "मुझ से क्या हो सकता है? मैं क्या कर सकता हूँ? मैं असमर्थ हूँ, दीन-हीन हूँ ऐसे कुत्सित विचारवाले मनुष्य आत्म-विश्वास के अभाव में कदापि सफल नहीं हो सकते।
- जिस मनुष्य में आत्म-विश्वास नहीं, वह 'मनुष्य' कहलाने का अधिकारी नहीं।
- जिन्हें अपने आत्मबल पर विश्वास नहीं, उन्हें संसार सागर की तो बात जाने दो, गाँव की मेंढ़क तरण-तलैया भी भारी है।

—'वर्णी वाणी' से

सोलहकारण पूजा

अडिल्ल—सोल्हकारण भाय तीर्थंकर जे भये।
हरषे इन्द्र अपार मेरुपै ले गये॥
पूजा करि निज धन्य लख्यो बहु चावसों।
हम हू षोडश कारण भावैं भावसौं॥१॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट्।

कंचन-झारी निरमल नीर. पूजों जिनवर गुण गंभीर।
परम गुरु हो. जय जय नाथ परम गुरु हो॥
दरश विशुद्धि भावना भाय. सोलह तीर्थंकर पददाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो॥१॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं० ॥ १ ॥

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजों श्रीजिनवरके पाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥दरश०॥२॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं० ॥ २ ॥

तंदुल धवल सुगंध अनूप, पूजौं जिनवर तिहुँ जगभूप।
परम गुरु हो. जय जय नाथ परम गुरु हो ॥दरश०॥३॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्० ॥ ३ ॥

फूल सुगंध मधुप-गुंजार, पूजौं जिनवर जग-आधार।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥दरश०॥४॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं० ॥ ४ ॥

सद नेवज बहुविधि पकवान, पूजौं श्रीजिनवर गुणखान।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥दरश०॥५॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ॥ ५ ॥

दीपक-ज्योति तिमिर क्षयकार, पूजूं श्रीजिन केवलधार।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥दरश०॥६॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं० ॥ ६ ॥

अगर कपूर गंध शुभ खेय, श्रीजिनवर आगे महकेय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥दरश०॥७॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं० ॥ ७ ॥

श्रीफल आदि बहुत फलसार, पूजौं जिन वाँछित-दातार।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥दरश०॥८॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो मोक्ष फलप्राप्तये फलं० ॥ ८ ॥

जलफल आठों दरव चढ़ाय, 'द्यानत' वरत करौं मनलाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥दरश०॥९॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं० ॥ ९ ॥

जयमाला

षोड़श कारण गुण करै, हरै चतुरगति-वास।
पाप पुण्य सब नासकै, ज्ञान-भान परकाश ॥१॥

चौपाई १६ मात्रा ।

दरश विशुद्ध धरे जो कोई। ताको आवागमन न होई।
विनय महा धारै जो प्रानी। शिव-वनिता की सखी वखानी ॥२॥
शील सदा दिढ़ जो नर पालै। सो औरनकी आपद टालै ॥
ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं। ताके मोह-महातम नाहीं ॥३॥
जो संवेग-भाव विस्तारै। सुरग-मुकति-पद आप निहारै।
दान देय मन हरष विशेखै। इह भव जस परभव सुख देखै ॥४॥
जो तप तपै खपै अभिलाषा। चूरै करम-शिखर गुरुभाषा ॥
साधु-समाधि सदा मन लावै। तिहुँ जग भोग भोगि शिव जावै ॥५॥
निशि-दिन वैयावृत्य करैया। सो निहचै भव-नीर तिरैया ॥
जो अरहंत-भगति मन आनै। सो जन विषय कषाय न जानै ॥६॥
जो आचारज-भगति करै है। सो निर्मल आचार धरै है ॥
बहुश्रुतवंत-भगति जो करई। सो नर संपूरन श्रुत धरई ॥७॥
प्रवचन-भगति करै जो ज्ञाता। लहै ज्ञान परमानन्द-दाता ॥
षट आवश्य काल जो साधै। सो ही रत-त्रय आराधै ॥८॥
धरम-प्रभाव करै जो ज्ञानी। तिन शिव-मारग रीति पिछानी ॥
वत्सल अङ्ग सदा जो ध्यावै। सो तिर्थंकर पदवी पावै ॥९॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—एही सोहल भावना, सहित धरै व्रत जोय।
देव-इन्द्र-नर-वंद्य-पद, 'द्यानत' शिवपद होय ॥ १० ॥

[आशीर्वाद]

दशलक्षण धर्म पूजा

अडिल्ल—उत्तम छिमा मारदव आरजव भाव हैं।
सत्य शौच संजम तप त्याग उपाव हैं॥
आकिंचन ब्रह्मचर्य धरम दश सार हैं।
चहुँगति-दुखतैं काढ़ि मुकति करतार हैं॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र अवतर अवतर सवौषट्।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सोरठा।

हेमाचलकी धार, मुनि-चित सम शीतल सुरभि।
भव-आताप निवार, दस-लक्षण पूजौं सदा॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्माय जल निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशोंदिशा॥ भव०

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्माय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

अमल अखंडित सार, तंदुल चन्द्रसमान शुभ॥ भव०

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्माय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥३॥

फूल अनेक प्रकार, महकैं ऊरधलोकलों॥ भव०

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्माय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा॥४॥

नेवज विविध निहार, उत्तम षट-रस-संयुगत ॥ भव०

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्माय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा। ॥ ५ ॥

वाति कपूर सुधार, दीपक जोति-सुहावनी ॥ भव०

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्माय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगन्धता ॥ भव०

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्माय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

फलकी जाति अपार, घ्राण नयन मनमोहने ॥ भव०

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्माय फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

आठों दरब संवार, 'द्यानत' अधिक उछाहसों ॥ भव०

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्माय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अंग पूजा

सोरठा।

पीड़ें दुष्ट अनेक, बांध मार बहुविधि करैं।
धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजै पीतमा ॥१॥

चौपाई मिश्रित गीता छन्द।

उत्तम छिमा गहो रे भाई, इह भव जस, पर-भव सुखदाई।
गाली सुनि मन खेद न आनो, गुनको औगुन कहै अयानो ॥
कहि है अयानो वस्तु छीनै, बांध मार बहुविधि करै।
घरतैं निकारै तन विदारै, वैर जो न तहां धरै ॥

तैं करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा।
अति क्रोध-अगनि बुझाय प्रानी, साम्यजल ले सीयरा ॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मान महाविषरूप, करहिं नीच-गति जगतमें।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा ॥२॥
उत्तम मार्दव-गुन मनमाना, मान करनको कौन ठिकाना।
बस्यो निगोदमाहितैं आया, दमरी रूकन भाग बिकाया ॥
रूकन बिकाया भागवशतैं, देव इकइन्द्री भया।
उत्तम मुआ चांडाल हूवा, भूप कीड़ोंमें गया ॥
जीतव्य - जोवन - धन - गुमान, कहा करे जल - बुदबुदा।
करि विनय बहु-गुन, बड़े जनकी, ज्ञानका पावै उदा ॥२॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कपट न कीजे कोय, चोरनके पुर ना बसे।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु संपदा ॥३॥
उत्तम आर्जव-रीति बखानी, रंचक दगा बहुत दुखदानी।
मनमें होय सो वचन उचरिये, वचन होय सो तनसौं करिये ॥
करिये सरल तिहुँजोग अपने, देख निरमल आरसी।
मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट - प्रीति अंगारसी ॥
नहिं लहै लक्ष्मी अधिक छल करि, करम-बन्ध-विशेषता।
भय त्यागि दूध बिलाव पीवै, आपदा नहिं देखता ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कठिन वचन मति बोल, पर-निन्दा अरु झूठ तज।
सांच जवाहर खोल, सतवादी जगमें सुखी ॥४॥

उत्तम सत्य-वरत पालीजै, पर-विश्वासघात नहिं कीजै।
सांचे झूठे मानुष देखो, आपन पूत स्वपास न पेखो ॥
पेखो तिहायत पुरुष सांचेको, दरव सब दीजिये।
मुनिराज - श्रावककी प्रतिष्ठा, सांचगुन लख लीजिये ॥
ऊंचे सिंहासन बैठ वसु नृप, धरमका भूपति भया।
वसु झूठ सेती नरक पहुँचा, सुरगमें नारद गया ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं उत्तम सत्य धर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

धरि हिरदै सन्तोष, करहु तपस्या देहसों।
शौच सदा निरदोष, धरम बड़ो संसार में ॥५॥

उत्तम शौच सर्व जग जानो, लोभ पापको बाप बखानो।
आशा-पाश महा दुखदानी, सुख पावै सन्तोषी प्रानी ॥
प्रानी सदा शुचि शील जप तप, ज्ञानध्यान प्रभावतैं।
नित गंग-जमुन समुद्र न्हाये, अशुचि-दोष सुभावतैं ॥
ऊपर अमल मल भर्यो भीतर, कौन विधि घट शुचि कहै ॥
बहु देह मैली सुगुन - थैली, शौच-गुन साधु लहै ॥५॥

ॐ ह्रीं उत्तम शौच धर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो।
संजम-रतन संभाल, विषय चोर बहु फिरत हैं ॥६॥

उत्तम संजम गहु मन मेरे, भव-भवके भाजैं अघ तेरे।
सुरग-नरक-पशुगतिमें नाहीं, आलस-हरन करन सुख ठाहीं ॥
ठाहीं पृथ्वी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो।
सपरसन रसना घ्राण नैना, कान मन सब वश करो ॥
जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रुलो जग-कीचमें।
इक घरी मत विसरो करो नित, आयु जम-मुख बीचमें ॥६॥

ॐ ह्रीं उत्तम संयम धर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तप चाहैं सुरराय, करम-शिखरको वज्र है।
द्वादश विधि सुखदाय, क्यों न करै निज शक्तिसम ॥७॥

उत्तम तप सब माहिं बखाना, करम-शैल को वज्र-समाना।
बस्यो अनादि-निगोद-मझारा, भू-विकलत्रय-पशु-तन धारा ॥
धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आव निरोगता।
श्रीजैनवानी तत्वज्ञानी, भई विषय-पयोगता ॥
अति महादुरलभ त्याग विषय, कषाय जो तप आदरै।
नर-भव अनूपम कनक घरपर, मणिमयी कलसा धरै ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं उत्तम तपो दशलक्षण धर्माङ्गाय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दान चार परकार, चार संघको दीजिये।
धन बिजुली उनहार, नर-भव लाहो लीजिये ॥८॥

उत्तम त्याग कह्यो जग सारा, औषधि शास्त्र अभय आहारा।
निहचै राग-द्वेष निरवारै, ज्ञाता दोनों दान सम्भारै ॥

दोनों संभारै कूप - जलसम,' दरब घरमें परिनया।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया वह गया॥
धनि साधु शास्त्र अभय-दिवैया, त्याग राग विरोधकों।
विन दान श्रावक साधु दोनों, लहैं नाहीं बोधकों॥८॥

ॐ ह्रीं उत्तम त्याग धर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

परिग्रह चौबिस भेद, त्याग करैं मुनिराजजी।
तिसनाभाव उछेद, घटती जान घटाइए॥९॥

उत्तम आकिंचन गुण जानो, परिग्रह-चिन्ता दुख ही मानो।
फांस तनकसी तनमें सालै, चाह लंगोटी की दुख भालै॥
भालै न समता सुख कभी नर, विना मुनि-मुद्रा धरैं।
धनि नगनपर तन-नगन ठाड़े, सुर असुर पायनि परैं॥
घरमांहि तिसना जो घटावै, रुचि नहीं संसारसौं।
वहु धन बुरा हू भला कहिये, लीन पर-उपगारसौं॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तम आकिञ्चन्य धर्माङ्गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शील-बाड़ि नौ राख ब्रह्म-भाव अन्तर लखो।
करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नर-भव सदा॥१०॥

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ, माता बहिन सुता पहिचानौ।
सहैं बान-वर्षा बहु सूरे, टिकैं न नैन-बान लखि कूरे॥
कूरे तिया के अशुचितनमें, कामरोगी रति करै।
बहु मृतक सड़हिं मसान मांहीं, काक ज्यौं चोंचैं भरै॥

संसार में विषवेल नारी, तजि गये जोगीश्वरा।
'द्यानत' धरम दशपैंड़ि चढ़िके, शिव-महलमें पगधरा ॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माङ्गाय अनर्घपद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा—दश लच्छन वंदौं सदा, मन-वांछित फलदाय।
कहौं आरती भारती, हमपर होहु सहाय ॥१॥

उत्तम छिमा जहाँ मन होई, अन्तर-बाहर शत्रु न कोई।
उत्तम मार्दव विनय प्रकासै, नाना भेद ज्ञान सब भासै ॥ २ ॥
उत्तम आर्जव कपट मिटावै दुरगति त्यागि सुगति उपजावै।
उत्तम सत्य-वचन मुख बोलै, सो प्रानी संसार न डोलै ॥ ३ ॥
उत्तम शौच लोभ-परिहारी, संतोषी गुण-रतन-भण्डारी।
उत्तम संयम पालै ज्ञाता, नर-भव सफल करै ले साता ॥ ४ ॥
उत्तम तप निरवांछित पालै, सो नर करम-शत्रुको टालै।
उत्तम त्याग करै जो कोई, भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई ॥ ५ ॥
उत्तम आकिंचन व्रत धारै, परम समाधि दशा विसतारै।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावै, नरसुर सहित मुकति-फल पावै ॥ ६ ॥

दोहा—करै करमकी निरजरा, भवपींजरा विनाशि।
अजर अमर पदको लहै, 'द्यानत' सुखकी राशि ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य ब्रह्मचर्यधर्मेभ्य पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय पूजा

दोहा।

चहुँगति-फणि-विष-हरन-मणि, दुख-पावक-जल-धार।
शिव-सुख-सुधा-सरोवरी, सम्यक-त्रयी निहार ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रय धर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रय धर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।
ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रय धर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सोरठा।

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहना।
जनम-रोग निरवार, सम्यक-रत्न-त्रय भजूं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय जन्मरोगविनाशनाय जलं० ॥ १ ॥

चंदन-केशर गारि, परिमल-महा-सुगंध-मय ॥ जन्म०

ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय भवातापविनाशनाय चन्दनं० ॥ २ ॥

तंदुल अमल चितार, वासमती-सुखदासके ॥ जन्म०

ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्० ॥ ३ ॥

महकैं फूल अपार, अलि गुंजैं ज्यों थुति करैं ॥ जन्म०

ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं० ॥ ४ ॥

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगंधयुत ॥ जन्म०

ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ॥ ५ ॥

दीप रतनमय सार, जोत प्रकाशै जगतमें ॥ जन्म०

ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं० ॥ ६ ॥

धूप सुवास विथार, चंदन अगर कपूर की ॥ जन्म०

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

फल शोभा अधिकार, लोंग छुहारे जायफल ॥ जन्म०

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षपद प्राप्तये फलं ॥ ८ ॥

आठ दरब निरधार, उत्तमसों उत्तम लिये ॥ जन्म०

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं० ॥ ९ ॥

सम्यक दरशन ज्ञान, व्रत शिव-मग-तीनों मयी ।

पार उतारन यान, 'द्यानत' पूजों व्रतसहित ॥१०॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यग्दर्शन पूजा

दोहा — सिद्ध अष्ट-गुनमय प्रगट, मुक्त-जीव-सोपान ।

ज्ञान चरित जिहँ बिन अफल, सम्यक्दर्श प्रधान ॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टागसम्यग्दर्शन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं अष्टागसम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ ।

ॐ ह्रीं अष्टागसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सोरठा-नीर सुगन्ध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।

सम्यकदर्शन सार, आठ अङ्ग पूजौं सदा ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अष्टागसम्यग्दर्शनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जल केशर घनसार, ताप हरै शीतल करै ॥ सम्य०

ॐ ह्रीं अष्टागसम्यग्दर्शनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै ॥ सम्य०

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अक्षत निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पुहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै ॥ सम्य०

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरै थिरता करै ॥ सम्य०

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

दीप-ज्योति तम-हार, घट पट परकाशै महा ॥ सम्य०

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

धूप घ्रान-सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै ॥ सम्य०

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर-शिव-फल करै ॥ सम्य०

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल-फूल चरु ॥ सम्य०

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाला दोहा ।

आप आप निहचै लखै तत्व-प्रीति व्योहार ।
रहित दोष पच्चीस हैं, सहित अष्ट गुनसार ॥ १ ॥

चौपाई मिश्रित गीता छन्द ।

सम्यकदरशन-रतन गहीजै । जिन-वचमें सन्देह न कीजै ।
इह भव विभव-चाह दुखदानी । पर-भव भोग चहै मत प्रानी ॥

ग्लानि गिलान न करि अशुचि लखि, धरम गुरु नृप परखिये।
पर-दोष ढकिये धरम डिगते कों, सुथिर कर हरखिये॥
चउ संघको वात्सल्य कीजै, धरम की परभावना।
गुण आठसों गुन आठ लहिकैं, इहां फेर न आवना॥ २॥

ॐ ह्रीं अष्टांग सहितपंचविंशतिदोषरहितसम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्ज्ञान पूजा

दोहा—पंचभेद जाके प्रगट, ज्ञेय-प्रकाशन-भान।
मोह-तपन-हर-चंद्रमा, सोई, सम्यकज्ञान॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञान! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञान! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञान! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सोरठा—नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मल क्षय करै।
सम्यकज्ञान विचार, आठ-भेद पूजौं सदा॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

जलकेशर घनसार, ताप हरे शीतल करे॥ स०॥२॥

ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

अक्षत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै॥ स०॥३॥

ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

पुहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै॥ स०॥४॥

ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरै थिरता करै ॥ स० ॥५॥

ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

दीप-जोति तम-हार, घटपट परकाशै महा ॥ स० ॥६॥

ॐ ह्री अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

धूप घ्रान-सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै ॥ स० ॥७॥

ॐ ह्री अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफलआदि विथार, निहचै सुर-शिव-फल करै ॥स०।८।

ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फलफूल चरु ॥स०॥९॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाला दोहा

आप आप जानै नियत; ग्रन्थपठन व्योहार।

संशय विभ्रम मोह बिन, अष्ट अङ्ग गुनकार ॥ १ ॥

सम्यकज्ञान-रतन मन भाया, आगम तीजा नैन बताया।

अच्छर शुद्ध अरथ पहिचानौ, अच्छर अरथ उभय सँग जानौ ॥

जानौ सुकाल-पठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये।

तप-रीति गहि वहु मौन देकैं, विनयगुन चित लाइये ॥

ये आठ भेद करम उछेदक, ज्ञान दर्पन देखना।

इस ज्ञानहीसों भरत सीझा, और सब पट पेखना ॥११॥

ॐ ह्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ११ ॥

सम्यक्चारित्र पूजा

दोहा—विषय रोग औषधि महा, दवकषाय जलधार।
तीर्थंकर जाकों धरैं, सम्यकचारितसार ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर सवौषट्।
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट।

सोरठा।

नीर सुगन्ध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै।
सम्यकचारित सार, तेरह विध पूजौं सदा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जल० ॥ १ ॥

जलकेशर घनसार, ताप हरै शीतल करै। स० ॥२॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनम्० ॥ २ ॥

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै। स० ॥३॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतान्० ॥ ३ ॥

पुहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै। स० ॥४॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्प० ॥ ४ ॥

नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरै थिरता करै। स०॥५॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य ० ॥ ५ ॥

दीप-जोति तम-हार, घट पट परकाशै महा। स०॥६॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप ॥ ६ ॥

धूप घ्रान-सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै । स०॥७॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं० ॥ ७ ॥

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर-शिव-फल करै । स०॥८॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं० ॥ ८ ॥

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु । स०॥९॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं० ॥ ९ ॥

जयमाला दोहा ।

आप आप थिर नियत नय, तप संयम व्योहार ।
स्वपर-दया-दोनों लिये, तेरहविध दुख-हार ॥ १० ॥

चौपाई मिश्रित गीता छन्द ।

सम्यकचारित रतन सम्भालो, पंच पाप तजिके व्रत पालौ ।
पंचसमिति त्रय गुपति गहीजै, नर-भव सफल करहु तन छीजै ॥
छीजै सदा तन को जतन यह, एक संयम पालिये ।
बहु रुल्यो नरक-निगोद-माहीं, कषाय-विषयनि टालिये ॥
शुभ-करम-जोग सुघाट आयो, पार हो दिन जात है ।
'द्यानत' धरमकी नाव बैठो, शिव-पुरी कुशलात है ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

समुच्चय जयमाला दोहा

सम्यकदरशन-ज्ञान-व्रत, इन बिन मुकति न होय ।
अन्ध पंगु अरु आलसी, जुदे जलैं दव-लोय ॥ १ ॥

चौपाई १६ मात्रा

जापै ध्यान सुथिर बन आवै, ताके करम-बन्ध कट जावै।
तासौं शिव-तिय प्रीति बढ़ावै, जो सम्यक् रतन-त्रय ध्यावै ॥२॥
ताको चहुँगतिके दुख नाहीं, सो न परै भव-सागर माहीं।
जनम-जरा-मृत दोष मिटावै, जो सम्यक् रतन-त्रय ध्यावै ॥३॥
सोई दशलच्छनको साधै, सो सोलह कारण आराधै।
सो परमातम पद उपजावै, जो सम्यक् रतन-त्रय ध्यावै ॥४॥
सोई शक्र-चक्रिपद लेई, तीन लोकके सुख विलसेई।
सो रागादिक भाव बहावै, जो सम्यक् रतन-त्रय ध्यावै ॥५॥
सोई लोकालोक निहारै, परमानन्द दशा विस्तारै।
आप तिरै औरन तिरवावै, जो सम्यक् रतन-त्रय ध्यावै ॥६॥
एक स्वरूप-प्रकाश निज, वचन कह्यो नहिं जाय।
तीन भेद व्योहार सब, 'द्यानत' को सुखदाय ॥७॥

ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म निर्मलता

केवल शास्त्र का अध्ययन संसार बन्धन से मुक्त होने का मार्ग नहीं। तोता राम-राम रटता है परन्तु उसके मर्म से अनभिज्ञ ही रहता है। इसी तरह बहुत से शास्त्रों का बोध होने पर भी जिसने अपने हृदय को निर्मल नहीं बनाया उससे जगत का कोई कल्याण नहीं हो सकता।

—'वर्णी वाणी' से

स्वयंभू स्तोत्र भाषा

राजविषै जुगलनि सुख कियो, राज त्याग भवि शिव पद लियो।
स्वयंबोध स्वयंभू भगवान, वंदौं आदिनाथ गुणखान ॥ १ ॥
इन्द्र क्षीरसागर जल लाय, मेरु न्हवाये गाय बजाय।
मदन-विनाशक सुख करतार, वंदौं अजित अजित पदकार ॥ २ ॥
शुक्लध्यान करि करम विनाशि, घाति अघाति-सकल दुखराशि।
लह्यो मुकतिपद सुख अविकार, वदौं सम्भव भव दुखटार ॥ ३ ॥
माता पच्छिम रयन मंझार, सुपने सोलह देखे सार।
भूप पूछि फल सुनि हरपाय, वदौं अभिनन्दन मनलाय ॥ ४ ॥
सब कुवाद वादी सरदार, जीते स्यादवाद-धुनि धार।
जैन-धरम-परकाशक स्वाम, सुमतिदेव-पद करहु प्रणाम ॥ ५ ॥
गर्भ अगाऊ धनपति आय, करी नगर-शोभा अधिकाय।
बरसै रतन पंचदश मास, नमों पदमप्रभु सुखकी रास ॥ ६ ॥
इन्द्र फनिन्द्र नरिंद्र त्रिकाल, वाणी सुनि सुनि होहिं खुस्याल।
द्वादश सभा ज्ञान-दातार, नमों सुपारसनाथ निहार ॥ ७ ॥
सुगुन छियालिस हैं तुम माहि, दोष अठारह कोऊ नाहिं।
मोह-महातम-नाशक दीप, नमों चन्द्रप्रभ राख समीप ॥ ८ ॥
द्वादश विधि तप करम विनाश, तेरह भेद चरित परकाश।
निज अनिच्छ भवि इच्छक दान, वदौं पुहुपदत मन आन ॥ ९ ॥
भवि-सुखदाय सुरगतैं आय, दश विधि धरम कह्यो जिनराय।

आप समान सबनि सुखदेह, वन्दौं शीतल धर्म-सनेह ॥१०॥
समता-सुधा कोप-विष - नाश, द्वादशांगबानी परकाश ।
चार संघ-आनन्द-दातार, नमों श्रेयांस जिनेश्वर सार ॥११॥
रतनत्रय शिर मुकुट विशाल, शोभै कण्ठ सुगुण मणिमाल ।
मुक्ति-नार-भरता भगवान, वासुपूज्य वन्दौं धर ध्यान ॥१२॥
परम समाधि स्वरूप जिनेश, ज्ञानी ध्यानी हित-उपदेश ।
कर्मनाशि शिव-सुख-विलसन्त, वन्दौं विमलनाथ भगवंत ॥१३॥
अन्तर बाहिर परिग्रह डारि, परम दिगम्बर-व्रतको धारि ।
सर्व जीव-हित-राह दिखाय, नमों अनन्त वचन मन लाय ॥१४॥
सात तत्त्व पचासतिकाय, अरथ नवों छ दरब बहु भाय ।
लोक अलोक सकल परकाश, वन्दौं धर्मनाथ अविनाश ॥१५॥
पंचम चक्रवर्ति निधिभोग, कामदेव द्वादशम मनोग ।
शांतिकरन सोलम जिनराय, शांति नाथ वन्दौं हरषाय ॥१६॥
बहु थुति करै हरष नहि होय, निंदे दोष गहै नहिं कोय ।
शीलवान परब्रह्मस्वरूप, वन्दौं कुन्थुनाथ शिव - भूप ॥१७॥
द्वादशगण पूजें सुखदाय, थुति वन्दना करैं अधिकाय ।
जाकी निज-थुति कबहुँ न होय, वदौं अर-जिनवर-पद दोय ॥१८॥
पर-भव रतनत्रय-अनुराग, इह-भव व्याह-समय वैराग ।
बाल-ब्रह्म - पूरन - व्रतधार, वन्दौं मल्लिनाथ जिनसार ॥१९॥
बिन उपदेश स्वयं वैराग, थुति लौकान्त करैं पगलाग ।
नमःसिद्ध कहि सब व्रत लेहिं, वन्दौं मुनिसुव्रत व्रत देहिं ॥२०॥

श्रावक विद्यावंत निहार, भगति-भावसों दियो अहार।
बरसी रतन-राशि तत्काल, वन्दौं नमिप्रभु दीन-दयाल ॥२१॥
सब जीवनकी बन्दी छोर, राग-द्वेष द्वय बन्धन तोर।
रजमति तजि शिव-तियसों मिले, नेमिनाथ वंदौं सुख निले ॥२२॥
दैत्य कियो उपसर्ग अपार, ध्यान देखि आयो फनिधार।
गयो कमठ शठ मुखकर श्याम, नमों मेरुसम पारसस्वाम ॥२३॥
भव-सागरतैं जीव अपार, धरम-पोतमें धरे निहार।
डूबत काढे दया विचार, वर्द्धमान वन्दौं बहुबार ॥२४॥

दोहा—चौवीसों पद कमल जुग, वंदौं मन वच काय।
'द्यानत' पढ़ै सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय ॥

मोक्षमार्ग

- अपने नेत्र बन्द करो और मोक्ष मार्ग हृदय में देखो, यही तत्वज्ञान तुम्हें सिद्ध-पद तक पहुँचा देगा।
- मोक्ष-मार्ग मन्दिर में नहीं, मसजिद में नहीं, गिरजाघर में नहीं, पर्वत-पहाड़ और तीर्थराज में नहीं — इसका उदय तो आत्मा में है।

—'वर्णी वाणी' से

समुच्चय चौबीसी पूजा

वृषभ अजितसंभवअभिनन्दन, सुमतिपदमसुपासजिनराय
चंद पुहुप शीतल श्रेयांस नमि, वासुपूज्य पूजित सुरराय ॥
विमल अनंत धर्म जस उज्ज्वल, शांति कुंथु अर मल्लि मनाय
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्वप्रभु, वर्द्धमान पद पुष्प चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

मुनि-मन-सम उज्ज्वल नीर, प्रासुक गंध भरा ।
भरि कनक-कटोरी धीर दीनी धार धरा ॥
चौबीसों श्रीजिनचन्द, आनन्द-कन्द सही ।
पद जजत हरत भवफंद, पावत मोक्ष-मही ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

गोशीर कपूर मिलाय, केशर-रंग भरी ।
जिन-चरनन देत चढ़ाय, भव-आताप हरी ॥ चौबीसों० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

तन्दुल सित सोम-समान, सुन्दर अनियारे ।
मुक्ता फलकी उनहार, पुञ्ज धरों प्यारे ॥ चौबीसों० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

वर-कञ्ज कदंब कुरंड सुमन सुगन्ध भरे ।
जिन अग्रधरौं गुन-मंड, काम-कलंक हरे ॥ चौबीसों० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

मन-मोहन-मोदक आदि, सुन्दर सद्य बने।
रस-पूरित प्रासुक स्वाद, जजत क्षुधादि हने ॥चौवीसों०॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

तम-खंडन दीप जगाय, धारों तुम आगै।
सब तिमिर मोह क्षय जाय, ज्ञान-कला जागै ॥चौवीसों०॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

दश गन्ध हुताशन-मांहि, हे प्रभु खेवत हों।
मिस धूम करम जरिजाहिं, तुम पद सेवतहों ॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

शुचि पक्क सुरस फल सार, सब ऋतुके ल्यायो।
देखत दृग-मनको प्यार, पूजत सुख पायो ॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा॥ ८ ॥

जल-फल आठों शुचि-सार, ताको अर्घ करों।
तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोच्छ वरों ॥ चौवीसों०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाला दोहा।

श्रीमत तीरथनाथ-पद, माथ नाय हित हेत।
गाऊं गुणमाला अबै, अजर अमर पद देत ॥ १ ॥

घत्ता ।

जय भवतमभञ्जन जनमनकञ्जन, रञ्जन दिनमनि स्वच्छकरा ।
शिवमगपरकाशक अरिगननाशक, चौबीसों जिनराज वरा ॥

पद्धरी छन्द ।

जय ऋषभदेव ऋषिगण नमन्त, जय अजित जीत वसुअरि तुरन्त ।
जय सम्भव भव-भय करत चूर, जय अभिनन्दन आनन्द-पूर ॥१॥
जय सुमति सुमति-दायक दयाल, जय पद्मपद्मदुतितन-रसाल ।
जय जय सुपास भवपासनाश, जय चंद चंद तन दुति प्रकाश ॥२॥
जय पुष्पदन्त दुतिदन्त-सेत, जय शीतल शीतल-गुण-निकेत ।
जय श्रेयनाथ नुत-सहसभुज्ज, जय वासव-पूजित वासुपुज्य ॥३॥
जय विमल विमल-पद-देनहार, जय जय अनन्त गुणगण अपार ।
जय धर्म-धर्म शिव-शर्म देत, जय शान्ति शान्ति-पुष्टी करेत ॥४॥
जय कुंथु कुंथु-आदिक रखेय, जय अर जिन वसु अरि-क्षय करेय ।
जय मल्लि मल्ल हतमोह-मल्ल, जय मुनिसुव्रत व्रत-शल्ल-दल्ल ॥५॥
जय नमि नित वासव-नुत सपेम, जय नेमिनाथ वृष-चक्र-नेम ।
जय पारसनाथ अनाथ-नाथ, जय वर्द्धमान शिव-नगर साथ ॥६॥

घत्ता ।

चौबीस जिनन्दा आनन्द-कन्दा, पाप-निकन्दा सुखकारी ।
तिनपद-जुग-चन्दा उदय अमन्दा, वासव-वन्दा हितकारी ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशति जिनेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरठा—भुक्ति-मुक्ति-दातार, चौबीसों जिनराज वर ।
तिन पद मन वच धार, जो पूजै सो शिव लहै ॥

सप्तऋषि का अर्घ

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सु लावना ।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित अर्घ कीजे पावना ॥
मन्वादिचारणऋद्धिधारक, मुनिन की पूजा करूँ ।
ताकरें पातक हरें सारे, सकल आनन्द विस्तरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिचारण [illegible] निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

व्रतों का अर्घ

उदक चन्दन तन्दुल पुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवल मंगल गानरवाकुले जिनगृहे जिनव्रतमहंयजे ॥

ॐ ह्रीं [illegible] निर्वपामीति स्वाहा ।

समुच्चय अर्घ

प्रभुजी अष्ट द्रव्यजु ल्यायो भावसों ।
प्रभु थांका हर्ष-हर्ष गुण गाऊँ महाराज ॥
यो मन हरग्यो प्रभु थांकी पूजाजी रे कारणे ।
प्रभुजी थांकी तो पूजा भविजन नित करें ॥
जाका अशुभ कर्म कट जाय महाराज यो मन० ॥
प्रभुजी थांकी तो पूजा भवि जीव जो करें ।
सो तो सुरग मुकतिपद पावे महाराज ॥ यो मन० ॥

प्रभुजी इन्द्र धरणेन्द्रजी सब मिल गाय ।
प्रभु का गुणां को पार न पाइया ॥
प्रभुजी थे छो जी अनन्ताजी गुणवान ।
थाने तो सुमर्यां संकट परिहरं ॥
प्रभुजी थे छो जी साहिब तीनों लोकका ।
जिनराय मैं छू जी निपट अज्ञानी महाराज ॥ यो मन० ॥
प्रभुजी थांका तो रूपजु निरखन कारणे ।
सुरपति रचिया छै नयन हजार महाराज ॥ यो मन० ॥
प्रभुजी नरक निगोदमें भव-भव मैं रुल्यो ।
जिनराज सहिया छै दुःख अपार महाराज ॥ यो मन० ॥
प्रभुजी अब तो शरणोजी थारो मैं लियो ।
किस विधि कर पार लगावो महाराज ॥ यो मन० ॥
प्रभुजी म्हारौ तो मनड़ो थांमे घुल रह्यो ।
ज्यों चकरी विच रेशम डोरी महाराज ॥ यो मन० ॥
प्रभुजी तीन लोक में है जिन बिम्ब ।
कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालय पूजस्यां ॥
प्रभुजी जल चन्दन अक्षत पुष्प नैवेद ।
दीप धूप फल अर्घ चढ़ाऊँ महाराज ॥

जिन चैत्यालय महाराज, सब चैत्या० जिनराज ॥ यो०
प्रभुजी अष्ट द्रव्य जु ल्यायो बनाय ।
पूजा रचाऊं श्री भगवान की ॥

ॐ ह्रीं [illegible] करो [illegible] अर्हन्त सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधु पंचपरमेष्ठिभ्यो नमः। [illegible] गुणेभ्यो नमः। दर्शन विशुद्ध्यादि षोडश कारणेभ्यो नमः। उत्तम क्षमादि दश लाक्षणिक धर्मेभ्यो नमः। सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रेभ्यो नमः। [illegible] में [illegible] में [illegible] में गुफा में [illegible] पहाड़ में [illegible] [illegible] विराजमान कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालयेभ्यो नमः। विदेहक्षेत्रे विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो नमः। [illegible] चौबीस [illegible] त्रिकालवर्ती [illegible] नमः। नन्दीश्वर द्वीपस्थ बावन जिन चैत्यालयेभ्यो नमः। पंचमेरु सम्बन्धि अस्सी जिन चैत्यालयेभ्यो नमः। सम्मेद शिखर कैलाश चम्पापुर पावापुर गिरनार आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः। [illegible] केवली [illegible] महावीर स्वामी [illegible] स्वामी आदि आचार्येभ्यो नमः। [illegible] ऋद्धिधारी सर्व परमेष्ठिभ्यो नमः।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालसन्तं वृषभादि महावीर पर्यन्त चतुर्विंशति तीर्थंकर परमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे ······ नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे मासे ······ मासे शुभे ···· पक्षे शुभ ··· ··· तिथौ ··· ·· वासरे मुनि आर्यिकानां श्रावक श्राविकानां [illegible] सकल कर्म क्षयार्थं (जलधारा) अनर्घ्य पदं निर्वपामि स्वाहा।

भाव पूजा [illegible] सहित श्रीपंचमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्। 'यहां पर कायोत्सर्गपूर्वक नौबार णमोकार मन्त्र जपना चाहिये।

शान्ति पाठ भाषा

चौपाई ।

शांतिनाथ मुख शशि उनहारी, शील-गुणव्रत-संयमधारी ।
लखन एक सौ आठ विराजैं, निरखत नयन कमलदल लाजैं ॥
पञ्चम चक्रवर्तिपद धारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी ।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिन नायक, नमो शांतिहित शांति विधायक ॥
दिव्य विटप पहुपनकी वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा ।
छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ॥
शांति जिनेश शांति सुखदाई, जगत्पूज्य पूजौं शिर नाई ।
परम शांति दीजै हम सबको, पढ़ैं तिन्हें पुनि चार संघको ॥

वसन्ततिलका ।

पूजैं जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके ।
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके ॥
सो शान्तिनाथ वरवंश जगत्प्रदीप ।
मेरे लिये करहिं शान्ति सदा अनूप ॥

इन्द्रवज्रा ।

संपूजकोंको प्रतिपालकोंको यतीनको औ यतिनायकोंको ।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले, कीजै सुखी हे जिन शांतिको दे ॥

स्रग्धरा छन्द।

होवें सारी प्रजाको सुख बलयुत हो धर्मधारी नरेशा।
होवे वर्षा समैपै तिल भर न रहै व्याधियोंका अन्देशा॥
होवे चौरी न जारी सुसमय वरतै हो न दुष्काल भारी।
सारे ही देश धारैं जिनवर-वृषको जो सदा सौख्यकारी॥

दोहा—घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज।
शांति करो सब जगतमें, वृषभादिक जिनराज॥

मन्दाक्रान्ता।

शास्त्रों का हो पठन सुखदा लाभ सत्संगती का।
सद्वृत्तों का सुजस कहके, दोष ढांकूं सभी का॥
बोलूं प्यारे वचन हितके, आप का रूप ध्याऊँ।
तौलौं सेऊँ चरण जिनके मोक्ष जौलौं न पाऊँ॥

आर्या।

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में।
तबलौं लीन रहौं प्रभु, जबलौं पाया न मुक्ति पद मैंने॥
अक्षर पद मात्रासे दूषित जो कुछ कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणाकरि पुनि छुड़ाहु भव दुखसे॥
हे जगबन्धु जिनेश्वर! पाऊँ, तव चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मोंका क्षय सुबोध सुखकारी॥

पुष्पाञ्जलि क्षेपण।

भजन

नाथ ! तोरी पूजाको फल पायो, मेरे यो निश्चय अब आयो ।।टेक।।
मेंढ़क कमल पाखडी मुखमें, वीर जिनेश्वर धायो ।
श्रेणिक गजके पगतल मूवो, तुरत स्वर्गपद पायो ।। नाथ० ।। १ ।।
मैना सुन्दरी शुभ मन सेती, सिद्धचक्र गुण गायो ।
अपने पतिको कोढ गमायो, गंधोदक फल पायो ।। नाथ० ।। २ ।।
अष्टापद में भरत नरेश्वर, आदिनाथ मन लायो ।
अष्टद्रव्य से पूजा प्रभुजी, अवधिज्ञान दरशायो ।। नाथ० ।। ३ ।।
अञ्जनसे सब पापी तारे, मेरो मन हुलसायो ।
महिमा मोटी नाथ तुमारी, मुक्तिपुरी सुख पायो ।। नाथ० ।। ४ ।।
थकी थकी हारे सुर नर पति, आगम सीख जितायो ।
'देवकीर्ति' गुरु ज्ञान मनोहर, पूजा ज्ञान बतायो ।। नाथ० ।। ५ ।।

भाषा स्तुति

तुम तरण-तारण भव-निवारण, भविकमन आनन्दनो ।
श्रीनाभिनन्दन जगतवन्दन, आदिनाथ निरञ्जनो ।। १ ।।
तुम आदिनाथ अनादि सेऊं, सेय पद पूजा करूँ ।
कैलाश गिरिपर ऋषभ जिनवर, पद कमल हिरदै धरूं ।। २ ।।
तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्ट कर्म महाबली ।

यह विरद सुन कर शरण आयो, कृपा कीज्यो नाथजी ॥ ३ ॥
तुम चन्द्रवदन सु चन्द्रलञ्छन, चन्द्रपुरि परमेश्वरो ।
महासेननन्दन जगतवन्दन, चन्द्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥
तुम शान्ति पांच कल्याण पूजों, शुद्ध मन वच काय जू ।
दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पलाय जू ॥ ५ ॥
तुम बालब्रह्म विवेक-सागर, भव्य-कमल विकाशनो ।
श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पाप-तिमिर विनाशनो ॥ ६ ॥
जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसेना वश करी ।
चारित्ररथ चढ़ि भये दूलह, जाय शिव-रमणी वरी ॥ ७ ॥
कन्दर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मद कियो ।
अश्वसेननन्दन जगतवन्दन, सकल संघ मंगल कियो ॥ ८ ॥
जिनधरी बालकपणे दीक्षा, कमठ-मान विदारकैं ।
श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रके पद, मैं नमों शिर धारकैं ॥ ९ ॥
तुम कर्मघाता मोक्षदाता, दीन जानि दया करो ।
सिद्धार्थनन्दन जगतवन्दन महावीर जिनेश्वरो ॥ १० ॥
छत्र तीन सोहैं सुरनर मोहैं, बीनती अब धारिये ।
कर जोड़ सेवक वीनवै, प्रभु आवागमन निवारिये ॥ ११ ॥
अब होउ भव भव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहौं ।
कर जोड़ यो वरदान मांगू, मोक्षफल जावत लहौं ॥ १२ ॥
जो एक मांहीं एक राजै, एक मांहि अनेकनो ।
इक अनेक की नहिं संख्या नमूं सिद्ध निरञ्जनो ॥ १३ ॥

मैं तुम चरण-कमल गुणगाय, बहुविधि भक्ति करी मनलाय।
जनम जनम प्रभु पाऊ तोहि, यह सेवा-फल दीजै मोहि ॥ १४ ॥
कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरण मिटावो मोय।
बार-बार मैं विनती करूं, तुम सेवा भवसागर तरूं ॥ १५ ॥
नाम लेत सब दुःख मिट जाय, तुम दर्शन देख्यो प्रभु आय।
तुम हो प्रभु देवन के देव, मैं तो करूं चरण तव सेव ॥ १६ ॥
जिन पूजा तैं सब सुख होय, जिन पूजा सम अवर न कोय।
जिन पूजा तैं स्वर्ग विमान, अनुक्रम तैं पावै निर्वाण ॥ १७ ॥
मैं आयो पूजन के काज, मेरो जन्म सफल भयो आज।
पूजा करके नवाऊं शीश, मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥ १८ ॥
दोहा—सुख देना दुःख मेटना, यही तुम्हारी बान।
मो गरीब की बीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥ १९ ॥
पूजन करते देव की, आदि मध्य अवसान।
सुरगनके सुख भोग कर, पावै मोक्ष निदान ॥ २० ॥
जैसी महिमा तुम विषैं, और धरै नहि कोय।
जो सूरज मे जोति है, नहिं तारागण सोय ॥ २१ ॥
नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमांहि पलाय।
ज्यों दिनकर परकाशतैं, अन्धकार विनशाय ॥ २२ ॥
बहुत प्रशसा क्या करू, मैं प्रभु बहुत अजान।
पूजाविधि जानू नही, शरण राखि भगवान ॥ २३ ॥

विसर्जन

बिन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय।
तुम प्रसाद तैं परमगुरु, सो सब पूरन होय॥१॥
पूजनविधि जानों नहीं, नहिं जानों आह्वान।
और विसर्जन हू नहीं, क्षमा करहु भगवान॥२॥
मन्त्रहीन धनहीन हूं, क्रियाहीन जिनदेव।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव॥३॥
आये जो-जो देवगण, पूजे भक्ति प्रमान।
ते सब जावहु कृपा कर, अपने-अपने थान॥४॥

आशिका लेने का मन्त्र

श्री जिनवर की आशिका, लीजे शीश चढ़ाय।
भव-भव के पातक कटें, दुःख दूर हो जाय॥ १ ॥

[illegible] स्तुति - दोहा

इह-धर्मांबुज-वन-रवि [illegible] भवि-[illegible] [illegible]
[illegible] कवि. नमत

निर्वाणक्षेत्र पूजा

परमपूज्य चौवीस, जिहँ जिहँ थानक शिव गये।
सिद्धभूमि निशदीस, मन वच तन पूजा करौं ॥

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट्।

गीता छन्द।

शुचि छीर-दधि-सम नीर निरमल, कनक-झारीमें भरौं।
संसार पार उतार स्वामी, जोर कर विनती करौं ॥
सम्मेदगढ़ गिरनार चम्पा, पावापुरि कैलाशकों।
पूजौं सदा चौवीस जिन, निर्वाणभूमि-निवासकों ॥

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

केशर कपूर सुगन्ध चन्दन, सलिल शीतल विस्तरौं।
भव-तापको सन्ताप मेटो, जोर कर विनती करौं ॥स०

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

मोती-समान अखण्ड तन्दुल, अमल आनन्द धरि तरौं।
औगुन हरौ गुण करौ हमको, जोर कर विनती करौं ॥ स०

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

शुभ फूल-रास सुवास-वासित, खेद सब मनकी हरौं।

दुख-धाम-काम विनाश मेरो, जोर कर विनती करौं ॥स०

ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवज अनेकप्रकार जोग, मनोग धरि भय परिहरौं।

यह भूख-दुखन टार प्रभुजी, जोर कर विनती करौं ॥स०

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा॥ ५ ॥

दीपक-प्रकाश उजास उज्ज्वल, तिमिरसेती नहिं डरौं।

संशय-विमोह-विभरम-तम-हर, जोर कर विनती करौं ॥स०

ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

शुभ-धूप परम-अनूप पावन, भाव पावन आचरौं।

सब करम-पुञ्ज जलाय दीज्यो, जोर कर विनती करौं ॥स०

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

बहु फल मंगाय चढ़ाय उत्तम, चार गतिसों निरवरौं।

निहचै मुकति-फल देहु मोको, जोर कर विनती करौं ॥स०

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु फल, दीप धूपायन धरौं।

'द्यानत' करो निरभय जगतसों, जोर कर विनती करौं ॥स०

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाला दोहा

श्रीचौबीस जिनेश, गिरि कैलाशादिक नमों।

तीरथ महाप्रदेश, महापुरुष निरवाणतैं ॥

चौपाई १६ मात्रा

नमों ऋषभ कैलाशपहारं. नेमिनाथ गिरनार निहारं।
वासुपूज्य चम्पापुर वन्दौं, सन्मति पावापुर अभिनन्दौं ॥१॥
वन्दौं अजित अजित-पद-दाता. वन्दौं सम्भव भव-दुःख-घाता।
वन्दौं अभिनन्दन गण-नायक, वन्दौं सुमति सुमतिके दायक ॥२॥
वन्दौं पदम मुकति-पदमाकर, वन्दौं सुपास आश-पासाहर।
वन्दौं चन्द्रप्रभु प्रभुचन्दा, वन्दौं सुविधि सुविधि-निधि-कन्दा ॥३॥
वन्दौं शीतल अघ-तप-शीतल, वन्दौं श्रेयांस श्रेयांस महीतल।
वन्दौं विमल विमल उपयोगी, वन्दौं अनंत अनंत-सुखभोगी ॥४॥
वन्दौं धर्म धर्म-विस्तारा, वन्दौं शान्ति शान्ति-मन-धारा।
वन्दौं कुंथु कुंथु-रखवालं. वन्दौं अर अरि-हर गुणमालं ॥५॥
वन्दौं मल्लि काम-मल-चूरन. वन्दौं मुनिसुव्रत व्रत-पूरन।
वन्दौं नमि-जिन नमित-सुरासुर. वंदौं पार्श्व पार्श्व भ्रम-जग-हर ॥६॥
बीसों सिद्धभूमि जा ऊपर. शिखरसम्मेद-महागिरि भूपर।
एकबार वंदै जो कोई, ताहि नरक-पशु-गति नहिं होई ॥७॥
नरपतिनृप सुर शक्र कहावे. तिहुं जग-भोग भोगि शिव पावे।
विघन-विनाशन मंगलकारी, गुण-विलास वन्दौं भवतारी ॥८॥
घत्ता—जो तीरथ जावै पाप मिटावै, ध्यावै गावै भगति करै।
ताको जस कहिये संपति लहिये, गिरिके गुण को बुध उचरै ॥

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदिनाथजिन पूजा

नाभिराय मरुदेविके नन्दन, आदिनाथ स्वामी महाराज।
सर्वार्थसिद्धिते आप पधारे, मध्यलोकमांही जिनराज ॥
इन्द्रदेव सब मिलकर आये, जन्म महोत्सव करने काज।
आह्वानन सब विधि मिल करके, अपने कर पूजे प्रभु आज ॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक।

क्षीरोदधिका उज्ज्वल जल ले, श्रीजिनवरपद पूजन जाय।
जन्म-जरा दुःख मेटन कारन, ल्याय चढ़ाऊं प्रभुके पाय ॥
श्रीआदिनाथके चरण-कमलपर, बलि-बलि जाऊं मनवचकाय।
हो करुणानिधि भव दुःख मेटो. यातै मैं पूजों प्रभु पाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मलयागिरि चंदन दाह निकंदन, कञ्चन झारीमें भर ल्याय।
श्रीजीकेचरणचढ़ावोभविजन भवआतापतुरत मिटिजाय।श्री०

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

शुभशालिअखंडित सौरभिमंडित,प्रासुक जलसों धोकर ल्याय।
श्रीजीकेचरण चढावोभविजन अक्षयपदको तुरतउपाय ॥श्री०

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

कमल केतकी बेल चमेली, श्रीगुलावके पुष्प मंगाय ।
श्रीजीकेचरणचढावोभविजन,कामवाणतुरत नसिजाय॥श्री०

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय कामवाणविध्वसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवज लीना षट् रस भीना, श्रीजिनवर आगे धरवाय ।
थाल भराऊँ क्षुधा नशाऊँ, ल्याऊँ प्रभुके मंगल गाय ॥श्री०

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

जगमग-जगमग होत दशोंदिशि,ज्योति रही मन्दिरमें छाय।
श्रीजीके सन्मुखकरत आरती, मोहतिमिरनासै दुखदाय ॥श्री०

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा । ॥ ६ ॥

अगर कपूर सुगन्ध मनोहर, तगर कपूर सुद्रव्य मिलाय।
श्रीजीकेसन्मुखखेय धुपायन,कर्मजरेचहुँगतिमिटिजाय॥श्री०

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल और बदाम सुपारी, केला आदि छुहारा ल्याय ।
महामोक्षफल पावन कारण, ल्याय चढ़ाऊँ प्रभुके पाय ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

शुचि निरमल नीरं गंध सुअक्षत, पुष्प चरू ले मन हर्षाय ।
दीप धूप फल अर्घ सु लेकर, नाचत ताल मृदङ्ग बजाय ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

पञ्चकल्याणक ।

सर्वार्थसिद्धितैं चये, मरुदेवी उर आय ।
दोज असित आषाढ़की, जजूं तिहारे पाय ॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति॰

चैत वदी नौमी दिना, जन्म्या श्रीभगवान ।
सुरपति उत्सव अति करया, मैं पूजों धर ध्यान ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति॰ ।

तृणवत ऋद्धि सब छोड़िके, तप धार्यो वन जाय ।
नौमी चैत्र असेत की, जजूं तिहारे पाय ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपोमंगलप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति॰ ।

फाल्गुण वदि एकादशी, उपज्यो केवलज्ञान ।
इन्द्र आय पूजा करी, मैं पूजों इह थान ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णएकादश्यां ज्ञानमंगलप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं॰ ।

माघ चतुर्दशि कृष्णकी, मोक्ष गये भगवान ।
भवि जीवोंको बोधिके, पहुँचे शिवपुर थान ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं॰ ।

जयमाला ।

आदीश्वर महाराज मैं विनती तुमसों करूं ।
चारों गतिके मांहि मैं दुःख पायो सो सुनो ॥

अष्टकरम मैं एकलो, ये दुष्ट महादुःख देत हो।
कबहूं इतर निगोदमें मोकूं पटकत करत अचेत हो॥
म्हारी दीनतनी सुन वीनती॥
प्रभु कबहुंक पटक्या नरकमें, जठै जीव महादुःख पाय हो।
नित उठि निरदई नारकी, जठै करत परस्पर घात हो॥ म्हारी०॥
प्रभु नरकतणा दुःख अब कहूं, जठै करें परस्पर घात हो।
कोइयक बांध्यो खंभसों, पापी दे मुद्गरकी मार हो॥ म्हारी०॥
कोइयक काटें करोंतसों, पापी अङ्गतणी दोय फाड़ हो।
प्रभु इह विधि दुःख भुगत्या घणा, फिर गति पाई तिर्यञ्च हो। म्हारी०॥
हिरणा बकरा बाछड़ा पशु दीन गरीब अनाथ हो।
प्रभु मैं ऊट बलद भैंसा भयो, ज्यांपै लदियो भार अपार हो॥ म्हारी०॥
नहिं चाल्यो जठै गिर पर्यो, पापी दे सोटन की मार हो।
प्रभु कोइयक पुण्य संजोगसूं, मैं पायो स्वर्ग निवास हो॥ म्हारी०॥
देवांगना संग रमि रह्यो, जठै भोगनिको परिताप हो।
प्रभु संग अप्सरा रमि रह्यो, कर कर अति अनुराग हो॥ म्हारी०॥
कबहुंक नन्दन-वन विषै प्रभु, कबहुंक वन-गृह मांहि हो।
प्रभु इह विधि काल गमायकै, फिर माला गई मुरझाय हो॥ म्हारी०
देव तिथी सब घट गई, फिर उपज्यो सोच अपार हो।
सोच करत तन खिर पड्यो, फिर उपज्योगर्भमें जाय हो॥ म्हारी०॥
प्रभु गर्भतणा दुःख अब कहूं, जठै सकडाई की ठौर हो।
हलन-चलन नहि कर सक्यो, जठै सघन कीच घनघोर हो॥ म्हारी०॥

माता खावै चरपरौ, फिर लागै तन सन्ताप हो।
प्रभु ज्यों जननी तातो भखै,फिर उपजै तन सन्ताप हो ॥ म्हारी०॥
औंधे मुख झूल्यो रह्यो, फेर निकसन कौन उपाय हो।
कठिन कठिन कर नीसर्यो, जैसे निसरै जंती में तार हो ॥ म्हारी०
प्रभु फिर निकसत धरत्यां पड्यो, फिर लागी भूख अपार हो।
रोय रोय विलख्यो घणो, दुख वेदनको नहिं पार हो ॥ म्हारी०
प्रभु दुख मेटन समरथ धनी, यातैं लागू तिहारे पांय हो।
सेवक अरज करै प्रभु ! मोकू भवोदधि पार उतार हो ॥ म्हारी०

दोहा—श्रीजीकी महिमा अगम है, कोई न पावै पार।
मैं मति अल्प अज्ञान हो, कौन करै विस्तार ॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—विनती ऋषभ जिनेशकी, जो पढ़सी मनलाय।
स्वर्गोंमें संशय नहीं, निश्चय शिवपुर जाय ॥

इत्याशीर्वाद ।

श्रीचन्द्रप्रभके पूर्वभव गीत ।

श्रीवर्मा भूपति पालि पुहमी, स्वर्ग पहले सुरभयौ।
पुनि अजितसैन छखन्डनायक, इन्द्र अच्युत में थयौ ॥
वर परम नाभिनरेश निर्जर, वैजयंति विमानमें।
चन्द्राभस्वामी सातवैं भव, भये पुरुप पुरानमें ॥

श्री चन्द्रप्रभु पूजा

चारित चंद्र चतुष्टय मंडित चारि प्रचंड अरी चकचूरे।
चन्द्र विराजित चर्णविषै यह चंद्रप्रभा सम है अनुपूरे।
चारु चरित चकोरनके चित चोरन चंद्रकला वहु सूरे।
सो प्रभुचंद्र समंतगुरुचित चिंतत ही सुख होय हुजूरे॥

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र। अत्र अवतर अवतर सवौषट्।

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेद्र। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

पद्म द्रह सम उज्जल जल ले शीतलता अधिकाई।
जन्म जरा दुःख दूर करनको जिनवर पूज रचाई॥
चञ्चल चितको रोकि चतुर्गति चक्रभ्रमण निरवारो।
चारु चरण आचरण चतुर नर चंद्रप्रभू चित धारो॥

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

मलिया-गिरवर बावन चंदन केशरि संग घसाओ।
भव आताप निवारन कारण श्रीजिन चरणचढ़ाओ॥चं०

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

चन्द्र किरण सम श्वेत मनोहर खंड विवर्जित सोहै।
ऐसे अक्षतसों प्रभु पूजौं जग जीवन मन मोहै॥ चं०

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

सुरतरुके शुचि पुष्प मनोहर बरन २ के लावो।
काम दाह निरवारन कारण श्रीजिनचरण चढ़ावो ॥चं०

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नाना विधिके व्यञ्जन ताजे स्वच्छ अदोष बनावो।
रोग क्षुधा दुःख दूर करनको श्रीजिनचरण चढ़ावो ॥चं०॥

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

कनक रतनमय दीप मनोहर उज्ज्वल ज्योति जगावो।
मोहमहातम नाश करनको जिनवर चरण चढ़ावो ॥ चं०॥

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

दशविधि धूप हुताशन माहीं खेय सुगंध बढ़ावो।
अष्ट करमके नाश करनको श्रीजिनचरण चढ़ावो ॥ चं०॥

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

नाना विधिके उत्तम फल लै तनमनको सुखदाई।
दुःख निवारण शिवफल कारण पूजों श्रीजिनराई ॥ चं०॥

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षपदप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

वसुविधि अर्घ बनाय मनोहर श्रीजिनमंदिर जावो।
अष्टकर्मके नाश करनको श्रीजिनचरण चढ़ावो ॥ चं०॥

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

पञ्चकल्याणक, कुसुमलता छन्द ।

चैत्र प्रथम पंचम दिन जानों, गर्भागम मंगल गुणखान ।
मात लक्ष्मणाके उर आए,तजि दिवलोक चन्द्र भगवान ॥
षट नवमास रतन वरषाए, इन्द्र-हुकुमतें धनद महान ।
तिनके चरण कमल मैं पूजूं, अर्घ चढ़ाय करूं नित ध्यान ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपञ्चम्यां गर्भमंगलप्राप्ताय श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं ।

पौष वदी ग्यारसको जन्मे, चंद्रपुरी जिनचन्द्र महान ।
महासेन राजाके प्यारे, सकल सुरासुर मानें आन ॥
सुरगिरिपर अभिषेककियो हरि, चतुरनिकायदेव सबआन
सो जिनचंद्र जयो जगमांही, अर्घ चढ़ाय करूँ नित ध्यान ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं ।

पौष वदी ग्यारस तप लीनों, जानों जगत अथिर दुखदान ।
राजत्यागि वैराग धरो, वन जाय कियौ आतम कल्यान ॥
सुरनर खग मिलि पूज रचाई, मनमें अतिही आनंद मान ।
ऐसे चंद्रनाथ जिनवरको अर्घ चढ़ाय करूँ नित ध्यान ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं ।

फाल्गुन वदी सप्तमी जानों, चार घातिया घाति महान ।
सकल सुरासुर पूजि जगतपति,पायो तिहि दिन केवलज्ञान॥

समवशरन महिमा हरि कीनी दीनी दृष्टि चरण निजआन ।
ऐसे चंद्रनाथ जिनवरको, अर्घ चढ़ाय करूँ नित ध्यान ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

सातें बदि फाल्गुनके महिना, संमेदाचल शृङ्ग महान ।
ललितकूट ऊपर जगपतिने, पायो आतम शिव कल्यान ॥
सुरसुरेश मिलि पूज रचाई, गायो गुण हर्षित जिय ठान ।
सुगुरु समन्त भद्रके स्वामी. देहु जिनेश्वर को सतज्ञान ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जयमाला

दोहा—अष्टम क्षितिपति तुम धनी, अष्टम तीरथराय ।
अष्टम पृथ्वी कारने, नमूं अङ्ग वसु नाय ॥ १ ॥

चाल— अहो जगतगुरु' की ।

अहो चन्द्र जिनदेव तुम जगनायक स्वामी ।
अष्टम तीरथराज, हो तुम अन्तरयामी ॥ १ ॥
लोकालोक मझार, जड चेतन गुणधारी ।
द्रव्य छहू अनिवार पर्यय शक्ति अपारी ॥ २ ॥
तिहि सबको इकबार जानें ज्ञान अनन्ता ।
ऐसो ही सुखकार दर्शन है भगवन्ता ॥ ३ ॥
तीनलोक तिहुँकाल ज्ञायक देव कहावो ।
निरबाधा सुखसार तिहि शिवथान रहावौ ॥ ४ ॥

हे प्रभु ! या जगमांहि मैं बहुते दुःख पायौ ।
कहन जरूर तें नाहिं तुम सबही लखि पायौ ॥ ५ ॥
कबहूं नित्य निगोद कबहूं नर्क मंझारी ।
सुरनर पशुगति मांहि दुक्ख सहे अति भारी ॥ ६ ॥
पशुगतिके दुःख देव ! कहत बड़े दुःख भारी ।
छेदन भेदन त्रास शीत उष्ण अधिकारी ॥ ७ ॥
भूख प्यासके जोर सबल पशु हनि मारै ।
तहां वेदना घोर हे प्रभु कौन सम्हारै ॥ ८ ॥
मानुष गतिके मांहि यद्यपि है कछु साता ।
तोहू दुःख अधिकाय क्षणक्षण होत असाता ॥ ६ ॥
धन जोवन सुत नारि सम्पति और घनेरी ।
मिलत हरष अनिवार बिछुरत विपत घनेरी ॥१०॥
सुरगति इष्ट वियोग पर सम्पति लखि झूरै ।
मरण चिन्ह संयोग उर विकलप बहु पूरै ॥११॥
यों चारों गति मांहि दुःख भरपूर भरौ है ।
ध्यान धरौ मनमांहि यातैं काज सरौ है ॥१२॥
कर्म महादुःख साज याको नाश करौ जी ।
बड़े गरीब निवाज मेरी आश भरौजी ॥१३॥
समन्तभद्र गुरुदेव ध्यान तुम्हारो कीनों !
प्रगट भयौ जिनवीर जिनवर दर्शन कीनों ॥१४॥

जब तक जगमें वास तबतक हिरदे मेरे।

कहत जिनेश्वरदास शरण गहों मैं तेरे ॥१५॥

दोहा—जग जयवन्ते होहु जिन, भरो हमारी आस।

जय लक्ष्मी जिन दीजिये, कहत जिनेश्वर दास ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल छन्द।

वर्तमान जिनराय भरत के जानिये।

पञ्चकल्याणक मानि गये शिवथानिये ॥

जो नर मन वच काय प्रभू पूजै सही।

सो नर दिव सुख पाय लहै अष्टम मही ॥

इत्याशीर्वाद पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्रद्धा

- जो मनुष्य बुद्धिपूर्वक श्रद्धागुण को अपनायेगा, उसे कोई भी शक्ति संसार में नहीं रोक सकती।
- कुछ भी करो श्रद्धा न छोड़ो। श्रद्धा ही संसारातीत अवस्था की प्राप्ति में सहायक होती है। श्रद्धा बिना आत्मतत्व की उपलब्धि नहीं होती।
- जिन जीवों को सम्यग्दर्शन हो गया है, उन्हें साता-असाता कर्म का उदय चञ्चल नहीं करता।

—'वर्णी वाणी' से

श्रीशान्तिनाथजिन-पूजा

मत्तगयद छद । (यमकालकार)

या भव-काननमें चतुरानन, पाप-पनानन घेरि हमेरी ।
आतम-जान न मान न ठान न, वान न होन दई सठ मेरी ॥
ता मद्-भानन आपहि हो यह, छान न आन न आनन टेरी ।
आन गही शरनागतको, अब श्रीपतजी पत राखहु मेरी ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ ।
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

छद त्रिभगी । अनुप्रयासक । (मात्रा ३२ जगणवर्जित) ।

हिमगिरि-गत-गंगा धार अभंगा, प्रासुक संगा भरि भृङ्गा ।
जर-मरन - मृतंगा नाशि अघंगा, पूजि पदंगा मृदुहिंगा ॥
श्रीशान्ति - जिनेशं, नुत - शक्रेशं वृपचक्रेशं, चक्रेशं ।
हनि अरि - चक्रेशं, हे गुनधेशं, दयामृतेशं, मक्रेशं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

वर बावन-चंदन, कदली-नंदन, घन-आनदन, सहित घसों ।
भव-ताप-निकंदन, ऐरा-नंदन, वंदि अमंदन, चरन वसों ॥ श्री०

ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ।

हिमकर करि लज्जत, मलय सुसज्जत, अच्छत जज्जत, भरिथारी ।
दुख-दारिद-गज्जत, सद-पद-सज्जत, भव-भय-भज्जत, अतिभारी ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

मंदार सरोजं, कदली जोजं, पुञ्ज भरोजं, मलयभरं।
भरि कंचन-थारी, तुम ढिग धारी, मदन-विदारी, धीर-धरं ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान नवीने, पावन कीने, षट रस भीने, सुखदाई।
मन-मोदन-हारे, छुधा विदारे, आगे धारे, गुन गाई ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम ज्ञान प्रकाशे, भ्रम-तम नाशे, ज्ञेय विकाशे, सुखरासे।
दीपक उजियारा, यातैं धारा, मोह निवारा, निज भासे ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन करपूरं, करि वर चूरं, पावक भूरं, माहि जुरं।
तसु धूम उड़ावै, नाचत आवै, अलि गुंजावै, मधुर सुरं ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम खजूरं, दाड़िम पूरं, निंबुक भूरं, लै आयो।
तासों पद जज्जों, शिवफल सज्जों, निज-रस-रज्जों, उमगायो ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु द्रव्य संवारी, तुम ढिग धारी, आनंदकारी, दृग-प्यारी।
तुम हो भवतारी, करुना-धारी, यातैं थारी, शरनारी ॥ श्री०

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक

सुन्दरी तथा द्रुतविलम्बित छंद।

असित सातय भादव जानिये, गरभ-मंगल ता दिन मानिये।
सचि कियो जननी-पद चर्चनं, हम करैं इत ये पद अर्चनं ॥

ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घं०।

जनम जेठ चतुर्दशि श्याम है, सकल इन्द्र सु आगत धाम है।
गजपुरै गज साजि सबै तबै, गिरि जजे इत मैं जजि हों अबै।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्या जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घं०।

भव शरीर सुभोग असार हैं, इमि विचार तबै तप धार हैं।
भ्रमर चौदश जेठ सुहावनी, धरम-हेत जजों गुन-पावनी।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्या निष्क्रमणमहोत्सवमण्डिताय श्रीशान्तिजिनेन्द्राय अर्घं०।

शुकल पौष दशैं सुख-राश है, परम केवल-ज्ञान प्रकाश है।
भव-समुद्र-उधारन देवकी, हम करैं नित मंगल सेवकी॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लदशम्या केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घं०।

असित चौदश जेठ हने अरी, गिरि समेद थकी शिव-ती वरी।
सकल-इन्द्र जजैं तित आइकैं, हम जजैं इत मस्तक नाइकैं॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्या मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घं०।

जयमाला

शान्ति शान्ति-गुन-मंडिते सदा, जाहि ध्यावतें सुपंडिते सदा।
मैं तिन्हें भगत-मंडिते सदा, पूजि हों कलुष-हंडिते सदा॥
मोक्ष-हेत तुम ही दयाल हो, हे जिनेश गुन-रत्न-माल हो।
मैं अबै सुगुन-दाम ही धरों, ध्यावते तुरित मुक्ति-ती वरों॥

पद्धरि छन्द।

जय शान्तिनाथ चिद्रूपराज, भव-सागरमें अद्भुत जहाज।
तुम तजि सरवारथसिद्ध थान, सरवारथ-जुत गजपुर महान।
तित जनम लियौ आनंद धार, हरि ततछिन आयो राज-द्वार।
इन्द्रानी जाय प्रसूत-थान, तुमको करमें लै हरष मान॥

हरि गोद देय सो मोद धार, सिर चमर अमर ढारत अपार।
गिरिराज जाय तित शिला पांड, तापै थाप्यो अभिषेक मांड ॥
तित पंचम उदधितनों सु वार, सुरकर कर करि ल्याये उदार।
तब इन्द्र सहस-कर करि अनंद, तुम सिर-धारा ढारी सुनंद ॥
अघ घघ घघघघ धुनि होत घोर, भभभभभभ धधधध कलश शोर।
दम दम दम दम बाजत मृदंग, झन नननन नननन नूपुरंग ॥
तन नन नन नन नन तनन तान, घन नन नन घंटा करत ध्वान।
ताथेइ थेइ थेइ थेइ थेइ सुचाल, जुत नाचत नावत तुमहिं भाल ॥
चट चट चट अटपट नटत नाट, झट झट झट हट नट शट विराट।
इमि नाचत राचत भगत रंग, सुर लेत तहाँ आनंद संग ॥
इत्यादि अतुल मंगल सुठाट, तित बन्यो जहाँ सुरगिरि विराट।
पुनि करि नियोग पितु, सदन आय, हरि सौंप्यो तुम तित वृद्ध थाय ॥
पुनि राजमाहिं लहि चक्र-रत्न, भोग्यो छ खंड करि धरम जत्न।
पुनि तप धरि केवल-ऋद्धि पाय, भवि जीवनकों शिव-मग बताय ॥
शिवपुर पहुँच तुम हे जिनेश, गुन-मंडित अतुल अनन्त भेष।
मैं ध्यावतु हों नित शीश नाय, हमरी भव-बाधा हरि जिनाय ॥
सेवक अपनों निज जान जान, करुना करि भौ-भय भान भान।
यह विघन-मूल-तरु खंड खंड, चित-चिन्तित-आनंद मंड मंड ॥

घत्तानन्द छन्द (मात्रा ३१)

श्रीशांतिमहंता, शिवतियकंता, सुगुनअनंता भगवंता।
भवभ्रमन हनंता, सौख्य अनंता दातारं तारनवंता ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

छन्द रूपक सवैया

शान्तिनाथ-जिनके पद-पंकज, जो भवि पूजै मन वच काय।
जनम जनमके पातक ताके, ततछिन तजिकैं जाय पलाय॥
मनवांछित सुख पावै सो नर, वांचैं भगति-भाव अति लाय।
तातैं 'वृन्दावन' नित बंदै, जातैं शिवपुर-राज कराय॥ १॥

इत्याशीर्वाद: पुष्पाञ्जलि क्षिपामि।

रत्नत्रय

- यदि रत्नत्रय की कुशलता हो जावे तब यह सब व्यवहार अनायास छूट जावे।
- जो जीव दर्शन, ज्ञान, चारित्र में स्थित हो रहा है उसी को तुम 'स्व - समय' जानो और इसकेविपरीत जो पुद्गल कर्म प्रदेशों में स्थित है उसे 'पर - समय' जानो। जिसके ये अवस्थायें हैं उसे अनादि, अनन्त, सामान्य जीव समझो। केवल राग - द्वेष की निवृत्ति के अर्थ चारित्र की उपयोगिता है।
- सम्यक्दृष्टि जीव का अभिप्राय इतना निर्मल है कि वह अपराधी जीव का अभिप्राय से बुरा नहीं चाहता। उसके उपभोग क्रिया होती है। इसका कारण यह है कि चारित्र मोह के उदय से बलात् उसे उपभोग क्रिया करनी पड़ती है। एतावता उसके विरागता नहीं है, ऐसा नहीं कह सकते।

—'वर्णी वाणी' से

श्री नेमिनाथ जिन पूजा

[illegible]

श्रीहरिवंश उजागर नागर, नेमीश्वर जिनराई।
बालब्रह्मचारी जगतारी, श्याम शरीर सुहाई ॥
यादववंश महानभ पूरण, चन्द्रकला सुखदाई।
अब विराज हरो दुःख हमरो, शिवसुख द्यो जिनराई ॥

ॐ [illegible]

ॐ [illegible]

ॐ [illegible]

[illegible]

पद्मद्रह को नीर मनोहर, कंचन झारी माहिं भरो।
जनमजरा दुःख दूर करनको, श्रीजिन सन्मुख धार करो ॥
बालब्रह्मचारी जगतारी, नेमीश्वर जिनराज महान।
मैं निज ध्यान धरूं प्रभु तेरा, मोकूं दीजो अविचल थान ॥

ॐ [illegible] ॥ १ ॥

मलयागिरि करपूर मिलाया, केशर रंग अनोपम जान।
भव आताप हरन जिनवरके, चरणकमलको पूजूं आन ॥ बा०

ॐ [illegible] ॥ २ ॥

चन्द्र किरण सम उज्ज्वल लीजै, अक्षत स्वच्छ सरल गुणखान।
अक्षयपदके नायक प्रभुको, पूजूं हर्षसहित हितमान ॥ बाल०

ॐ [illegible] ॥ ३ ॥

भांति-भांतिके कुसुम मंगाये, कुसुमायुध अरि जीतन काज।
कुसुमायुध विजयी जिनवरके, चरण कमलको पूजूं आज ॥ बा०

ॐ [illegible] ॥ ४ ॥

मनमोहन पकवान बनाये, हर्षसहित प्रभुके गुण गाय।
क्षुधारोगके नाश करनको श्रीजिन चरणन देत चढ़ाय। बाल०

ॐ [illegible] ॥ ५ ॥

मणिमय दीप अमोलक लेके, रतन रकेबी में धर लाय।
मोहमहातम नाशक प्रभुके, चरणाम्बुजमें देत चढ़ाय ॥ चाल
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥
कृष्णागरु कपूर मिलाकर, धूप सुगन्ध मनोहर आन।
कर्मकलंक निवारक प्रभुके, चरणकमलको पूजों आन ॥ चाल
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥
श्रीफल लौंग सुपारी पिस्ता, एला केला आदि महान।
मुक्ति श्रीफलदायक प्रभुके, चरणाम्बुज पूजें गुणखान ॥ चाल
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥
जलफल द्रव्य मिलाय गाय गुण, रतथार भरिये सुखदान।
अष्टकर्मके नाशक प्रभुको पूजौं निजगुण दायक जान ॥ चाल
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

पंचकल्याणक, चाल छन्द।

छठि कार्तिक सित सुखदाई, गर्भागम मंगल गाई।
इन्द्रादिक पूज रचाई, हम पूजें अर्घ चढ़ाई ॥
ॐ ह्रीं कार्तिशुक्लषष्ठ्यां गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं।
सित श्रावण छठि शुभ जानौं, जन्मे जिनराज महानो।
पितु समुदविजय सुख पायो, जिनको हम शीश नवायो ॥
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं।
श्रावण सुदि छठि शुभ जानों, तजि राज महाव्रत ठानों।
शिव नारि हर्ष बहु कीनों, हम तिनके पद चित दीनों ॥
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्या तपोमङ्गलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं।
सित एके आश्विन भाई, चउघाति हने दुःखदाई।
वर केवलज्ञान सुलीनों, जिनके पद में चित दीनों ॥
ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लप्रतिपदायां ज्ञानकल्याणप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

सिनपद्र स्तसमौ जानो, जब जोग निरोध प्रमानो ।
गिरिनार शिखर शिव पाई, वन्दौं मैं शीश नवाई ॥

[illegible]

दोहा।

बालब्रह्मचारी प्रभु, नेमीश्वर महाराज ।
मेरो नेम निभाइयो, यह अरजी सुनि आज ॥

चाल ख्याल की।

हरि पार न पावैं जिनके गुन गावैं सुरनर शेष जी ॥ टेक ॥
स्याम शरीर धनुष दश ऊँचो नाग लिछन पगमांहि ॥
समुद्रविजय राजा के प्यारे मात शिवा सुतराय ।
श्रीयदुवंश आकाश चन्द्रमा नेमीश्वर जिनराय ॥

रेखता।

जाके गर्भ समय धनिदरि देवनी, जिनके गर्भ जनम सुर आई ।
धारा रतनन की बरसाई, जाके गर्भ आगमें धनिदरि देवजी ॥
गर्भकल्याण महोत्सव चन्द्रमा, गुन सागर भरपूर ।
लोक त्रिलोक दुःख हरैं, जिनके गुन गावैं सुर नर शेष जी ॥
हरि भक्ति करि महिमा प्रभु जन्म, बहु आनन्द ठानधार ।
हाल मेरुप सहस्रवत नायो, मेरुन में निरधार ।
धनिदरि पाण्डव भूर सुन्हावे, पद आंगन में सार ॥
जनमौ पार न पायो सुरनर शेषजी, हरि को सुख जात बतायो ।
अष्टा दशनि नाग धनुष जतायो, जन्मो पार न पावै सुरनर शेषजी ॥
धनु दरश सुना धनि कैसा जिनवर के दिग आय ।
जिनवर पद शीश नवायो जी ॥ जिन० ॥
बाल ब्रह्मचारी अनगारी मन, विराग स्वरूप ।
ब्याह समय पशुदीन, निरखिके राग तजो दुःख रूप ।
बारह भावना भाई नेमिजी भये दिगम्बर रूप ॥
जिनके हिरदे में जाई करुणा जीवकी, छांडी राजमती-सी नारी ।
जाय गिर लीनो गिरनारी, जिनके हिरदेमें आई करुणा जीव की ॥

छप्पन दिन छद्मस्थ रहे जिन चार घातिया चूर।
ज्ञान लहि सर्व लखायोजी जिनके ॥गुण०॥
समवशरण की महिमा राजे श्रीमण्डप सुखकार।
रतन सिंहासन ऊपर प्रभुजी पद्मासन निरधार।
तीन छत्र सिर ऊपर राजे चौसठि चामर सार ॥
जिनके सन्मुख ठाढ इन्द्र नरेन्द्रजी।
नभ में दुन्दुभि की धुनि भारी, वर्षे फूल सुगन्ध अपारी।
जिनके सम्मुख ठाडे इन्द्र नरेन्द्रजी।
वृक्ष अशोक शोक सब नाशे वाणी दिव्य प्रकाश।
स्वहित वृष निज निधि पावेजी ॥ जिनके० ॥
श्रीगिरिनार शिखरते स्वामी, पायो पद, निर्वाण।
कर्मकलङ्क रहित अविनाशी सिद्ध भये भगवान।
पञ्चकल्याणक पूजा कीनी सकल सुरासुर आन ॥
अपनो विरद निवाहो दीन दयालजी।
मोकों दीजे निजकी माया, कारज कीजे मन ललचाया।
अपनो विरद निवाहो दीन दयालजी ॥
विनय जिनेश्वर की सुन स्वामी, नेमीश्वर महाराज।
हृदय मे तुम पद ध्याऊजी जिनके गुण गावें सुरनर शेषजी ॥

दोहा—चरणन शीश नवाय के, पूजा कर गुन गाय।
अरज करूँ यह एक मैं, भव-भव होहु सहाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथ जिनन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल छन्द।

वर्तमान जिनराय भरतके जानिये,
पञ्चकल्याणक मानि गये शिवथानिये।
जो नर मनवचकाय प्रभु पूजें सही,
सो नर दिवसुख पाय लहै अष्टम मही ॥

इत्याशीर्वाद, परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्रीपार्श्वनाथ जिन पूजा

गीता छन्द ।

वर स्वर्ग प्राणतको विहाय, सुमात वामा-सुत भये ।
अश्वसेनके पारस जिनेश्वर, चरण तिनके सुर नये ॥
नवहाथ उन्नत तन विराजै, उरग-लच्छन अति लसैं ।
थापूं तुम्हें जिन आय तिष्ठो, करम मेरे सब नसैं ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ ! ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

चामर छन्द ।

क्षीर सोम के समान अम्बु-सार लाइये ।
हेम-पात्र धारिकैं सु आपको चढ़ाइये ॥
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूं सदा ।
दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

चन्दनादि केशरादि स्वच्छ गन्ध लीजिये ।
आप चर्ण चर्च मोह-ताप को हनीजिये ॥ पार्श्व० ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

फेन चन्दके समान अक्षतं मंगायके।
चरणके समीप सार पुञ्ज को रचायके ॥ पार्श्व० ॥३॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥
केवड़ा गुलाव और केतकी चुनाइये।
धार चर्णके समीप काम को नसाइये ॥ पार्श्व० ॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥
घेवरादि वावरादि मिष्ट सर्पिमें सने।
आप चर्ण अर्च ते क्षुधादि रोग को हने ॥ पार्श्व० ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥
लाय रत्न-दीप को सनेह-पूर के भरूं।
वातिका कपूर वार मोह ध्वांतकूं हरूं ॥ पार्श्व० ॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥
धूप गन्ध लेयकें सु अग्निसंग जारिये।
तास धूप के सुसंग अष्टकर्म वारिये ॥ पार्श्व० ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥
खारकादि चिरभटादि रत्न-थालमें भरूं।
हर्ष धारिकें जजूं सुमोक्ष सौख्य को वरूँ ॥ पार्श्व० ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥
नीरगन्ध अक्षतान्न पुष्प चारु लीजिये।
दीप धूप श्रीफलादि अर्घतें जजीजिये ॥ पार्श्व० ॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

पञ्चकल्याणक छन्द चाल ।

शुभप्राणत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये ।
वैशाखतनी दुतिकारी, हम पूजें विघ्न निवारी ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं० ।

जनमे त्रिभुवन सुखदाता, एकादशी पौष विख्याता ।
श्यामा तन अद्भुत राजे, रवि-कोटिक-तेज सुलाजे ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं० ।

कलि पौष इकादशी आई, तब बारह भावना भाई ।
अपने कर लौंच सु कीना, हम पूजें चरण जजीना ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं० ।

कलि चैत चतुर्थी आई, प्रभु केवलज्ञान उपाई ।
तब प्रभु उपदेश जु कीना, भवि जीवनको सुख दीना ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां दिने केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं० ।

सित सातैं सावन आई, शिवनारि वरी जिनराई ।
सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजें मोक्ष कल्याणा ॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं० ।

जयमाला, छन्द ।

पारसनाथ जिनेन्द्र तने वच, पौनभखी जरते सुन पाये ।
करयो सरधान लह्यो पद आन भयो पद्मावति शेष कहाये ॥
नाम प्रताप टरें सन्ताप सु भव्यन को शिव-शर्म दिखाये ।

हो विश्वसेनके नन्द भले गुणगावत हैं तुमरे हरषाये ॥ १ ॥

दोहा — केकी-कंठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ ।
लक्षण उरग निहारपग, वन्दौं पारसनाथ ॥२॥

पद्धरि छन्द ।

रची नगरी छः मास अगार, बने चहुँगोपुर शोभ अपार ।
सुकोटतनी रचना छवि देत, कंगूरनपै लहकैं बहुकेत ॥३॥
बनारसकी रचना जु अपार, करी बहुभांति धनेश तयार ।
तहां विश्वसेन नरेन्द्र उदार, करैं सुख वाम सु दे पटनार ॥४॥
तज्यो तुम प्राणत नाम विमान, भये तिनके वर नन्दन आन ।
तबै सुरइन्द्र नियोगन आय, गिरिन्द करी विधिन्हौन सुजाय ॥५॥
पिता-घर सौंपि गये निज धाम, कुबेर करै वसु जाम सुकाम ।
बढ़ै जिन दोज मयंक समान, रमैं बहु बालक निर्जर आन ॥६॥
भये जब अष्टम वर्ष कुमार, धरे अणुव्रत्त महासुखकार ।
पिता जब आन करी अरदास, करौ तुम ब्याह वरैं मम आस ॥७॥
करी तब नाहिं कहे जगचन्द, किये तुम काम कषाय जु मन्द ।
चढ़े गज राजकुमारन संग, सु देखत गंगतनी सु तरंग ॥८॥
लख्यो इक रंक करै तप घोर, चहूंदिशि अगनि बलै अति जोर ।
कहै जिननाथ अरे सुन भ्रात, करे बहु जीवनकी मत घात ।९॥
भयो तब कोप कहै कित जीव, जले तब नाग दिखाय सजीव ।
लख्यो यह कारन भावन भाय, नये दिव ब्रह्म ऋषीसब आय ॥१०॥

तबै सुर चार प्रकार नियोग, धरी शिविका निज कन्ध मनोग।
कियो वनमांहि निवास जिनन्द, धरे व्रत चारित आनन्द कन्द ॥११॥
गहे तहं अष्टम के उपवास, गये धनदत्त तने जु अवास।
दियो पयदान महासुखकार, भयी पनवृष्टि तहां तिहिवार ॥१२॥
गये तब काननमांहि दयाल, धरो तुम योग सबै अघटाल।
तबै वह धूम सुकेत अयान, भयो कमठाचर को सुर आन ॥१३॥
करै नभ गौन लखे तुम धीर, जु पूरब बैर विचार गहीर।
कियो उपसर्ग भयानक घोर, चली बहु तीक्षण पवन झकोर ॥१४॥
रह्यो दसहूं दिशिमें तम छाय, लगी बहु अग्नि लखी नहिं जाय।
सुरुण्डनके बिन मुण्ड दिखाय, पड़ै जल मूसलधार अथाय ॥१५॥
तबै पदमावति-कंथ धनिन्द, नये जुग आय तहां जिनचन्द।
भग्यो तब रंक सु देखत हाल, लह्यो तब केवलज्ञान विशाल ॥१६॥
दियो उपदेश महा हितकार, सुभव्यन बोधि समेद पधार।
सुवर्णभद्र जहं कूट प्रसिद्ध, वरी शिव नारि लही वसुरिद्ध ॥१७॥
जजूं तुम चरण दुहूं कर जोर, प्रभू लखिये अब ही मम ओर।
कहै 'बखतावर रत्न' बनाय, जिनेश हमें भवपार लगाय ॥१८॥

जय पारस देवं सुरकृत सेवं वन्दत चरण सुनागपती।
करुणाके धारी पर उपकारी, शिवसुखकारी कर्महती ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल — जो पूजै मनलाय भव्य पारस प्रभु नितही।
ताके दुःख सब जांय भीति व्यापै नहिं कितही।
सुख सम्पत्ति अधिकाय पुत्र मित्रादिक सारे।
अनुक्रमसों शिव लहै, 'रतन' इमि कहै पुकारे ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्री महावीर स्वामी पूजा

मत्तगयन्द।

श्रीमतवीर हरें भवपीर, भरें सुख-सीर अनाकुलताई।
केहरि-अङ्क अरी करदङ्क, नये हरि-पङ्कति-मौलि सु आई॥
मैं तुमको इत थापतु हौं प्रभु, भक्ति-समेत हिये हरखाई।
हे करुणा धन धारक देव, इहां अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

क्षीरोदधिसम शुचि नीर, कञ्चनभृङ्ग भरों।
प्रभु वेग हरो भव-पीर, यातैं धार करो॥
श्रीवीर महा अतिवीर, सन्मतिनायक हो।
जय वर्द्धमान गुण-धीर, सन्मति-दायक हो॥ १॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥

मलयागिरि - चन्दनसार, केशर-संग घसौं।
प्रभु भव-आताप निवार, पूजत हिय हुलसो॥ श्रीवीर०॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥

तन्दुलसित शशि-सम शुद्ध, लीनों थार भरी ।
तसुपुञ्जधरों अविरुद्ध, पावों शिव-नगरी ॥ श्रीवीर० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥

सुरतरुके सुमन समेत, सुमन सुमन प्यारे ।
सो मनमथ-भञ्जन-हेत, पूजों पद थारे ॥ श्रीवीर० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥

रस-रज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी ।
पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख-अरी ॥ श्रीवीर०॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

तम-खण्डित मण्डित-नेह, दीपक जोवत हों ।
तुम पदतर हे सुख-गेह, भ्रम-तम खोवत हों ॥श्रीवीर०॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

हरिचन्दन अगर कपूर, चूर सुगन्ध करा ।
तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरा ॥ श्रीवीर० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

ऋतु-फल कल-वर्जित लाय, कंचन-थार भरों ।
शिव-फल-हित हे जिनराय, तुमढिग भेंट धरों ॥ श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जल-फल वसु सजि हिम-थार, तन-मन-मोद धरों ।
गुण गाऊं भव-दधितार, पूजत पाप हरों ॥ श्रीवीर० ॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

पञ्चकल्याणक । राग-टप्पाचाल

मोहि राखो हो शरना श्रीवर्द्धमान जिनरायजी । मो०
गरभ साढ़ सित छट्ठ लियो तिथि, त्रिशलाउर अघहरना ।
सुर सुरपति तितसेव करी नित, मैं पूजों भव-तरना ।
मोहि राखो हो शरना, श्रीवर्द्धमान जिनरायजी ॥
ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठ्यां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीमहावीर जिनेन्द्राय अर्घं०

जनम चैतसित तेरसके दिन, कुण्डलपुर कन-वरना ।
सुरगिरि सुरगुरु पूज रचायो मैं पूजों भव-हरना ॥मो०
ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीमहावीर जिनेन्द्राय अर्घं० ।

मगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरना ।
नृप-कुमार घर पारन कीनों मैं पूजों तुम चरना ॥ मो०
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीमहावीर जिनेन्द्राय अर्घं० ।

शुकल दशैं वैशाख दिवस अरि, घाति-चतुक छय करना ।
केवल लहि भवि भवसर तारे, जजौं चरन सुखभरना ॥मो०
ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानमङ्गलमण्डिताय श्रीमहावीर जिनेन्द्राय अर्घं० ।

कातिक श्याम अमावश शिव-तिय, पावापुरतै परना ।
गन-फनि-वृन्द जजै तित बहुविधि, मैं पूज्यों भयहरना ॥मो०
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीमहावीर जिनेन्द्राय अर्घं० ।

जयमाला, छन्द हरिगीता २८ मात्रा ।

गणधर असनिधर, चक्रधर हलधर गदाधर वरवदा ।

अरु चापधर विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा ॥
दुखहरन आनन्द-भरन तारन, तरन चरन रसाल हैं।
सुकुमाल गुनमनिमाल, उन्नत भालकी जयमाल हैं ॥

छन्द घत्तानन्द।

जय त्रिशलानंदन, हरिकृतवंदन, जगदानंदन चंदवरं।
भवताप निकंदन, तनकनमंदन रहित सपंदन नयनधरं॥

छन्द त्रोटक।

जय केवल-भानु कलासदनं, भविकोक-विकाशन-कंजवनं।
जगजीत-महा-रिपु-मोहहरं, रज ज्ञानदृगांवर चूरकरं ॥ १ ॥
गर्भादिक मंगल मण्डित हो, दुःखदारिदको नित खण्डित हो।
जगमांहि तुमी सतपंडित हो, तुमही भवभाव विहंडित हो ॥ २ ॥
हरिवंश सरोजनको रवि हो, बलवन्त महन्त तुमी कवि हो।
लहि केवल धर्म प्रकाश कियो अबलों सोई मारगराजतियो ॥ ३ ॥
पुनि आपतने गुणमांहि सही, सुरमग्न रहैं जितने सबही।
तिनकी वनिता गुनगावत हैं, लयमाननिसों मन भावत हैं ॥ ४ ॥
पुनि नाचत रंग उमंग भरी तुव भक्ति विषै पग एम धरी।
झननं झननं झननं झननं, सुरलेत तहां तननं तननं ॥ ५ ॥
घननं घननं घन घण्ट बजै, दृमदं दृमदं मिरदंग सजै।
गगनांगन-गर्भगता-सुगता, ततता ततता अतता वितता ॥ ६ ॥
धृगतां धृगतां गति बाजत है, सुरताल रसाल जु छाजत है।

सनन सननं सननं नभमें, इक रूप अनेक जु धारि भ्रमैं ॥ ७ ॥
कई नारि सु बीन बजावति हैं, तुमरो जस उज्ज्वल गावति हैं।
करतालविषै करताल धरैं, सुरताल विशाल जु नाद करैं ॥ ८ ॥
इन आदि अनेक उछाह भरी, सुरभक्ति करै प्रभुजी तुमरी।
तुमही जगजीवनके पितु हो, तुमही बिन कारणके हितु हो ॥ ९ ॥
तुमही सब विघ्न-विनाशन हो, तुमही निज आनंद भासन हो।
तुमही चित चिंतित दायक हो, जगमांहि तुम्ही सब लायक हो ॥१०॥
तुमरे पन मंगल मांहि सही, जिय उत्तम पुण्य लियो सबही।
हमको तुमरी शरनागत है, तुमरे गुनमें मन पागत है ॥ ११ ॥
प्रभु मो हिय आप सदा बसिये, जब लौं वसु कर्म नहीं नसिये।
तब लौं तुम ध्यान हिये वरतो, तब लौं श्रुत चिंतन चित्तरतो ॥ १२ ॥
तबलौं व्रत चारित चाहतु हों, तबलौं शुभ भाव सुहागतु हों।
तबलौं सतसंगति नित्त रहै, तबलौं मम संजम चित्त गहै ॥ १३ ॥
जबलौं नहिं नाश करौं अरिको, शिव नारिवरौं समता धरिको।
यह द्यो तबलौं हमको जिन जी, हम जाचतु हैं इतनी सुनजी ॥ १४ ॥

घत्ता।

श्रीवीर जिनेशा नमित सुरेशा नाग नरेशा भगतिभरा।
'वृन्दावन' ध्यावै विघन नशावै, वांछित पावै शर्मवरा ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीर जिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—श्री सनमतिके जुगलपद, जो पूजै धरि प्रीत।
'वृन्दावन' सो चतुर नर, लहै मुक्ति नवनीत ॥

तीर्थक्षेत्र पूजा-संग्रह

श्री सम्मेदशिखर पूजा

दोहा—सिद्धक्षेत्र तीरथ परम, है उत्कृष्ट सुथान।
शिखर सम्मेद सदा नमू, होय पाप की हान ॥ १ ॥
अगनित मुनि जहतैं गये, लोक शिखरके तीर।
तिनके पद पङ्कज नमू, नाशें भव को पीर ॥ २ ॥

अडिल्ल छन्द।

है उज्ज्वल यह क्षेत्र सु अति निरमल सही।
परम पुनीत सुठौर महागुण की मही ॥
सकल सिद्ध दातार, महा रमणीक है।
बन्दू निज सुख हेत, अचल पद देत है ॥ ३ ॥

सोरठा।

शिखर सम्मेद महान, जग में तीर्थ प्रधान है।
महिमा अद्भुत जान, अल्पमती मैं किम कहूं ॥ ४ ॥

चाल, सुन्दरी छन्द।

सरस उन्नत क्षेत्र प्रधान है, अति सु उज्ज्वल तीर्थ महान है।
करहिं भक्तिसु जे गुण गायकैं, लहहि सुर शिवके सुख जायकैं ॥

अडिल्ल छन्द ।

सुर नर हरि इन आदि और वन्दन करै ।
भव सागर से तिरै नही भव में परै ॥
जन्म जन्म के पाप सकल छिन मे टरै ।
सुफल होय तिन जन्म शिखर दरशन करै ॥ ६ ॥

स्थापना, अडिल्ल छन्द ।

गिरि सम्मेद तै बीस जिनेश्वर शिव गये ।
और असंख्ये मुनी तहां ते सिध भये ॥
बन्दूं मन वच काय नमूं शिर नायकै ।
तिष्ठो श्रीमहाराज सबै इत आयकै ॥ १ ॥

दोहा—श्रीसम्मेद शिखर सदा पूजू मन वच काय ।
हरत चतुरगति दु:खको मन वांछित फलदाय ॥ २ ॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती श्री बीस तीर्थङ्कर और असंख्यात मुनि मुक्ति पधारे, तिनके चरणारविन्द की पूजा अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधापन ।

अथाष्टक, गीता छन्द ।

सोहन झारी रतन जड़िये मांहि गंगा जल भरो ।
जिनराज चरण चढ़ाय भविजन जन्म मृत्यु जरा हरो ॥
संसार उदधि उबारने को लीजिये सुध भावसो ।
सम्मेद गिरपर बीस जिन मुनि पूज हरष उछावसो ॥ १ ॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती बीस तीर्थङ्करादि असंख्यात मुनि मुक्ति पधारे, जन्ममृत्युरोगविनाशनाय जलं० ॥ १ ॥

जाकी सुगन्ध थकी अहो अलि गुंजते आवे घने।
सो मलय संग घसाय केसर पूज पद जिनवर तने॥
भव आताप निवारने को लीजिये सुध भावसों॥ स०॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती बीस तीर्थङ्करादि असंख्यात मुनि मुक्ति पधारे, भवआतापविनाशनाय चन्दनं० ॥ २ ॥

अक्षत अखंडित अतिहि सुन्दर जोति शशि सम लीजिये।
शुभ शालि उज्ज्वल तोय धोय सु पूज प्रभु पद कीजिये॥
पद अक्षय कारण लेय भविजन शुद्ध निरमल भावसों॥ स०

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती बीस तीर्थङ्करादि असंख्यात मुनि मुक्ति पधारे, अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं० ॥ ३ ॥

है मदन दुष्ट अत्यन्त दुर्जय हते सबके प्रान ही।
ताके निवारण हेत कुसुम मंगाय रंजन घ्रान ही॥
जाकी सुवास निहार षट्पद दौरि आवै चावसों॥ स०॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती बीस तीर्थङ्करादि असंख्यात मुनि मुक्ति पधारे, कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं० ॥ ४ ॥

रस पूर रसना घ्रान रंजन चक्षु प्रिय अति मिष्ट ही।
जिनराज चरण चढ़ाय उत्तम क्षुधा होवै नष्ट ही॥
भरि थाल कञ्चन विविध व्यञ्जन लीजिये सुध भावसों॥ स०॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती बीस तीर्थङ्करादि असंख्यात मुनि मुक्ति पधारे, क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ॥ ५ ॥

त्रैलोक्यगर्भित ज्ञान जाको मोह निजवश कर लियो।
अज्ञान तममें पड्यो चेतन चतुरगति भरमन कियो॥

छिनमाहि मोह विध्वस हौवैं आरती कर चावसों ॥ स०॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती बीस तीर्थङ्करादि असंख्यात मुनि मुक्ति पधारे, महामोहान्धकारविनाशनाय दीपं० ॥ ६ ॥

शुभ अगरु अम्बर वास सुन्दर धूप प्रभु ढिग खेवही ।
ए दुष्टकर्म प्रचरण्ड तिनको होय तत छिन छेवही ॥
सो धूप दसु विधि जरत कारण लीजिये सुध भावसो ॥ स०॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती बीस तीर्थङ्करादि असंख्यात मुनि मुक्ति पधारे, अष्टकर्मदहनाय धूपं० ॥ ७ ॥

बादाम श्रीफल लोग पिस्ता लेय शुद्ध सम्हालही ।
सैकार दाख अनार केला तुरत टूटे डालही ॥
भवि लेय उत्तम हेत शिव के छूट विधि के दावसों ॥ स०॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती बीस तीर्थङ्करादि असंख्यात मुनि मुक्ति पधारे, मोक्षफलप्राप्तये फलं० ॥ ८ ॥

छप्पय चाल ।

जन्म मृत्यु जल हरे, गन्ध आताप निवारै ।
तन्दुल पदके अक्षय मदन कू सुमन विदारै ॥
क्षुधा हरण नैवेद्य दीप ते ध्वान्त नसावै ।
धूप दहै वसु कर्म मोक्ष सुख फल दरसावै ॥
ए वसु द्रव्य मिलायकै अर्घ रामचन्द्र कीजिये ।
कर पूजा गिरिशिखर की नरभव का फल लीजिये ॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती बीस तीर्थङ्करादि असंख्यात मुनि मुक्ति पधारे, अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं० ॥ ९ ॥

प्रत्येक अर्घ

सोरठा।

सकल कर्म हनि मोक्ष, परिवा सित बैशाख ही।
जजौ चरण गुण धोख, गये सम्मेदाचल थकी॥ १॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती ज्ञानधर कूट के दरशन फल एक कोड़ उपवास और श्री कुंथुनाथ तीर्थंकरादि छानवें कोडा कोडी छानवे कोड बतीस लाख छानवे हजार सात सैं वैंयालिस मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं०॥ १॥

दोहा—जेठ शुकल चउदस दिवस मोक्ष गये भगवान।
जजौ मोक्ष जिनके चरण कर करि बहु गुणगान॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती सुदत्तवर कूट के दरशन फल एक कोड़ उपवास श्री धरमनाथ तीर्थंकरादि गुणतीस कोडा कोडी उन्नीस कोड नौ लाख नौ हजार सात सैं पचानवे मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं०॥ २॥

चैत शुकल एकादशी शिवपुर मे प्रभु जाय।
लहि अनन्त सुख थिर भये आतमसूं लवलाय॥ ३॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती अविचल कूट के दरशन फल एक कोड़ि उपवास और श्री सुमतनाथ तीर्थंकरादि एक कोडाकोडी चौरासी कोड़ बहत्तर लाख इक्यासी हजार सातसैं मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं०॥ ३॥

जेठ शुकल चउदस दिना सकल कर्म क्षय कीन।
सिद्ध भये सुखमय रहै हुए अष्टगुण लीन॥ ४॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती शान्तिप्रभ कूट के दरशन फल एक कोड उपवास और श्री शान्तिनाथ तीर्थंकरादि नौ कोडाकोडी नौ लाख नौ हजार नौ सौ निन्यानवे मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं०॥ ४॥

बदि अषाढ़ अष्टमि दिवस मोक्ष गये मुनि ईश।
जजू भक्तिते विमल प्रभु अर्घ लेय नमि शीश॥ ५॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती सुवीर कुल कूट के दरशन फल एक कोड उपवास और विमलनाथ तीर्थंकरादि सत्तर कोडाकोडी साठ लाख छः हजार सात सै बयालिस मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं०॥ ५॥

फागुन शुकल सप्तमि दिना हनि अघातियाराय।
जगत फास कू काटकै मोक्ष गये जिनराय॥ ६॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती प्रभास कूट के दरशन फल एक कोड उपवास और श्री सुपार्श्वनाथ तीर्थंकरादि उनचास कोडाकोडी चौरासी कोड बहत्तर लाख सात हजार सातसै बयालिस मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं०॥ ६॥

चैत शुकल पंचमि दिना हनि अघातिया राय।
मोक्ष भये सुरपति जजै मैं जजहूं गुण गाय॥ ७॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती सिद्धवर कूट के दरशन फल बत्तीस कोड उपवास और श्री अजितनाथ तीर्थंकरादि एक अरब अस्सी कोड चौपन लाख मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं०॥ ७॥

जुगल नाग तारे प्रभु पार्श्वनाथ जिनराय।
सावन शुकल सातें दिवस लहे मुक्ति शिव जाय॥ ८॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती सुवरनभद्र कूट के दरशन फल सोलह कोड उपवास और श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकरादि बयासी करोड़ चौरासी लाख पैंतालिस हजार सातसै बयालिस मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं०॥ ८॥

सोरठा।

हनि अघाति शिव थान, चतुर्दशी वैशाख बदि।
जजु मोक्ष कल्यान, गये सम्मेदाचल थको॥ ९॥

[illegible]

असरथ परग हनि मोह, चैत अमावस शिव गये।
मैं जजूँ वसु थोक, चतुर निकाय सुरा जजें ॥ २० ॥

[illegible] ॥ २० ॥

दोहा—फागुन पंचमि शुक्ल की [illegible] कर्म हनि मोक्ष।
गिर सम्मेदाचल थकी, शिवपद लियो सु थोक ॥ २१ ॥

[illegible] ॥ २१ ॥

सोरठा।

नमि [illegible] शिवथान सावन सुदि पूनम गया।
पूजूँ मोक्ष कल्यान सुरनर खगपति मिलि जजें ॥ २२ ॥

[illegible] ॥ २२ ॥

[illegible] पद निरवान भादव सुदि अष्टम दिना।
पूजूँ मोक्ष कल्यान सब सुर मिल पूजा करी ॥ २३ ॥

[illegible] ॥ २३ ॥

हनि अघाति जिनराय, चौथ कृष्ण फागुन विषै।
जजू चरण गुणगाय, मोक्ष सम्मेदाचल थकी ॥ २४ ॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती मोहन कूट के दरशन फल एक कोड उपवास और श्री पद्मप्रभ तीर्थंकरादि निन्यानवे कोडि सत्यासी लाख तितालिस हजार सात सै सत्ताइस मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं० ॥ २४ ॥

हनि अघाति निरवान, फागुन द्वादशि कृष्ण ही।
जजू मोक्ष कल्यान, गए सुरासुर पद जजो ॥ २५ ॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती निर्जर नामा कूट के दरशन फल एक कोड उपवास और श्री मुनिसुव्रतनाथ तीर्थंकरादि निन्यानवे कोडा कोड सत्यानवे कोडि नौ लाख नौ सौ निन्यानवे मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं० ॥ २५ ॥

शेषकर्म हनि मोक्ष, फागुन शुकल जु सप्तमी।
जजू गुणनि के धोक, गये सम्मेदाचल थकी ॥ २६ ॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती ललित कूट के दरशन फल सोलह लाख उपवास और श्री चन्द्रप्रभु तीर्थंकरादि नौ सौ चौरासी अरब बहत्तर कोडि अस्सी लाख चौरासी हजार पांच सो पचानवे मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं० ॥ २६ ॥

गये मोक्ष भगवान, अष्टमि सित आसौज की।
देहु देहु शिवथान, वसुविधि पदपङ्कज जजू ॥ २७ ॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती विद्युतवर कूट के दरशन फल एक कोड उपवास और श्री शीतलनाथ तीर्थंकरादि अठारह कोडा कोडि बयालिस कोड बत्तीस लाख बेयालिस हजार नौ सौ पांच मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं० ॥ २७ ॥

दोहा—चैत कृष्ण पूनम दिवस, निज आतम को चीन।
मुक्ति स्थानक जायकै, हुए अष्ट गुण लीन ॥२८॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती स्वयंभू कूट के दरशन फल एक कोड उपवास और श्री अनन्तनाथ तीर्थंकरादि छानवे कोडा कोड सत्तर कोड सत्तर लाख सत्तर हजार सात सै मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं० ॥ २८ ॥

सोरठा।

शेष कर्म निरवान चैत शुकल षष्ठमि विषै।
जजो गुणौघ उचार मोक्ष वरांगना पति भये॥ १६॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती धवल कूट के दर्शन फल बयालीस लाख उपवास और श्री सम्भवनाथ तीर्थङ्करादि नौ कोडा कोड बहत्तर लाख बयालीस हजार पाच सौ मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं० ॥ १६ ॥

दोहा—अष्टमि सित बैशाख की गए मोक्ष हनि कर्म।
जजू चरण उर भक्ति कर देहु देहु निज धर्म ॥२०॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती आनन्द कूट के दर्शन फल एक लाख उपवास और अभिनन्दन तीर्थङ्करादि वहत्तर कोडा कोडि सत्तर कोड सत्तर लाख बयालीस हजार सात सै मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं० ॥ २० ॥

चौपाई छन्द।

माघ असित चउदश विधि सैन, हनि अघाति पाई शिव दैन।
सुर नर खग कैलाश सुथान, पूजै मैं पूजू धर ध्यान॥

दोहा—ऋषभ देव जिन सिध भये, गिर कैलाश से जोय।
मन वच तन कर पूजहूँ शिखर नमू पद सोय॥

ॐ ह्री श्री कैलाश सिद्धक्षेत्र परवत सेती माघ सुदी १४ को श्री आदिनाथ तीर्थङ्करादि असख्य मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं०।

दोहा—वासु पूज्य जिनकी छबी अरुन वरन अविकार।
देहु सुमति विनती करूं ध्याऊं भवदधितार॥
वासु पूज्य जिन सिध भये चम्पापुर से जेह।
मनवचतन कर पूज हूँ शिखर सम्मेद यजेह॥

ॐ ह्री श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्र परवत सैती भादवा सुदी १४ श्री वासुपूज्य तीर्थङ्करादि असंख्य मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं०।

शुक्ल षाढ़ सप्तमि दिवस शेष कर्म हनि मोक्ष।
शिव कल्याण सुरपति कियो जजूं चरण गुण धोक॥
नेमनाथ जिन सिद्ध भये सिद्ध क्षेत्र गिरनार।
मन वच तन कर पूज हूँ भवदधि पार उतार॥

ॐ ह्री श्री गिरनार सिद्धक्षेत्र परवत सेती आषाढ़ सुदी सातैं को श्री नेमिनाथ तीर्थङ्करादि बहत्तर कोड़ सात सै मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं०।

दोहा—कार्तिक वदि मावस गये शेष कर्म हनि मोक्ष।
पावापुरते वीर जिन जजूं चरण गुण धोक॥
महावीर जिन सिद्ध भये पावापुर से जोय।
मन वच तन कर पूजहूं शिखर नमूं पद दोय॥

ॐ ह्री श्री पावापुर सिद्धक्षेत्र परवत सेती कार्तिक वदी अमावस को श्री वर्द्धमान तीर्थङ्करादि असंख्य मुनि मुक्ति पधारे, अर्घं०।

दोहा—सुधर्मादि गणेश गुरु अन्तिम गौतम नाम।
तिन सबकूं लै अर्घ तै पूजूँ सब गुण धाम॥

ॐ ह्री श्री सुधर्मादि गौतम गणधर देव गुणावा ग्राम के उद्यान आदि भिन्न-भिन्न स्थानो से निरवाण पधारे, अर्घं०।

दोहा—या विधि तीर्थ जिनेश के बन्दू शिखर महान।
और असंख्य मुनीश जे पहुँचे शिवपद थान॥
सिद्ध क्षेत्र जे और हैं भरत क्षेत्र के मांहि।
और जे अतिशय क्षेत्र हैं कहे जिनागम मांहि॥

तिनके नाम सु लेत ही पाप दूर हो जाय।
ते सब पूजूँ अर्घ ले भव भव को सुखदाय॥

ॐ ह्री श्री भरत क्षेत्र सम्बन्धी सिद्धक्षेत्र और अतिशय क्षेत्रेभ्यो अर्घं ०।

सोरठा।

दीप अढ़ाई मांहि सिद्धक्षेत्र जे और हैं।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय भव भव के अघ नाश हैं॥

अडिल्ल छन्द।

पूजूँ तीस चौबीसी महासुख दाय जू।
भूत भविष्यत् वर्तमान गुण गाय जू॥
कहे विदेह के बीस नमू सिरनाय जू।
और जू अर्घ बनाय सु विघन पलाय जू॥

ॐ ह्री श्री तीस चौबीसी और भूत भविष्यत् वर्तमान और विदेह क्षेत्र के बीस जिनेश्वर अर्घं ०।

दोहा—कृत्याकृत्यम जे कहे तीन लोक के मांहि।
ते सब पूजू अर्घ ले हाथ जोर सिरनाय॥

ॐ ह्री श्री ऊर्ध्वलोक मध्यलोक पाताललोक सम्बन्धी जिन मन्दिर जिन चैत्यालयेभ्यो नम अर्घं ०।

दोहा—तीरथ परम सुहावनो शिखर सम्मेद विशाल।
कहत अल्प बुधि युक्ति सै सुखदाई जयमाल॥

अथ जयमाला, छन्द पद्धडी।

जय प्रथम नमूँ जिन कुन्थ देव, जय धर्म तनी नित करत सेव।
जय सुमति सुमति सुधबुद्धि देत, जय शान्ति नमूँ नित शान्ति हेत॥

जय विमल नमूं आनन्द कन्द जय सुपार्स नमूँ हनि पास फन्द ।
जय अजित गये शिव हानि कर्म, जय पार्श्व करी जुग उरग सर्म ॥
पश्चिम दिस जानू टोक एव, वन्दे चहुँगति को होय छेव ।
नर सुर पद की तो कौन बात, पूजे अनुक्रमतै मुक्ति जात ॥
जय नेमि तनू नित धरू ध्यान, जय अरि हर लीनो मुक्ति थान ।
जय मल्लि मदन जय शील धार, श्रेयास गये भव उदधि पार ॥
जय सुमति सुमति दाता महेश, जय पद्म नमूँ तम हर दिनेश ।
जय मुनि सुवृत गुण गण गरिष्ट, जय चन्द्र करे आताप नष्ट ॥
जय शीतल जय भव के आताप, जय अनन्त नमू नशि जात पाप ।
जय सम्भव भव की हरो पीर, जय अभय करो अभिनन्दन वीर ॥
पूरव दिश द्वादश कूट जान, पूजत होवत है अशुभ हान ।
फिर मूल मन्दिरकू करू प्रणाम, पावे शिव रमनी वेग धाम ॥

घत्ता छन्द ।

श्री सिद्ध सु क्षेत्र अति सुख देतं तुरतं भव दधि पार करं ।
अरि कर्म बिनासन शिव सुख कारन जय गिरवर जगता तारं ॥

चाल छप्पय ।

प्रथम कुथ जिन धर्म सुमति अरु शान्ति जिनन्दा ।
विमल सुपारस अजित पार्श्व मेटै भव फन्दा ॥
श्री नमि अरह जु मल्लि श्रेयांस सुविधि निधि कन्दा ।
पद्म प्रभु महाराज और मुनि सुवृत चन्दा ॥

शीतलनाथ अनन्त जिन सम्भव जिन अभिनन्दजी।
बीस टोंक पर बीस जिनेश्वर भाव सहित नित बन्दजी॥

ॐ ह्री श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र परवत सेती बीस तीर्थंकरादि असंख्यात मुनि मुक्ति पधारे, अर्घम्०।

कवित्त।

शिखर सम्मेदजी के बीस टोंक सब जान।
तासों मोक्ष गये ताकी संख्या सब जानिये॥
चउदासै कोड़ा कोड़ि पैंसठ ता ऊपर।
जोड़ि छियालिस अरब ताको ध्यान हिये आनिये॥
बारा सै तिहत्तर कोड़ि लाख ग्यारा सै बैथालीस।
और सात सै चौतीस सहस वखानिये॥
सैकडा है सातसै सत्तर एते हुए सिद्ध।
तिनकूं सु नित्य पूज पाप कर्म हानिये॥

दोहा—बीस टोंक के दरश फल, प्रोषध सख्या जान।
एकसौ तेहत्तर मुनो, गुण सठ लाख महान॥

घत्ता छन्द।

ए बीस जिनेश्वर नमत सुरेसुर मघवा पूजन कू आवै।
नरनारी ध्यावै सब सुख पावै रामचन्द्र नित सिर नावैं॥

इति पुष्पांजलि क्षिपेत्।

श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्र पूजा

दोहा

उत्सव किय पनवार जहँ, सुरगणयुत हरि आय।
जजों सुथल वसुपूज्य तसु, चम्पापुर हर्षाय ॥

ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्र ! अत्रावतरावतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक, चाल नन्दीश्वर पूजन की

सम अमिय विगतत्रस वारि, लै हिम कुम्भ भरा।
लख सुखद त्रिगदहरतार, दे त्रय धार धरा ॥
श्रीवासुपूज्य जिनराय, निर्वृतिथान प्रिया।
चम्पापुर थल सुखदाय, पूजों हर्ष हिया ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

कश्मीरी केशर सार, अति ही पवित्र खरी।
शीतल चन्दन संग सार लै भव तापहरी ॥ श्री० ॥

ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

मणिद्युतिसम खण्ड विहीन, तन्दुल लै नीके।
सौरभ युत नव वर वीन, शालि महा नीके ॥ श्री० ॥

ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अलि लुभन सुभग दृगघ्राण, सुमन जु सुरद्रुमके।
लै वाहिम अर्जुन वाण, सुमन दमन झुमके ॥ श्री० ॥

ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो कामवाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

रस पूरित तुरि पकवान, पक्क यथोक्त घृती ।
क्षुधगदमदप्रदमन जान, लै विध युक्त कृती ॥ श्री० ॥
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥
तम अज्ञप्रनाशक सूर, शिवमग परकाशी ।
लै रत्नद्वीप द्युतिपूर, अनुपम सुखराशी ॥ श्री० ॥
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥
वर परिमल द्रव्य अनूप, सोध पवित्र करी ।
तस चूरण कर कर धूप, लै विधि कुञ्ज हरी ॥ श्री० ॥
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥
फल पक्क मधुर रस वान, प्रासुक वहु विधके ।
लखि सुखद रसनदृगघ्रान, ले शुभपद सिधके ॥ श्री० ॥
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥
जलफलवसु द्रव्य मिलाय, लै भर हिमथारी ।
वसु अंग धरापर ल्याय, प्रमुदित चितधारी ॥ श्री० ॥
ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाला ।

दोहा

भये द्वादशम तीर्थपती, चम्पापुर निर्वान ।
तिन गुणकी जयमाल कछु, कहों श्रवण सुखदान ॥

पद्धडी छन्द ।

जय जय श्री चम्पापुर सुधाम, जहं राजत नृप वसुपूज्य नाम ।
जय पौन पल्यसैं धर्म हीन, भव भ्रमण दुःखमय लख प्रवीन ॥
उर करुणाधर सो तम विडार, उपजै किरणावलि धर अपार ।

श्री वासुपूज्य तिनके सु बाल, द्वादशम तीर्थंकर्ता विशाल ॥
भव भोग देह तैं विरक्त होय, वय बालमाहिं ही नाथ सोय ।
सिद्धन नमि महाव्रत धार लीन, तप द्वादश विध उग्रोग्र कीन ॥
तह मोह मनत्रय आयु देह, दश प्रकृति पूर्व ही क्षय करेह ।
श्रेणी सु क्षपक आरूढ़ होय, गुन नवम भाग नवमाहिं सोय ॥
सोलह वसु इक इक षट् इकेय, इक इक इक इम क्रम सहेय ।
पुनि दशमथान इक लोभ टार, द्वादशमथान सोलह निवार ॥
है अनन्त चतुष्टय युक्त स्वाम, पायो सब सुखद सयोगि धाम ।
तह काल निगोधर सर्वदेव, भ्रमयत हि भव्य इकनाहि देव ॥
कछु काल दुविध वृष अमिय वृष्ट, कर पोषे सबि जीव भव्य पुष्ट ।
इक मास आयु अवशेष जान, जिन योगन को सुसमेटि हान ॥
ताही थल तैं तिरध्यान ध्याय, चतुर्दशथान तिनतें निराय ।
तह दुचरम समय बहत्तर छेद, चरमा सु बहत्तर छिनहि धीर ॥
तेरह सठ करम समय मझार, कहै श्री जगतेन्द्र प्रहार ।
ऊर्ध्वगति अवनी इक समय माहिं, तिनते पावन निज धवल आहि ॥
वसु गुन वसु महिमा अमित सुधेर, है रहे सदा ही उताहि चैन ।
तुम्हरो थल सो पावन पवित्र, त्रैलोक्यपूज्य गायो विचित्र ॥
मैं तासु रज निज मस्तक लगाय, वन्दौं पुनि-पुनि श्रुति शीश नाय ।
ताही पद बांछा उर मझार, पर अन्य चाह दुहुँ निवार ॥

दोहा

श्रीचम्पापुर जो पुरुष, पूजे मन वच काय ।
वर्णि 'दौल' सो पाय ही, सुख सम्पति अधिकाय ॥

ॐ ह्रीं श्री चम्पापुरसिद्धक्षेत्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा
इत्याशीर्वादः ।

श्री गिरनार सिद्धक्षेत्र पूजा

दोहा—वन्दों नेमि जिनेश पद, नेमि-धर्म दातार।
नेम धुरन्धर परम गुरु, भविजन सुख करतार॥
जिनवाणी को प्रणमि कर गुरु गणधर उरधार।
सिद्धक्षेत्र पूजा रचों, सब जीवन हितकार।
ऊर्जयन्त गिरिनाम तस, कह्यो जगत विख्यात।
गिरिनारी तासों कहत, देखत मन हर्षात॥

द्रुतविलंबित तथा सुन्दरी छन्द।

गिरि सु उन्नत सुभगाकार है, पञ्चकूट उत्तंग सुधार है।
वन मनोहर शिला सुहावनी, लखत सुन्दर मनको भावनी॥
अवर कूट अनेक बने तहां, सिद्ध थान सु अति सुन्दर जहां।
देखि भविजन मन हर्षावते, सकल जन वंदनको आवते॥

त्रिभंगी छन्द।

तहं नेमकुमार व्रत तप धारा, कर्म विदारा शिव पाई।
मुनि कोटि बहत्तर सात शतक धर तागिरि ऊपर सुखदाई॥
हैं शिवपुरवासी गुणके राशी विधि थिति नाशी ऋद्धिधरा।
तिनके गुण गाऊं पूज रचाऊँ, मन हर्षाऊँ सिद्धि करा॥
दोहा—ऐसो क्षेत्र महान तिहिं, पूजों मन वच काय।
त्रय बार जु कर थापना, तिष्ठ तिष्ठ इत आय॥

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन।
ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्र! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट्।

अष्टक, कवित्त।

लेकर नीर सु क्षीर समान महा सुखदान सु प्रासुक लाई।
दे त्रय धार जजों चरणा हरना मम जन्म जरा दुःखदाई॥
नेमिपती तज राजमती भये बालयती तहँतैं शिवपाई।
कोडि बहत्तरि सातसौ सिद्ध मुनीश भये सु जजों हर्षाई॥

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाये जल निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

चन्दनगारि मिलाय सुगन्ध सु, ल्याय कटोरी में धरना।
मोहमहातम मेटनकाज सु चर्चतु हों तुम्हरे चरना॥ नेमि०

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्रेभ्यो ससारतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

अक्षत उज्ज्वल ल्याय धरों, तहँ पुंज करो मनको हर्षाई।
देहु अखयपद प्रभु करुणा कर, फेर न या भववास कराई॥नेमि०

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

फूल गुलाब चमेली बेल कदंब सु चम्पक बीन सु ल्याई।
प्राशुकपुष्प लवंग चढ़ाय सु गाय प्रभू गुण काम नसाई॥ नेमि०

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्रेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

नेवज नव्य करों भर थाल सु कंचन भाजनमें धर भाई।
मिष्ट मनोहर क्षेपत हों यह रोग क्षुधा हरियो जिनराई॥नेमि०

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥

दीप बनाय धरों मणिका अथवा घृत बाति कपूर जलाई।
नृत्य करोंकर आरति ले मम मोह महातम जाय नशाई॥ नेमि०

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥

धूप दशांग सुगन्धमई कर खेवहु अग्नि मझार सुहाई।

शीघ्रहि अर्ज सुनो जिनजी मम कर्ममहावनदेउजराई ॥ नेमि०

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

ले फल सार सुगन्धमई, रसना हृद नेत्रनको सुखदाई।
क्षेपतहों तुम्हरे चरणा प्रभु देहु हमें शिवकी ठकुराई ॥ नेमि०

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

ले वसु द्रव्य सु अर्घ करों धर थाल सु मध्य महा हर्षाई।
पूजत हों तुमरे चरणा हरिये वसु-कर्मबली दुःखदाई ॥ नेमि०

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

दोहा—पूजत हों वसुद्रव्य ले, सिद्धक्षेत्र सुखदाय।
निजहितहेतु सुहावनो, पूरण अर्घ चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्चकल्याणक अर्घ, छन्द पाइता।

कातिक शुक्लाकी छठ जानों, गर्भागम ता दिन मानो।
उत इन्द्र जजे उस थानी, इत पूजत हम हर्षानी ॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लषष्ठ्यां गर्भमङ्गल प्राप्ताय श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं०।

श्रावण शुक्ल छठ सुखकारी, तब जन्म महोत्सव धारी।
सुरराज सुमेर न्हवाई, हम पूजत इत सुखपाई ॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ठ्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं०।

सित श्रावणकी छट्ठि प्यारी, ता दिन प्रभु दीक्षा धारी।
तप घोर वीर तहँ करना, हम पूजत तिनके चरणा ॥

ॐ ह्रींश्रावणशुक्लषष्टीदिने दीक्षामङ्गलप्राप्ताय श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं०।

एकम शुक्ल आश्विन भाषा, तब केवल ज्ञान प्रकाशा।

हरि समवशरण तब कीना, हम पूजत इत सुख लीना॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाप्रतिपदि केवलज्ञानप्राप्ताय श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं०।

सित अष्टमी मास अषाढ़ा, तब योग प्रभू ने छाड़ा।
जिन लई मोक्ष ठकुराई, इत पूजत चरणा भाई॥

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लाष्टम्यां मोक्षमङ्गलप्राप्ताय श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ०।

अडिल्ल छन्द।

कोडि बहत्तरि सप्त सैकड़ा जानिये।
मुनिवर मुक्ति गये तहँतै सु प्रमाणिये॥
पूजौ तिनके चरण सु मनवचकायकैं।
वसुविध द्रव्य मिलाय सु गाय बजायकैं॥

जयमाला।

दोहा— सिद्धक्षेत्र गिरिनार शुभ, सब जीवन सुखदाय।
कहों तासु जयमालिका, सुनतहि पाप नशाय॥१॥

पद्धडी छन्द।

जय सिद्धक्षेत्र तीरथ महान, गिरिनारि सुगिरि उन्नत बखान।
तहँ जूनागढ है नगर सार, सौराष्ट्र देश के मधि विथार॥२॥
तिस जूनागढ से चले सोइ, समभूमि कोस वर तीन होइ।
दरवाजे से चल कोस आध, इक नदी वहत है जल अगाध॥३॥
पर्वत उत्तर दक्षिण सु दोय, मधि वहत नदी उज्वल सु तोय।
ता नदी मध्य इक कुण्ड जान, दोनों तट मन्दिर बने मान॥४॥
तहँ वैरागी वैष्णव रहाय, भिक्षा कारण तीरथ कराय।
इक कोस तहां यह मच्यो ख्याल, आगैं इक वर नदी वहत नाल॥५॥
तहँ श्रावकजन करते सनान, धो द्रव्य चलत आगैं सु जान।
फिर मृगीकुण्ड इक नाम जान, तहा वैरागिन के बने थान॥६॥

वैष्णव तीरथ जहा रच्यो सोइ, वैष्णव पूजत आनन्द होइ ।
आगें चल डेढ सु कोस जाय, फिर छोटे पर्वत को चढ़ाव ॥ ७ ॥
तहां तीन कुण्ड सोहैं महान, श्रीजिन के युग मन्दिर वखान ।
मन्दिर दिगम्बरी दोय जान, श्वेतांबर के वहुते प्रमान ॥ ८ ॥
जहां बनी धर्मशाला सु जोय, जलकुण्ड तहां निर्मल सु तोय ।
श्वेताम्बर यात्री तहां जाय, ताकुण्ड माहिं नितही नहाय ॥ ९ ॥
फिर आगें पर्वत पर चढ़ाय, चढि प्रथम कूट को चले जाय ।
तहां दर्शन कर आगें सु जाय, तहां दुतिय टोंक के दर्श पाय ॥१०॥
तहां नेमनाथ के चरण जान, फिर है उतार भारी महान ।
तहा चढ कर पञ्चम टोंक जाय, अति कठिन चढ़ाव तहा लखाय ॥११॥
श्रीनेमनाथ का मुक्ति थान, देखत नयनों अति हर्ष मान ।
इक विंव चरणयुग तहा जान, भवि करत वन्दना हर्ष ठान ॥१२॥
कोउ करते जय जय भक्ति लाइ, कोऊ थुति पढते तहा सुनाय ।
तुम त्रिभुवनपति त्रैलोक्यपाल, मम दुःख दूर कीजे दयाल ॥१३॥
तुम राजऋद्धि भुगती न कोइ, यह अथिररूप संसार जोइ ।
तज मात पिता घर कुटुम्ब द्वार तज राजमती-सी सती नार ॥१४॥
द्वादशभावन भाई निदान, पशुवदि छोड दे अभय दान ।
शेसा वन में दीक्षा सु धार, तप करके कर्म किये सु छार ॥१५॥
ताही वन केवल ऋद्धि पाय, इन्द्रादिक पूजे चरण आय ।
तहां समवशरण रचियो विशाल, मणि पञ्चवर्ण कर अति रसाल ॥१६॥
तहा वेदी कोट सभा अनूप, दरवाजे भूमि वनी सु रूप ।
वसुप्रातिहार्य छत्रादि सार, वर द्वादश सभा वनो अपार ॥१७॥
करके विहार देशों मझार, भवि जीव करे भव सिन्धु पार ।
पुन टोंक पञ्चमीको सु जाय, शिव नाथ लह्यो आनन्द पाय ॥१८॥

सो पूजनीक वह थान जान, वन्दत जन तिनके पाप हान।
तहँतैं सु वहत्तर कोड और, मुनि सात शतक सब कहे जोर ॥१६॥
उस पर्वतसों सब मोक्ष पाय, सब भूमि सु पूजन योग्य थाय।
तहां देश-देश के भव्य आय, वन्दन कर बहु आनन्द पाय ॥२०॥
पूजन कर कीने पाप नाश, बहु पुण्य बंध कीनो प्रकाश।
यह ऐसो क्षेत्र महान जान, हम करी वन्दना हर्ष ठान ॥२१॥
उनईस शतक उनतीस जान, सम्वत् अष्टमि सित फाग मान।
सब संग सहित वन्दन कराय, पूजा कीनी आनन्द पाय ॥२२॥
अब दुःख दूर कीजे दयाल, कहैं 'चन्द्र' कृपा कीजे कृपाल।
मैं अल्पबुद्धि जयमाल गाय, भवि जीव शुद्ध लीज्यो बनाय ॥२३॥

घत्ता।

तुम दयाविशाला सब क्षितिपाला, तुमगुणमाला कण्ठ धरी।
ते भव्य विशाला तज जगजाला, नावत भाला मुक्तिवरी॥

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

चारित्र

आत्मा के स्वरूप में जो चर्या है उसी का नाम चारित्र है, वही वस्तु का स्वाभाविक धर्म है।

- संयम का पालन करना कल्याण का प्रमुख साधन है।
- संसार में वही जीव नीरोग रहता है, जो अपना जीवन चारित्र पूर्वक बिताता है।
- उपयोग की निर्मलता ही चारित्र है।

—'वर्णी वाणी' से

श्री पावापुर सिद्धक्षेत्र पूजा

जिहि पावापुर छित अघाति, हत सन्मति जगदीश।
भये सिद्ध शुभथान सो, जजों नाय निज शीश॥

ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधापनं।

अथाष्टक, गीता छन्द।

शुचि सलिल शीतौ कलिलरीतौ, श्रमण चीतौ लै जिसो।
भर कनक भारी त्रिगद हारी, दै त्रिधारी जित तृषो॥

वर पद्म वर भर पद्म सरवर, वहिर पावा ग्राम ही।
शिवधाम सन्मत स्वामी पायो, जजों सो सुखदा मही॥

ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो वीरनाथ जिनेन्द्राय जन्ममृत्युरोगविनाशनाय जलं० ॥१॥

भव भ्रमत भ्रमत अशर्म तपकी, तपन कर तप ताइयो।
तसु वलय-कन्दन मलय-चन्दन, उदक सग घिसाइयो॥ वर०

ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो वीरनाथ जिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं० ॥२॥

तन्दुल नवीन अखण्ड लीने, ले महीने ऊजरे।
मणिकुन्द इन्दु तुषार द्युति जित, कनक-रकाबी में धरे॥ वर०

ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो वीरनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं० ॥ ३ ॥

मकरन्दलोभन सुमन शोभन सुरभि चोभन लेय जी।
मद समर हरवर अमर तरुके, प्राण-दृग हरखेय जी॥ वर०

ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो वीरनाथ जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं० ॥ ४ ॥

नैवेद्य पावन छुध मिटावन, सेव्य भावन युत किया।
रस मिष्ट पूरित इष्ट सूरति, लेयकर प्रभु हित हिया॥ वर०

ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो वीरनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ॥ ५ ॥

तम अज्ञ नाशक स्वपरभाशक ज्ञेय परकाशक सही।
हिमपात्रमे धर मौल्यबिन वर द्योतधर मणि दीपही ॥ वर०

ॐ ह्री श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो वीरनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं० ॥६॥

आमोदकारी वस्तुसारी विध दुचारी-जारनी।
तसु तूप कर कर धूप ले दशदिश-सुरभि-विस्तारनी ॥ वर०

ॐ ह्री श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो वीरनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं० ॥ ७ ॥

फल भक्ष पक्व सुचक्ष्य सोहन, सुक्ष जनमन मोहने।
वर सुरस पूरित त्वरित मधुरत लेय कर अति सोहने ॥ वर०

ॐ ह्री श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो वीरनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं० ॥ ८ ॥

जल गन्ध आदि मिलाय वसुविध थारस्वर्ण भरायकै।
मन प्रमुद भाव उपाय करले आय अर्घ बनायकै ॥ वर०

ॐ ह्री श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो वीरनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं० ॥ ९ ॥

जयमाला।

दोहा—चरम तीर्थ करतार, श्री वर्द्धमान जगपाल।
कलमलदल विध विकल है, गाऊँ तिन जयमाल ॥

पद्धडी छन्द।

जय जय सुवीर जिन मुक्ति थान, पावापुर वन सर शोभवान।
जे सित असाढ छट स्वर्ग धाम, तज पुष्पोत्तर सुविमान ठान ॥ १ ॥
कुण्डलपुर सिद्धारथ नरेश, आये त्रिशला जननी उरेश।
सित चैत त्रयोदशि युत त्रिज्ञान, जनमे तम अज्ञ-निवार भान।
पूर्वाह्न धवल चउदिश दिनेश, किय न्हवन कनकगिरि-शिर सुरेश।
वय वर्ष तीस पद कुमरकाल, सुख दिव्य भोग भुगते विशाल ॥ २ ॥

मगसिर अलि दशमी पवित्र, चढ चन्द्रप्रभा शिविका विचित्र।
बलि पुर सों सिद्धन शीशनाय, धार्‌यो संजम वर शर्मदाय ॥ ४ ॥
गत वर्ष दुदश कर तप विधान, दिन शित वैशाख दशै महान।
रिजुकूला सरिता तट स्व सोध, उपजायो जिनवर चमर बोध ॥ ५ ॥
तब ही हरि आज्ञा शिर चढाय, रचि समवशरण वर धनदराय।
चउसंघ प्रकृति गौतम गणेश युत तीस वर्ष विहरे जिनेश ॥ ६ ॥
भविजीव देशना विविध देत, आये वर पावानगर खेत।
कार्तिक अलि अन्तिम दिवस ईश, कर योग निरोध अघाति पीस ॥ ७ ॥
ह्वै सिद्ध अमल इक समय माहिं, पञ्चम गति पाई श्री जिनाह।
तव सुरपति जिनरवि अस्त जान, आये तुरन्त चढि निज विमान ॥ ८ ॥
कर वपु अरचा थुति विविध भांत, लै विविध द्रव्य परिमल विख्यात।
तव ही अगणीन्द्र नवाय शीश, सस्कार देह को त्रिजगदीश ॥ ९ ॥
कर भस्म वन्दना निज महीय, निवसे प्रभु गुण चितवन स्वहीय।
पुनि नर मुनि गणपति आय-आय, वदी सो रज शिर नाय-नाय ॥१०॥
तवही सो सो दिन पूज्य मान, पूजत जिनगृह जन हर्ष मान।
मैं पुन-पुन तिस भुवि शीश धार, वन्दौ तिन गुणधर उर मझार ॥११॥
तिनही का अब भी तीर्थ एह, वरतत दायक अति शर्म गेह।
अरु दुःखमकाल अवसान ताहि, वर्तेगो भव तिथि हर सदाहि ॥१२॥

कुसुमलता छन्द।

श्रीसन्मति जिन अघ्रिपद्म युग जजै भव्य जो मन वच काय।
ताके जन्म-जन्म संचित अघ जावहि इक छिन माहिं पलाय ॥
धन धान्यादिक शर्म इन्द्रपद लहै सो शर्म अतीन्द्री थाय।
अजर अमर अविनाशी शिवथल वर्णी दौल रहै शिर नाय ॥

ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो महार्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सोनागिरि सिद्धक्षेत्र पूजा

अडिल्ल छन्द ।

जम्बूद्वीप मझार सु भरत क्षेत्र कहो ।
आर्य खण्ड सु जान भद्र देशे लहो ॥
सुवर्णगिरि अभिराम सु पर्वत है तहां ।
पञ्चकोड़ि अरु अर्द्ध गये मुनि शिव तहां ॥१॥

दोहा — सोनागिरिके शीश पर, बहुत जिनालय जान ।
चन्द्रप्रभु जिन आदि दे, पूजों सब भगवान ॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो । अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानन ।
ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन ।
ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टक, सारङ्ग छन्द ।

पद्मद्रह को नीर ल्याय गंगा से भरके ।
कनक कटोरी मांहि हेम थारन में धरके ॥
सोनागिरिके शीश भूमि निर्वाण सुहाई ।
पञ्चकोडि अरु अर्द्ध मुक्ति पहुँचे मुनिराई ॥
चन्द्रप्रभु जिन आदि सकल जिनवर पद पूजो ।
स्वर्ग मुक्ति फल पाय जाय अविचल पद हूजो ॥

दोहा — सोनागिरि के शीष पर, जेते सब जिनराज ।
तिनपद धारा तीन दे, तृषा हरण के काज ॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

केसर आदि कपूर मिले मलयागिरि चन्दन ।
परिमल अधिको तास और सब दाह निकन्दन ॥

सोनागिरि के शीश पर, जेते सब जिनराज ।
ते सुगन्ध कर पूजिये, दाह निकन्दन काज ॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

तन्दुल धवल सुगन्ध ल्याय जल धोय पखारो ।
अक्षय पद के हेतु पुञ्ज द्वादश तहँ धारो ॥
सोनागिरि के शीश पर, जेते सब जिनराज ।
तिन पद पूजा कीजिये, अक्षय पद के काज ॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

बेला और गुलाब मालती कमल मंगाये ।
पारिजात के पुष्प ल्याय जिन चरण चढ़ाये ॥
सोनागिरि के शीश पर, जेते सब जिनराज ।
ते सब पूजों पुष्प ले, मदन विनाशन काज ॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

विंजन जो जगमांहि खांडघृत मांहि पकाये ।
मीठे तुरत बनाय हेम थारी भर ल्याये ॥
सोनागिरि के शीश पर, जेते सब जिनराज ।
ते पूजों नैवेद्य ले, क्षुधा हरण के काज ॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

मणिमय दीप प्रजाल धरौं पंकति भर थारी ।
जिन मन्दिर तम हार करहु दर्शन नर-नारी ॥
सोनागिरि के शीश पर, जेते सब जिनराज ।
करों दीप ले आरती, ज्ञान प्रकाशन काज ॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

दशविध धूप अनूप अगनि भाजन मे डालो।
जाकी धूप सुगन्ध रहे भर सर्व दिशालों॥
सोनागिरि के शीश पर जेते सब जिनराज।
धूप कुम्भ आगे धरो, कर्म दहन के काज॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्मविध्वंशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा॥ ७॥

उत्तम फल जग माहि बहुत मीठे अरु पाके।
अमित अनार अवार आदि अमृत रस छाके॥
सोनागिरि के शीश पर, जेते सब जिनराज।
उत्तम फल तिनको मिले, कर्म विनाशन काज॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा॥ ८॥

दोहा – जल आदिक वसु द्रव्य अर्घ करके धर नाचो।
बाजे बहुत बजाय पाठ पढ़ के सुख सांचो॥
सोनागिरि के शीश पर, जेते सब जिनराज।
ते हम पूजे अर्घ ले, मुक्ति रमण के काज॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

अडिल्ल छन्द।

श्री जिनवर की भक्ति सु जे नर करत है।
फल वांछा कुछ नाहि प्रेम उर धरत है॥
ज्यों जगमाहिं किसान सु खेती को करैं।
नाज काज जिय जान सु शुभ आपहि झरैं॥
ऐसे पूजादान भक्ति यश कीजिये।
सुख सम्पति गति मुक्ति सहज पा लीजिये॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जयमाला।

दोहा—सोनागिरिके शीश पर, जिन-मन्दिर अभिराम।
तिन गुणकी जयमालिका, वर्णत 'आशाराम' ॥१॥

पद्धड़ी छन्द।

गिरि नीचे जिन मन्दिर सुचार, ते यतिन रचे शोभा अपार।
तिनके अति दीरघ चौक जान, तिनमे यात्री भेलें सु आन ॥ २ ॥
गुमटी छज्जे शोभित अनूप, ध्वज पद्धति सोहैं विविध रूप।
वसु प्रातिहार्य तहां धरे आन, सब मङ्गल द्रव्यन की सुखान ॥ ३ ॥
दरवाजों पर कलशा निहार, करजोर सु जय जय ध्वनि उचार।
इक मन्दिरमें यति राजमान, आचार्य विजय कीर्ति सुजान ॥ ४ ॥
तिन शिष्य भागीरथ विबुध नाम, जिनराज भक्ति नही और काम।
अन पर्वत को चढ चलो जान, दरवाजो तहा इक शोभमान ॥ ५ ॥
तिस ऊपर जिन प्रतिमा निहार, तिन वंदि पूज आगे सिधार।
तहां दुःखित भुखित को देत दान, याचक जन जहां हैं अप्रमाण ॥६॥
आगे जिन मन्दिर दुहूं ओर, जिन गान होत वादित्र शोर।
माली बहु ठाडे चौक पौर, ले हार कलङ्गी तहां देत दौर ॥ ७ ॥
जिन यात्री तिनके हाथ मांहि, बखशीस रीझ तहां देत जाहिं।
दरवाजो तहा दूजो विशाल, तहां क्षेत्रपाल दोउ ओर लाल ॥ ८ ॥
दरवाजे भीतर चौक मांहि जिन भवन रचे प्राचीन आंहि।
तिनकी महिमा वरणी न जाय, दो कुण्ड सुजलकर अति सुहाय ॥९॥
जिन मन्दिर की वेदी विशाल, दरवाजे तीनों बहु सु ढाल।
ता दरवाजे पर द्वारपाल, ले मुकुट खड़े अरु हाथ माल ॥ १० ॥

जे दुर्जन को नहीं जान देय. ते निन्दक को ना दरश देय।
चल चन्द्र प्रभु के चौक माहि. दालाने तहां चौतर्फ आहि ॥ ११ ॥
तहां मध्य सभा मण्डप निहार, तिसकी रचना नाना प्रकार।
तहां चन्द्रप्रभु के दरश पाय, फल जात लहो नर जन्म आय ॥ १२ ॥
प्रतिमा विशाल तहां हाथ सात. कायोत्सर्ग मुद्रा सुहात।
वन्दे पूजें तहां देय दान, जननृत्य भजन कर मधुर गान ॥ १३ ॥
ता थेई थेई थेई बाजत सितार. मृदङ्ग बीन मुहचङ्ग सार।
तिनकी ध्वनि सुनि भवि होत प्रेम, जयकार करत नाचत सु एम ॥ १४ ॥
ते स्तुति करके फिर नाय शीस, भवि चले मनो कर कर्म खीस।
इह सोनागिरि रचना अपार, वर्णन कर को कवि लहैं पार ॥ १५ ॥
अति तनक बुद्धि 'आशा' सुपाय. वश भक्ति कही इतनी सु गाय।
मैं मन्दबुद्धि किम लहों पार, बुद्धिवान चूक लीजे सुधार ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—सोनागिरि जयमालिका, लघुमति कही बनाय।
पढ़े सुने जो प्रीतसे, सो नर शिवपुर जाय ॥

इत्याशीर्वादः।

श्री खण्डगिरि क्षेत्र पूजा

दोहा

अंगवंग के पास है देश कलिंग विख्यात।
तामें खण्डगिरि लसत है, दर्शन भव्य सुहात।
दसरथ राजा के सुत अति गुणवान जी।
और मुनीश्वर पञ्च सैंकड़ा जान जी॥
अष्ट-कर्म कर नष्ट मोक्षगामी भये।
तिनके पूजहुँ चरण सकल मंगल ठये॥

ॐ ह्रीं श्री कलिंगदेशमध्ये खण्डगिरि सिद्धक्षेत्र से सिद्धपद प्राप्त दशरथ राजा के सुत तथा पञ्चशतक मुनि! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानन। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधापनम्।

अथाष्टक।

अति उत्तम शुचि जल ल्याय, कञ्चन कलश भरा।
करूं धार सु मन वच काय, नाशत जन्म जरा॥
श्री खण्डगिरि के शीश जसरथ तनय कहे।
मुनि पञ्चशतक शिव लीन देश कलिंग दहे॥

ॐ ह्रीं श्री खण्डगिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा॥1॥

केशर मलयागिरि सार, घिसके सुगन्ध किया।
संसार ताप निरवार, तुम पद बसत हिया॥ श्री०॥

ॐ ह्रीं श्री खण्डगिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा॥2॥

मुक्ताफल की उनमान, अक्षत शुद्ध लिया।
मम सर्व दोष निरवार, निजगुण मोह दिया॥ श्री०॥

ॐ ह्रीं श्री खण्डगिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥ 3॥

ले सुमन कल्पतरु थार, चुन-चुन ल्याय धरूं।
तुम पद ढिग धरतहि, बाण काम समूल हरूं॥ श्री०॥

ॐ ह्रीं श्री खण्डगिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो कामबाणविध्वंशनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा॥ 4॥

लाडू घेवर शुचि ल्याय, प्रभु पद पूजन को।
धरूं चरणन ढिग आय, मम क्षुधा नाशन को॥ श्री० ॥
ॐ ह्रीं श्री खण्डगिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥
ले मणिमय दीपक थार, दोय कर जोड धरो।
मम मोह अन्धेर निरवार, ज्ञान प्रकाश करों ॥ श्री० ॥
ॐ ह्रीं श्री खण्डगिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥
ले दशविधि गन्ध कुटाय, अग्नि मझार धरों।
मम अष्ट-कर्म जल जांय, यातें पांय परों ॥ श्री० ॥
ॐ ह्रीं श्री खण्डगिरि सिद्धक्षत्रभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥
श्रीफल पिस्ता सु बदाम, आम नारंगि धरूं।
ले प्रासुक हिम के थार, भवतर मोक्ष वरूं ॥ श्री० ॥
ॐ ह्रीं श्री खण्डगिरि सिद्धक्षेत्रभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥
जल फल वसु द्रव्य पुनीत, लेकर अर्घ करूं।
नाचूं गाऊ इह भांत, भवतर मोक्ष वरूं ॥ श्री० ॥
ॐ ह्रीं श्री खण्डगिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाला।

दोहा — देश कलिंगके मध्य है, खण्डगिरि सुखधाम।
उदयागिरि तसु पास है, गाऊँ जय जय धाम ॥
श्रीसिद्ध खण्डगिरि क्षेत्र जान, अति सरल चढाई तहा मान।
अति सघन वृक्ष फल रहे आय, तिनकी सुगन्ध दशदिश जु जाय ॥
ताके सु मध्य में गुफा आय, नव मुनि सुनाम ताको कहाय।
तामें प्रतिमा दशयोग धार, पद्मासन है हरि चवर डार ॥
ता दक्षिण दिश इक गुफा जान, तामें चौबीस भगवान मान।

प्रति प्रतिमा इन्द्र खड़े दुओर, कर चंवर धरें प्रभु भक्ति जोर ॥
आजू बाजू खड़ी देवी द्वार, पद्मावती चक्रेश्वरी सार।
कर द्वादश भुजि हथियार धार, मानहुं निन्दक नहिं आवें द्वार ॥
ताके दक्षिण चली गुफा आय, सतबखरा है ताको कहाय।
तामें चौबीसी बनी सार, अरु त्रय प्रतिमा सब योग धार ॥
सबमें हरि चमर सु धरहिं हाथ, नित आय भव्य नावहिं सु माथ।
ताके ऊपर मन्दिर विशाल, देखत भविजन होते निहाल ॥
ता दक्षिण टूटी गुफा आय, तिनमें ग्यारह प्रतिमा सुहाय।
पुनि पर्वत के ऊपर सु जाय, मन्दिर दीरघ मन को लुभाय ॥
तामें प्रतिमा भगवान जान, खड्गासन योग धरें महान।
ले अष्ट द्रव्य तनु पूज्य कीन, मन वच तन करि मम धोक दीन ॥
भयो जन्म सफल अपनो सु भाय, दर्शन अनूप देखो जिनाय।
जब अष्ट-कर्म होंगे जु चूर, जातैं सुख पाहें पूर-पूर ॥
पूरब उत्तर द्वय निज सु धाम, प्रतिमा खड्गासन अति महान।
दर्शन करके मन शुद्ध होय, शुभ बन्ध होय निश्चय जु जोय ॥
पुनि एक गुफा में बिम्बसार, ताको पूजन कर फिर उतार।
पुनि और गुफा खाली अनेक, ते हैं मुनिजन के ध्यान हेत ॥
पुनि चल कर उदयगिरि सुजाय, भारी-भारी जु गुफा लखाय।
इक गुफा माहिं जिनराय जान, पद्मासन धर प्रभु करत ध्यान ॥
जो पूजत हैं मन वचन काय, सो भव-भव के पातक नशाय।
तिनमें इक हाथी गुफा जान, प्राचीन लेख शोभे महान ॥
महाराज खारवेल नाम जास, जिनने जिनमत का किया प्रकाश।
बनवाई गुफा मन्दिर अनेक, अरु करी प्रतिष्ठा भी अनेक ॥

इसका प्रमाण वह शिलालेख, बतलाता है जैनत्व एक।
प्रारम्भ लेख में यह बखान, सिद्धों को वन्दन अरु प्रणाम॥
स्वस्तिकका चिह्न विराजमान, जो जैन-धर्म का है महान।
मथुरापति से उन युद्ध कीन, प्रतिमा आदीश्वर फेर लीन॥
तालाब, कूप, वापी अनेक, खुदवाई उन कर्त्तव्य पेख।
रानी भी दानी थीं विशेष, बनवाई गुफा उनने अनेक॥
पुनि और गुफा मे लेख जान, पढ़ते जिनमत मानत प्रधान।
तहं जसरथ नृप के पुत्र आय, मुनि संग पाय सौ भी लहाय॥
तप बारह विधि का यह करन्त, बाईस परीषह वह सहन्त।
पुनि समिति पञ्च युत चलें सार, छ्यालीस दोष टल कर अहार॥
इस विधि तप दुद्धर करत जोय, सो उपजे केवलज्ञान सोय।
सब इन्द्र आज अति भक्ति धार, पूजा कीनी आनन्द धार॥
धर्मोपदेश दे भव्य तार, नाना देशन में कर विहार।
पुनि आये याही शिखर थान, सो ध्यान योग्य माना महान॥
भये सिद्ध अनन्ते गुणन ईश, तिनके युग पद पर धरत शीश।
तिन सिद्धन को पुनि-पुनि प्रणाम, जिन सुख अविचल माना सुधाम॥
वन्दत भव दुःख जावे पलाय, सेवक अनुक्रम शिवपद लहाय।
पूजन करता हूँ मैं त्रिकाल, कर जोड़ नमत है "मुन्नालाल"॥

घत्ता।

उदयागिरि क्षेत्रं अति सुख देतं, तुरतहि भवदधि पार करं।
जो पूजे ध्यावे कर्म नसावे, वांछित पावे मुक्ति वरं॥

ॐ ह्रीं श्री खण्डगिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो जयमालाऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—श्री खण्डगिरि उदयगिरि, जो पूजे त्रैकाल।
पुत्र पौत्र सम्पति लहे, पावे शिव सुख हाल॥

इत्याशीर्वाद।

ले तन्दुल अमल अखण्ड, थाली पूर्ण भरो।
अक्षय पद पावन हेतु, हे प्रभु पाप हरो॥ बाड़ा के०
ॐ ह्री श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

ले कमल केतुकी बेल, पुष्प धरू आगे।
प्रभु सुनिये हमारी टेर, काम कला भागे॥ बाड़ा के०
ॐ ह्री श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नैवेद्य तुरत बनवाय, सुन्दर थाल सजा।
मम क्षुधा रोग नश जाय, गाऊँ वाद्य बजा॥ बाडा के०
ॐ ह्री श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

हो जगमग-जगमग ज्योति, सुन्दर अनयारी।
ले दीपक श्रीजिनचन्द, मोह नशे भारी॥ बाडा के०
ॐ ह्री श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

ले अगर कर्पूर सुगन्ध, चन्दन गन्ध महा।
खेवत हों प्रभु ढिग आज, आठों कर्म दहा॥ बाड़ा के०
ॐ ह्री श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल बादाम सु लेय, केला आदि हरे।
फल पाऊँ शिव पद नाथ, अरपूं मोद भरे॥ बाडा के०
ॐ ह्री श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल चन्दन अक्षत पुष्प, नेवज आदि मिला।
मैं अष्ट द्रव्य से पूज, पाऊँ सिद्ध शिला॥ बाड़ा के०
ॐ ह्री श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अर्घ्य [illegible]

दोहा—चरण-कमल श्रीपद्मके, वन्दों मनवचकाय ।
अर्घ चढ़ाऊँ भावसे, कर्म नष्ट हो जाय ॥ बाड़ाके०

[illegible] स्वाहा ।

भूमि के अन्दर विराजमान समय का अर्घ

धरती में श्री पद्म की, पद्मासन आकार ।
परम दिगम्बर शान्तिमय, प्रतिमा भव्य अपार ॥
सौम्य शान्त अति कान्तिमय, निर्विकार साकार ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ ले, पूजूं विविध प्रकार ॥ बाड़ाके०

[illegible] स्वाहा ।

[illegible] ।

श्रीपद्म प्रभु जिनराजजी, मोहि राखो हो शरणा ॥ टेर ॥

माघ कृष्ण षष्ठि में प्रभो, आये गर्भ मझार ।
मात सुसीमा का जनम, किया सफल कर्तार ॥ श्री पद्मम०

[illegible] ॥ १ ॥

कार्तिक शुक्ल तेरस तिथी, प्रभो लियो अवतार ।
देवों ने पूजा करी, हुआ मंगलाचार ॥ श्री पद्मम०

[illegible] ॥ २ ॥

कार्तिक शुक्ल त्रयोदशी, तृणवत बन्धन तोड़ ।
तप धारा भगवान ने, मोह कर्म को मोड़ ॥ श्री पद्मम०

ॐ ह्रीं कार्तिक शुक्ल तेरस [illegible] श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय अर्घं० ॥ ३ ॥

चैत्र शुक्ल की पूर्णिमा, उपज्यो केवलज्ञान।
भवसागर से पार हो, दियो भव्य जन ज्ञान॥ श्री पद्म०

ॐ ह्रीं चैत शुक्ल पूर्णिमा केवलज्ञान प्राप्ताय श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय अर्घ्यं०॥ ४॥

फाल्गुन कृष्ण सु चौथ को, मोक्ष गये भगवान।
इन्द्र आय पूजा करी, मैं पूजौं धर ध्यान॥ श्री पद्म०

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्ण चौथ मोक्षमङ्गल प्राप्ताय श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय अर्घ्यं०॥ ५॥

जयमाला।

दोहा—चौतीसो अतिशय सहित, बाडा के भगवान।
जयमाला श्री पद्म की, गाऊँ सुखद महान॥

पद्धडी छन्द।

जय पद्मनाथ परमात्म देव, जिनकी करते सुर चरण सेव।
जय पद्म-पद्म प्रभु तन रसाल, जय जय करते मुनिमन विशाल॥
कोशाम्बी मे तुम जन्म लीन, बाडा मे बहु अतिशय करीन।
एक जाट पुत्र ने जमी खोद, पाया तुमको होकर समोद॥
सुर कर हर्षित हो भविक वृन्द, आकर पूजा की दुःख निकन्द।
करते दुःखियो का दुःख दूर, हो नष्ट प्रेत बाधा जरूर॥
डाकिन साकिन सब होय चूर्ण, अन्धे हो जाते नेत्र पूर्ण।
श्रीपाल सेठ अञ्जन सु चोर, तारे तुमने उनको विभोर॥
अरु नकुल सर्प सीता समेत, तारे तुमने निज भक्त हेत।
हे सङ्कट मोचन भक्त पाल, हमको भी तारो गुण विशाल॥
विनती करता हूँ बार-बार, होवे मेरा दुःख क्षार-क्षार।
मीना गूजर सब जाट जैन, आकर पूजे कर तृप्त नैन॥
मन वच तन से पूजैं सुजोय, पावे वे नर-शिव सुख जु सोय।
ऐसी महिमा तेरी दयाल, अब हम पर भी होवो कृपाल॥

ॐ ह्रीं श्री पद्म प्रभु जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं०॥ ४॥

श्री बाहुबली स्वामी की पूजा

दोहा—कर्म अरिगण जीति के, दरशायो शिव पन्थ।
प्रथम सिद्ध पद जिन लयो, भोगभूमि के अन्त॥
समर दृष्टि जल जीत लहि, मल्ल युद्ध जय पाय।
वीर अग्रणी बाहुबली, वन्दौ मन वच काय॥

ॐ ह्री श्रीमद् बाहुबली। अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्री श्रीमद् बाहुबली। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनं।
ॐ ह्री श्रीमद् बाहुबली। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधापनं।

अथ अष्टकं चाल जोगीरासा।

जन्म जरा मरणादि तृषा कर, जगत जीव दुःख पावैं।
तिहि दुःख दूर करन जिनपद को पूजन जल ले आवैं॥
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहुबली बलधारी।
तिनके चरण-कमल को नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी॥

ॐ ह्री श्री वर्तमानावसर्पिणी समये प्रथम मुक्ति स्थान प्राप्ताय कर्मारि विजयी वीराधीवीर वीराग्रणी श्री बाहुबली परम योगीन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल ॥१॥

यह संसार मरुस्थल अटवी तृष्णा दाह भरी है।
तिहि दुःख वारन चन्दन लेकै जिन पद पूज करी है॥ परम०

ॐ ह्री श्री　　संसारतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

स्वच्छ शालि शुचि नीरज रजसम गन्ध अखण्ड प्रचारी।
अक्षय पद के पावन कारण पूजैं भवि जगतारी॥ परम०

ॐ ह्री श्री　　अक्षयपदप्राप्तये अक्षत निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

हरिहर चक्रपति सुर दानव मानव पशु बस याकै।
तिहि मकरध्वज नाशक जिनको पूजो पुष्प चढ़ाकै॥ परम०
ॐ ह्री श्री　　　　कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

दु:खद त्रिजग जीवन को अतिही दोष क्षुधा अनिवारी।
तिहि दु:ख दूर करन को चरुवर ले जिन पूज प्रचारी॥ परम०
ॐ ह्री श्री　　　　क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥

मोह महातम मे जग जीवन शिव मग नाहिं लखावै।
तिहि निरवारण दीपक करले जिनपद पूजन आवै॥ परम०
ॐ ह्री श्री　　　　मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥

उत्तम धूप सुगन्ध बना कर दश दिश मे महकावै।
दश विधि बन्ध निवारण कारण जिनवर पूज रचावै॥ परम०
ॐ ह्री श्री　　　　अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा॥ ७॥

सरस सुवरण सुगन्ध अनूपम स्वच्छ महाशुचि लावै।
शिवफल कारण जिनवर पद की फलसो पूज रचावै॥ परम०
ॐ ह्री श्री　　　　मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा॥ ८॥

वसु विधिके वश वसुधा सबही परवश अति दु:ख पावै।
तिहि दु:ख दूर करन को भविजन अर्घ जिनाग्र चढ़ावै॥ परम०
ॐ ह्री श्री　　　　अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

जयमाला. दोहा।

आठ कर्म हनि आठ गुण प्रगट करे जिन रूप।
सो जयवन्तो भुजवली प्रथम भये शिव भूप॥

कुसुमलता छन्द।

जै जै जै जगतार शिरोमणि क्षत्रिय वंश अशंस महान।
जै जै जै जग जन हितकारी दीनों जिन उपदेश प्रमाण॥
जै जै चक्रपति सुत जिनके शत सुत जेष्ठ भरत पहिचान।
जै जै जै श्री ऋषभदेव जिनसों जयवन्त सदा जगजान॥ १॥
जिनके द्वितीय महादेवी शुचि नाम 'सुनन्दा' गुण की खान।
रूप शील सम्पन्न मनोहर तिनके सुत भुजबली महान॥
सवापञ्च शत धनु उन्नत तनु हरितवरण शोभा असमान।
वैडूरजमणि पर्वत मानो नील कुलाचल सम थिर जान॥ २॥
तेजवन्त परमाणु जगत में तिन कर रचो शरीर प्रमाण।
शान वीरत्व गुणाकर जाको निरखत हरि हर्ष उर आन॥
धीरज अतुल वज्र सम नीरज सम वीराग्रणि अति बलवान।
जिन छवि लखि मनु शशि छवि लाजै कुसुमायुध लीनों सु पुमान॥ ३॥
बाल समै जिन बाल चन्द्रमा शशि से अधिक धरे दुतिसार।
जो गुरुदेव पढाई विद्या शस्त्र शास्त्र सब पढ़ी अपार॥
ऋषभदेव ने पोदनपुर के नृप कीने भुजबली कुमार।
दई अयोध्या भरतेश्वर को आप बने प्रभुजी अनगार॥ ४॥
राजकाज षट्खण्ड महीपति सब दल लै चढ़ि आये आप।
बाहुबलि भी सन्मुख आये मन्त्रिन तीन युद्ध दिये थाप॥
दृष्टि नीर अरु मल्ल युद्ध मे दोनों नृप कीनो बल धाप।
वृथा हानि रुक जाय सैन्य की बातें लडिये आपों-आप॥ ५॥
भरत भुजबली भूपति भाई उतरे समर भूमि में जाय।
दृष्टि नीर रण थके चक्रपति मल्लयुद्ध तब करो अघाय॥

पगतल चलत-चलत अचला तब कंपत अचल शिखर ठहराय।
निषध नील अचलाधर मानों भये चलाचल क्रोध बसाय॥ ६॥
भुज विक्रमबलबाहुबलीनें लये चक्रपति अधर उठाय।
चक्र चलायो चक्रपति तब सो भी विफल भयो तिहि ठाय॥
अति प्रचण्ड भुजदण्ड सुंड सम नृप शार्दुल बाहुबलि राय।
सिंहासन मगवाय जासपैं अग्रज को दीनों पधराय॥ ७॥
राजरमा रामासुर धुन मे जोवन दमक दामिनी जान।
भोग भुजङ्ग जङ्ग सम जग को जान त्याग कीनों तिहि थान॥
अष्टापद पर जाय वीरनृप वीर व्रती धर कीनों ध्यान।
अचल अङ्ग निरभङ्ग सङ्ग तज संवतसरलों एक स्थान॥ ८॥
विषधर वम्बी करी चरनतल ऊपर वेल चढ़ी अनिवार।
युगलङ्घा कटि बाहुवेढि कर पहुँची वक्षस्थल परसार॥
शिर के केश बढ़े जिस मांहीं नभचर पक्षी वसे अपार।
धन्य-धन्य इस अचल ध्यान की महिमा सुर गावें उरधार॥ ६॥
कर्मनाशि शिव जाय वसे प्रभु ऋषभेश्वर से पहले जान।
अष्ट गुणाङ्कित सिद्ध शिरोमणि जगदीश्वर पद लयो पुमान॥
वीरव्रती वीराग्रगन्य प्रभु बाहुबली जगधन्य महान।
वीरवृत्ति के काज जिनेश्वर नमैं सदा जिन बिम्ब प्रमान॥ १०॥

दोहा—श्रवणबेलगुल विंध्य गिरि जिनवर बिंब प्रधान।
सन्तावन फुट उत्तङ्ग तनो खडगासन अमलान॥ १॥
अतिशयवन्त अनन्त बल धारक बिंब अनूप।
अर्घ चढ़ाय नमों सदा जै जै जिनवर भूप॥ २॥

ॐ ह्रीं वर्तमानावसर्पिणी समये प्रथम मुक्तिस्थान प्राप्ताय कर्मारि विजयी वीराधिवीर वीराग्रणी श्री बाहुबलि स्वामिने अनर्घपद प्राप्ताय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इत्याशीर्वादः।

श्री विष्णुकुमार महामुनि पूजा

अडिल्ल छन्द।

विष्णुकुमार महामुनि को ऋद्धि भई।
नाम विक्रिया तास सकल आनन्द ठई॥
सो मुनि आये हथनापुर के बीच मे।
मुनि बचाये रक्षा कर वन बीच मे॥ १॥

तहा भयो आनन्द सर्व जीवन घनो।
जिमि चिन्तामणि रत्न एक पायो मनो॥
सब पुर जै जै कार शब्द उचरत भये।
मुनि को देय आहार आप करते भये॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो। अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन।
ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल—सोलह कारण पूजा की, अष्टक।

गङ्गाजल सम उज्ज्वल नीर, पूजो विष्णुकुमार सुधीर।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय॥
सात सैकड़ा मुनिवर जान, रक्षा करी विष्णु भगवान।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय॥
ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो नमः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा

मलयागिर चन्दन शुभसार, पूजो श्रीगुरुवर निर्धार।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय॥ सात०
ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो नमः भवआतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

श्वेत अखण्डित अक्षत लाय, पूजो श्रीमुनिवर के पाय ।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ॥ सप्त०
ॐ ह्री श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो नम अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

कमल केतकी पुष्प चढाय, मेटो कामवाण दुःखदाय ।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ॥ सप्त०
ॐ ह्री श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो नम कामवाणविध्वसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।

लाडू फेनी घेवर लाय, सब मोदक मुनि चर्ण चढाय ।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ॥ सप्त०
ॐ ह्री श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो नम क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।

घृत कपूर का दीपक जोय, मोहतिमर सब जावे खोय ।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ॥ सप्त०
ॐ ह्री श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो नम मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ।

अगर कपूर सुधूप बनाय, जारे अष्ट कर्म दुःखदाय ।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ॥ सप्त०
ॐ ह्री श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो नम अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।

लोग लायची श्रीफल सार, पूजो श्रीमुनि सुखदातार ।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ॥ सप्त०
ॐ ह्री श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो नम मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल आठो द्रव्य संजोय, श्रीमुनिवर पद पूजो दोय ।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ॥ सप्त०
ॐ ह्री श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो नम अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ जयमाला।

दोहा—श्रावण शुक्ल सु पूर्णिमा, मुनि रक्षा दिन जान।
रक्षक विष्णुकुमार मुनि, तिन जयमाल बखान॥

चाल—छन्द भुजङ्गप्रयात।

श्री विष्णु देवा करूं चर्ण सेवा, हरो जन की बाधा सुनो टेर देवा।
गजपुर पधारे महा सुक्खकारी, धरो रूप वामन सु मन में विचारी॥
गये पास बलि के हुआ वो प्रसन्ना, जो मांगो सो पावो दिया ये वचन्ना।
मुनि तीन डग मांगी धरनी सुतापे, दई ताने ततछिन सु नहिं ढील थापे॥
करी विक्रिया मुनि सु काया बढ़ाई, जगह सारी लेली सु डग दोके मांही।
धरी तीसरी डग बली पीठ मांही, सु मांगी क्षमा तब बली ने बनाई॥
जल की सु वृष्टि करी सुक्खकारी, सरव अग्नि क्षण में भई भस्म सारी।
टरे सर्व उपसर्ग श्री विष्णु जी से, भई जै जैकारा सरब नग्रही से॥

चौपाई।

फिर राजा के हुक्म प्रमाण, रक्षाबन्धन बंधी सुजान।
मुनिवर घर-घर कियो विहार, श्रावक जन तिन दियो अहार॥
जा घर मुनि नहिं आये कोय, निज दरवाजे चित्र सु लोय।
स्थापन कर तिन दियो अहार, फिर सब भोजन कियो सम्हार॥
तब से नाम सलूना सार, जैन-धर्म का है त्यौहार।
शुद्ध क्रिया कर मानो जीव, जासों धर्म बढ़ै सु अतीव॥
धर्म पदारथ जग में सार, धर्म बिना झूठो संसार।
श्रावण शुक्ल पूर्णिमा जब होय, यह दो पूजन कीजै लोय॥

सब भाइन को दो समझाय, रक्षाबन्धन कथा सुनाय।
मुनि का निज घर करो अकार, मुनि समान तिन देहु अहार॥
सबके रक्षा बन्धन बाध, जैन मुनिन की रक्षा जान।
इस विधि से मानो त्यौहार, नाम सलूना है ससार॥

घत्ता।

मुनि दीनदयाला सब दुःख टाला, आनन्द माला सुखकारी।
'रघु सुत' नित वन्दे आनन्द कन्दे, सुक्ख करन्दे हितकारी॥

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—विष्णुकुमार मुनि के चरण, जो पूजे धर प्रीत।
'रघु सुत' पावे स्वर्गपद, लहे पुण्य नवनीत॥

इत्याशीर्वाद.।

हमारा कर्त्तव्य

- बाल विवाह, अनमेल विवाह, वृद्ध विवाह और कन्या विक्रय या वर विक्रय जैसी घातक दुष्ट प्रथाओं का बहिष्कार करना।
- माता-पिता का आदर्श सदाचारी गृहस्थ होना।
- अपने बालकों को सदाचारी बनाना।
- सन्तति को सुशिक्षित बनाना।
- बालकों म एसी भावना भरना जिससे वे बचपन से ही देश, जाति और धर्म की रक्षा करना अपना कर्त्तव्य समझें।

—'वर्णी वाणी' से

रविव्रत पूजा

यह भवजन हितकार, सु रविव्रत जिन कही।
करहु भव्यजन लोग, सु मन देके सही ॥
पूजों पार्श्व जिनेन्द्र, त्रियोग लगाय के।
मिटै सकल सन्ताप, मिले निधि आय के ॥
मति सागर इक सेठ, कथा ग्रन्थन कही।
उन्हीं ने यह पूजा कर, आनन्द लही ॥
सुख सम्पति सन्तान, अतुल निधि लीजिये।
तातैं रविव्रत सार, सो भविजन कीजिये ॥

दोहा—प्रणमो पार्श्व जिनेश को, हाथ जोड़ शिरनाय।
परभव सुख के कारने, पूजा करूँ बनाय ॥
एक वार व्रत के दिना, एही पूजन ठान।
ता फल सुरख सम्पति लहै, निश्चय लीजे मान ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अथाष्टकं।

उज्ज्वल जल भरके अति लायो, रतन कटोरन मांहीं।
धार देत अति हर्ष बढ़ावत, जन्म जरा मिट जाहीं ॥
पारसनाथ जिनेश्वर पूजों, रविव्रत के दिन भाई।
सुख सम्पति बहु होय, तुरत ही आनन्द मंगलदाई ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मलयागिर केशर अति सुन्दर, कुम्कुम रंग बनाई ।
धार देत जिन चरणन आगे, भव आताप नसाई ॥ पा०

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय ससारतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

मोती सम अति उज्ज्वल, तन्दुल ल्यावो नीर पखारो ।
अक्षय पदके हेतु भावसों, श्रीजिनवर ढिग धारो ॥ पा०

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

बेला अर मचकुन्द चमेली, पारिजात के ल्यावो ।
चुन-चुन श्रीजिन अग्र चढ़ावो, मनवांछित फल पावो ॥ पा०

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय कामबाणविध्वसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

बावर फेनी गोजा आदिक, घृत में लेत पकाई ।
कञ्चन थार मनोहर भरके, चरणन देत चढ़ाई ॥ पा०

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

मणिमय दीप रतनमय, लेकर जगमग जोत जगाई ।
जिनके आगे आरति करके, मोह तिमिर नस जाई ॥ पा०

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

चूरनकर मलयागिरि चन्दन, धूप दशांग बनाई ।
तट पावक में खेय भावसों, कर्मनाश हो जाई ॥ पा०

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल आदि बदाम सुपारी, भांति-भांतिके लावो ।
श्रीजिनचरण चढ़ाय हर्षकर, तातैं शिवफल पावो ॥ पा०

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल गन्धादिक अष्ट दरब ले, अर्घ बनावो भाई।
नाचत गावत हर्ष भावसों, कञ्चन थार भराई॥ पा०

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

गीति का छन्द।

मन वचन काय विशुद्ध करिके पार्श्वनाथ सु पूजिये।
जल आदि अर्घ बनाय भविजन भक्तिवन्त सु हूजिये॥
पूज पारसनाथ जिनवर सकल सुख दातारजी।
जे करत हैं नर नार पूजा लहत सुक्ख अपारजी॥

जयमाला, दोहा।

यह जग में विख्यात है, पारसनाथ महान।
जिनगुणकी जयमालिका, भाषा करों बखान॥

जय जय प्रणमों श्रीपार्श्वदेव, इन्द्रादिक तिनकी करत सेव।
जय जय सु बनारस जन्म लीन्ह, तिहुँ लोकविषै उद्योत कीन॥
जय जिनके पितु श्री विश्वसेन, तिनके घर भये सुख चैन एन।
जय वामादेवी मातु जान, तिनके उपजे पारस महान॥
जय तीन लोक आनन्द देन, भविजन के दाता भये ऐन।
जय जिनने प्रभुको शरण लीन, तिनकी सहाय प्रभुजी सो कीन॥
जय नाग नागनी भये अधीन, प्रभु चरनन लाग रहे प्रवीन।
तजके जु देह सो स्वर्ग जाय, धरणेन्द्र पद्मावती भये जाय॥
जे चोर अञ्जना अधम जान, चोरी तज प्रभु को धरो ध्यान।
जे मतिसागर इक सेठ जान, जिन रविव्रत पूजा करी ठान॥

तिनके सुत थे परदेश मांहि, जिन अशुभ-कर्म काटे सु ताहि।
जे रविव्रत पूजन करी सेठ, तो फल कर सबसे भई भेंट॥
जिन-जिनने प्रभुकी शरण लीन, तिन ऋद्धि-सिद्धि पाई नवीन।
जे रविव्रत पूजा करहि जेह, ते सुक्ख अनन्तानन्द लेय॥
धरणेन्द्र पद्मावती हुए सहाय, प्रभु भक्ति जान तत्काल जाय।
पूजा विधान इहि विधि रचाय, मन वचन काय तीनों लगाय॥
जो भक्ति भाव जैमाल गाय, सो नर सुख सम्पति अतुल पाय।
बाजत मृदङ्ग बीनादि सार, गावत-नाचत नाना प्रकार॥
तन नन नन नन ताल देत, सन नन नन तन सुर भरसु लेत।
ताथेई थेई थेई पग धरत जाय, छमछम छमछम घुंघरू बजाय।
जे करहिं निरति इहि भांति-भांति, ते लहहि सुख्य शिवपुर सुजात॥

दोहा—रविव्रत पूजा पार्श्व की, करै भविक जन कोय।
सुख संपति इहि भव लहै, तुरत महासुख होय॥

अडिल्ल—रविव्रत पार्श्व जिनेन्द्र पूज भवि मन धरै।
भव-भव के आताप सकल छिन में टरैं॥
होय सुरेन्द्र नरेन्द्र आदि पदवी लहैं।
सुख-सम्पति सन्तान अटल लक्ष्मी लहैं॥
फेर सर्व निधि पाय भक्ति अनुसरै।
नाना विधि सुख भोग बहुरि शिव तियवरै॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपावली पूजा

नया वसना

दीपावली के दिन सन्ध्या की शुभ बेला व शुभ नक्षत्र मे नीचे लिखी रीति से पूजा करके नई वही का मुहूर्त तथा दीपों की ज्योति करें।

कुटुम्ब के अभिभावक या दुकान के मालिक को एकाग्र एवं प्रसन्न चित्त से घर या दुकान के पवित्र स्थान में पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके पूजा प्रारम्भ करनी चाहिये, पूजा करनेवाले को अपने सामने एक चौकी पर पूजा की सामग्री रख लेना चाहिये और दूसरी चौकी पर सामग्री चढाने का थाल रख लेना चाहिये। इन दोनों चौकियों के आगे एक चौकी पर केशर से ॐ लिख कर शास्त्रजी को विराजमान करें।

पश्चात् व्यापार की वही मे सुन्दरतापूर्वक केशर से स्वस्तिक लिखै तथा दावात कलम के मौलि वाध कर सामने रखे।

पूजा प्रारम्भ करने के पूर्व उपस्थित सज्जनों को नीचे लिखा श्लोक बोल कर केशर का तिलक कर लेना चाहिये। उपस्थित सज्जनों को भी पूजा बोलना चाहिये व शान्तिपूर्वक सुनना चाहिये।

तिलक मन्त्र

मंगलम् भगवान वीरो, मगलम् गौतमो गणी।
मगलम् कुन्दकुन्दाद्यो, जैन धर्मोऽस्तु मंगलम् ॥ १ ॥

उपस्थित सज्जनों को तिलक करना चाहिये।

मङ्गल कलश को स्थापना



कलश को जल से धोकर सुपारी, मूग, हल्दी की गाठ धनिया के दाने नवरत्न अक्षत, पुष्प आदि डाल कर जल से परिपूरित कर, लाल कपड़े से मौली द्वारा वेष्ठित नारियल को कलश के मुख पर रखे पश्चात

ॐ अद्य भगवतो महापुरुषस्य श्री मदादि ब्रह्मणो मतेऽस्मिन् नूतन वसना मङ्गल कर्मणि होम मण्डप भूमि शुद्धयर्थं पात्र शुद्धयर्थं क्रिया शुद्धयर्थं शान्त्यर्थं पुण्याहवाचनार्थं नवरत्नगन्धपुष्पाक्षतादि बीज फल सहित शुद्ध प्रासुक तीर्थ जल पूरितं मङ्गल कलश संस्थापन करोम्यहं ।

भवी क्ष्वी ह स स्वाहा । श्रीमज्जिनेन्द्र चरणारविन्देष्वानन्द भक्ति सदास्तु ।
मन्त्रोच्चारण करके शास्त्रजी की चौकी पर चावलों के बनाये साथिये



पर मङ्गल कलश स्थापन करे।

साधारण *नित्य नियम पूजा* करके *श्री महावीर स्वामी की* और सरस्वती की पूजा करें—सरस्वती पूजा मे फल चढाने के बाद शास्त्रजी के लिये शुद्ध वस्त्र या वेस्टन चढावें। पूजा के पश्चात् कर्पूर प्रज्वलित कर श्रद्धापूर्वक खड़े होकर सब ललित-ध्वनि से नीचे लिखी आरती बोलें।

जिनवाणी माता की आरती

जय अम्बे वाणी, माता जय अम्बे वाणी।
तुमको निशि दिन ध्यावत सुर नर मुनि ज्ञानी ॥ टेर ॥
श्रीजिन गिरितैं निकसी, गुरु गौतम वाणी।
जीवन भ्रम तम नाशन, दीपक दरशाणी ॥ जय० ॥ १ ॥
कुमत कुलाचल चूरण, वज्र सु सरधानी।
नव नियोग निक्षेपण, देखन दरशाणी ॥ जय० ॥ २ ॥
पातक पङ्क पखानल, पुन्य परम पाणी।
मोहमहार्णव डूबत, तारण नौकाणी ॥ जय० ॥ ३ ॥
लोकालोक निहारण, दिव्य नेत्र स्थानी।
निज पर भेद दिखावन, सूरज किरणानी ॥ जय० ॥ ४ ॥
श्रावक मुनिगण जननी, तुमही गुणखानी।
सेवक लख सुखदायक, पावन परमाणी ॥ जय० ॥ ५ ॥

पश्चात् नीचे लिखे अनुसार बहियों में स्वस्तिकादि लिख कर वीर संवत्, विक्रम संवत्, ईस्वी सन, तिती, वार, तारीख आदि लिखें।

श्री महावीराय नमः

श्री

श्री लाभ — श्री श्री — श्री शुभ

श्री श्री श्री

श्री श्री श्री श्री

श्री ऋषभाय नमः श्री श्री श्री श्री श्री श्री वर्धमानाय नमः

श्री गौतम गणधराय नमः — श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नमः

श्री केवलज्ञानलक्ष्मीदेव्यै नमः

श्री भक्तामर स्तोत्र पूजा

ॐ जय जय जय। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ॥

अनुष्टुप्।

परमज्ञान वाणासि, घाति-कर्म प्रघातिनम्।
महा धर्म प्रकर्त्तारं, वन्देऽहमादि नायकम् ॥
भक्तामर महास्तोत्रं, मन्त्रपूजां करोम्यहम्।
सर्वजीव-हितागारं, आदिदेवं नमाम्यहम् ॥

ॐ ह्रीं श्री आदिदेव ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वानन।
ॐ ह्रीं श्री आदिदेव ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ. स्थापन।
ॐ ह्रीं श्री आदिदेव ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधापण।

अथाष्टकं।

सुरसुरी नदसंभृत जीवनैः सकल ताप हरैः सुख कारणैः।
वृषभनाथ वृषांक समन्वितं शिवकरं प्रयजे हत किल्विषं ॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथ जिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मलय चन्दन मिश्रित कुंकुमैः सुरभितागत षट्पद नंदनैः। वृ०

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथ जिनेन्द्राय ससारतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

कमल जाति समुद्भवतन्दुलैः परम पावन पञ्च सुपुञ्जकैः। वृ०

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

जलज चंपक जाति सुमालती, वकुलपाड़लकुंद सु पुष्पकैः। वृ०

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथ जिनेन्द्राय कामवाणविध्वसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

वटक खज्जक मंडुक पायसै विविध मोदकव्यञ्जनषट्रसैः। वृ०

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

रविकर द्युति सन्निभ दीपकैः प्रबलमोह घनांध निवारकैः। वृ०

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

स्वगुरु धूपभरैं घटनिक्षिप्तैः प्रतिदिशंमिलितालिसमूहकैः। वृ०

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

सरस निंबुकलांगलि दाड़िमैःकदलि पुङ्गकपित्थशुभैःफलैः। वृ०

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

सलिल गंध शुभाक्षत पुष्पकैश्चरु सुदीप सुधूप फलार्घकैः।

जिनपतिं च यजे सुखकारकं, वदति मेरु सु चन्द्र यतीश्वरं। वृ०

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

प्रत्येक श्लोक पूजा

(भक्तामर स्तोत्र का एक एक श्लोक पढ़ कर नीचे लिखे क्रम से ॐ ह्रीं बोल कर अर्घ चढ़ाना चाहिये।)

ॐ ह्रीं प्रणत देव समूह मुकुटाग्रमणि महा पापान्धकार विनाशकाय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं गणधर चारण समस्त रूपीन्द्रचन्द्रिलसुरेन्द्रव्यन्तरेन्द्रनागेन्द्र चतुर्विध मुनीन्द्रस्तवितचरणारविन्दाय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं विगतबुद्धिगर्वोपहासरहित श्री मानतुङ्गाचार्य भक्तिसहिताय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं त्रिभुवनगुणसमुद्र चन्द्रकान्तिमणितेजशरीरसमस्त सुरनाथ स्तवित श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं समस्त गणधरादि मुनिवर प्रतिपालक मृगबालवत श्री आदिनाथ परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र चन्द्रभक्तिसर्व सौख्य तुच्छभक्ति बहु सुखदायकाय श्री जिनेन्द्राय आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्त भव पातक सर्व विघ्नविनाशकाय तव, स्तुतिसौख्यदायकाय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र स्तवन सत्पुरुचित्त चमत्काराय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं० ।

ॐ ह्रीं जिनपूजनस्तवन कथाश्रवणेन समस्त पाप विनाशकाय जगत्त्रय भव्यजीव भवविघ्ननाशसमर्थाय च श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यगुणमण्डितसमस्तोपमासहिताय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं० ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री जिनेन्द्र दर्शनेन अनन्त भव सञ्चित अघसमूह विनाशकाय श्री प्रथम जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं त्रिभुवन शान्त स्वरूपाय त्रिभुवन तिलकाय मानाय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यविजयरूप अतिशय अनन्तचन्द्र तेजजित सदातेज पूज्यमानाय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं शुभगुणातिशयरूप त्रिभुवनजीत जिनेन्द्र गुण विराजमानाय श्री प्रथम जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं मेरुचन्द्र अचलशील शिरोमणि व्रतोद्धराजमण्डित चतुर्विध वनिता विरहित शीलसमुद्राय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं धूम्रस्नेह वातादि विघ्नरहिताय त्रैलोक्य परम केवल दीपकाय श्री प्रथम जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं राहु चन्द्र पूजित कर्म प्रकृति क्षयति निवारण ज्योतिरूप लोकद्वयावलोकि सदोदयादि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं नित्योदयादि रूप राहुना अग्रसिताय त्रिभुवन सर्व कला सहित विराजमानाय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १८ ॥

ॐ ह्रीं चन्द्र सूर्योदयास्त रजनी दिवस रहित परम केवलोदय सदादीप्ति विराजमानाय श्री आदि देवाय आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १९ ॥

ॐ ह्रीं हरि हरादि ज्ञानसहिताय सर्वज्ञ परम ज्योति केवलज्ञान सहिताय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २० ॥

ॐ ह्रीं त्रिभुवन मनमोहन जिनेन्द्ररूप अन्य दृष्टान्त रहित परम बोध मण्डिताय श्री आदि जिनाय परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २१ ॥

ॐ ह्रीं त्रिभुवन वनितोपमारहित श्री जिनवर माताजनित जिनेन्द्र पूर्व दिग् भास्कर केवलज्ञान भास्कराय श्री आदिब्रह्म जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २२ ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्य पावनादिलक्षण परमाष्टोत्तर शत लक्षण नव शत व्यञ्जनसमुदाय एक सहस्र अष्ट मण्डिताय श्री आदि जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २३ ॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मा विष्णु शीतरुज गणपति त्रिभुवन देवत्व सेविताय ऊर्चिताय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २४ ॥

ॐ ह्रीं बुद्धिदायक दोषभर ब्रह्मादि समस्तानन्तनामसहिताय श्री आदि जिनेन्द्राय परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २५ ॥

ॐ ह्रीं अधोमध्योर्द्ध्व लोकत्रय कृताहोरात्रिनमस्कार समस्तातिरौद्रविनाशक त्रिभुवनेश्वर भवोदधि तरण तारण समर्थाय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं० ॥ २६ ॥

ॐ ह्रीं परमगुणाधिता एकादि अवगुणरहिताय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं० ॥२७॥

ॐ ह्रीं अशोक वृक्ष प्रातिहार्य सहिताय परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥२८॥

ॐ ह्रीं सिंहासन प्रातिहार्य सहिताय श्री प्रथम जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति० ॥२९॥

ॐ ह्रीं चतुः षष्टि चामर प्रातिहार्य सहिताय श्री प्रथम जिनेन्द्राय अर्घं० ॥ ३० ॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रय प्रातिहार्य सहिताय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति० ॥३१॥

ॐ ह्रीं अष्टादश कोटि वादित्र प्रातिहार्य सहिताय श्री परमादि जिनाय अर्घं० ॥३२॥

ॐ ह्रीं समस्त पुष्प जाति वृष्टि प्रातिहार्य सहिताय श्री आदि जिनेन्द्राय अर्घं० ॥३३॥

ॐ ह्रीं कोटि भास्कर प्रभा मण्डित भामण्डल प्रातिहार्य सहिताय श्री परमादि जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३४ ॥

ॐ ह्रीं सजल जलधर पटलगर्जितध्वनि योजन प्रमाण प्रातिहार्य सहिताय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३५ ॥

ॐ ह्रीं हेम कमलोपरि गमन देवकृतातिशय सहिताय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं० ॥३६॥

ॐ ह्रीं धर्मोपदेश समये समवसरण विभूति मण्डिताय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं० ॥३७॥

ॐ ह्रीं भव्यजनासिमरण सुर गजेन्द्र महादुर्द्धर भय विनाशकाय श्रीजिनाय परमेश्वराय अर्घं०

ॐ ह्रीं आदिदेव नाम प्रसादान्महासिंह भय विनाशकाय श्रीयुगादि परमेश्वराय अर्घं० ॥३९॥

ॐ ह्रीं महापवहि विश्वभक्षण समर्थ जिननाम जल विनाशकाय श्री आदि ब्रह्मणे परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४० ॥

ॐ ह्रीं रक्तनयन सर्प जिन नागदमन्यौषधि समस्त भय विनाशकाय श्री जिनादि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४१ ॥

ॐ ह्रीं महासंग्राम भयविनाशकायसर्वाङ्गरक्षणकराय श्री प्रथम जिनेन्द्राय परमेश्वराय अर्घं० ॥४२॥

ॐ ह्रीं महारिपुयुद्धे जयदायकाय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥४३॥

ॐ ह्रीं महासमुद्र चलित वातमहादुर्जय भय विनाशकाय श्री जिनादि परमेश्वराय अर्घं० ॥४४॥

ॐ ह्रीं दश प्रकार ताप जलधराष्टादश कुष्ट सन्निपात महद्रोग विनाशकाय परमकामदेवरूप प्रकटाय श्री जिनेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४५ ॥

ॐ ह्रीं महाबन्धन आपाद कण्ठ पर्यन्त वैरिकृतोपद्रव भय विनाशकाय श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४६ ॥

ॐ ह्रीं सिंह गजेन्द्र राक्षस भूत पिशाच शाकिनी रिपु परमोपद्रव भय विनाशकाय श्री जिनादि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४७ ॥

ॐ ह्री पठक पाठक श्रोता वा श्रद्धावान मानतुङ्गाचार्यादि समस्त जीव कल्याणदायक श्री आदि परमेश्वराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४८ ॥

वन सुगंध सु तन्दुल पुष्पकैः प्रवर मोदक दीपक धूपकैः ।
फल वरैः परमात्म पदप्रदं, प्रवियजे श्रीआदि जिनेश्वरम् ॥

ॐ ह्रीं अष्ट चत्वारिंशत्कमलेभ्य पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

श्लोक—प्रमाणद्वय कर्त्तारं स्यादस्ति वाद वेदकं ।
द्रव्यतत्व नयागार मादिदेवं नमाम्यहम् ॥

छन्द ।

आदि जिनेश्वर भोगागारं, सर्व जीववर दया सुधारं ।
परमानन्द रमा सुखकन्दं, भव्य जीव हित करणममन्दं ॥ २ ॥
परम पवित्र वंशवर मण्डन, दुःख दारिद्र काम बल खण्डन ।
वेद-कर्म दुर्जय बल दण्डन, उज्ज्वल ध्यान प्राप्ति शुभ मण्डन ॥ ३ ॥
चतु अस्सीलक्ष पूर्व जीवित पर, धनुष पञ्च शत मानस जिनवर ।
हेमवण रूपौघ विमल कर, नगर अयोध्या स्थान व्रत धर ॥ ४ ॥

नाभिराज परमात्म सु वेता, माता मरुदेवी गुण नेता।
सोलह स्वप्न पर भेद विख्याता, त्रिभुवननायक पुन विधाता ॥ ५ ॥
गर्भकल्याणक सुरपति कीधा, जन्मकल्याणक मेरुशिर सीधा।
स्वयं स्वयंभू दीक्षाधारी, केवल बोध सु त्रिभुवन प्यारी ॥ ६ ॥
अष्ट गुणाकर सिद्ध दिवाकर, परम धर्म विस्तारण जय भर।
शीतहार रहितं भय हारी, सर्व सौख्य निरुपम गुणधारी ॥ ७ ॥

घत्ता।

जय आदि सु ब्रह्मा, त्रिभुवन ब्रह्मा, ब्रह्मास्वातम स्वरूप परं।
जय बोधक्ष ब्रह्मा, पंच सु ब्रह्मा, ब्रह्मा सुमति जलधिनिकरं ॥

ॐ ह्रीं श्री आदि ब्रह्मदेवाय जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शार्दूल विक्रीडित।

देवोऽनेक भवार्जितो गत महा पापः प्रदीपा नलः।
देवः सिद्ध वधू विशाल हृदयालंकार हारोपमः॥
देवोऽष्टादश दोष सिन्धुर घटा दुर्भेद पञ्चाननो।
भव्यानां विदधातु वांछित फलं श्री आदिनाथो जिनः॥

श्लोक—लक्ष्मीचन्द्रगुरुर्जातो मूलसंघ विदाग्रणी।
पट्टाभयचन्द्रो देवो दयानन्दि विदांवरः॥
रत्नकीर्ति कुमुदेन्दु सुमतिः सागरोदितः।
भक्तामर महास्तोत्र पूजा चक्रीगुणाधिका॥

इति श्री मानतुंगाचार्य विरचित भक्तामर स्तोत्र पूजा समाप्ता।

श्री मानतुङ्गाचार्य विरचितं

श्री भक्तामर स्तोत्रं ।

वसन्त तिलका छन्द

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणा
मुद्योतकं दलितपापतमोवितानम्
सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगंयुगादा,
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम् ॥१॥

यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधा-
दुद्भूत बुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः ।
स्तोत्रै र्जगत्त्रितयचित्तहरै रुदारैः,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥२॥

बुद्धया विनापि विबुधार्चितपादपीठ
स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहम्
बालं विहाय जलसंस्थितमिंदुबिंब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ॥३॥

वक्तुं गुणान्गुणसमुद्रशशाङ्ककांतान्,
कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपिबुद्धया ।

कल्पांतकालपवनोद्धतनक्रचक्रं,
को वा तरीतुमलमंबुनिधिं भुजाभ्याम् ॥ ४ ॥
सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश,
कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः ।
प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगी मृगेन्द्रं,
नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥५॥
अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम,
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्रचारुकलिकानिकरैकहेतु ॥६॥
त्वत्संस्तवेन भवसन्ततिसन्निबद्धं,
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम्
आक्रांतलोकमलिनीलमशेषमाशु
सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमंधकारम् ॥७॥
मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेद-
मारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु
मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदबिंदुः ॥८॥

आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्त दोषं,
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥९॥
नात्यद्भुतं भुवनभूषण भूतनाथ,
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥१०॥
दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः।
पीत्वा पयः शशिकरद्युति-दुग्धसिन्धोः
क्षारं जलं जलनिधेः रसितुं क इच्छेत् ॥११॥
यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं
निर्मापित-स्त्रिभुवनैक ललामभूत।
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां,
यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥१२॥
वक्त्रं क्व ते सुरनरोरगनेत्रहारि
निःशेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम्

बिंबं कलंकमलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पांडुपलाशकल्पम् ॥ १३ ॥
सम्पूर्ण मण्डलशशांककलाकलाप-
शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति ।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं,
कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम् ॥ १४ ॥
चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभि-
र्नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम्
कल्पांतकालमरुता चलिताचलेन,
किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ॥१५॥
निर्धूम वर्तिरपवर्जिततैलपूरः,
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥१६॥
नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः,
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नांभोधरोदरनिरुद्धमहाप्रभावः,
सूर्यातिशायिमहिमासि मुनींद्र लोके ॥१७॥

नित्योदयं दलितमोहमहांधकारं,
गम्यं न राहु वदनस्य न वारिदानां ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकांति,
विद्योतयज्जगदपूर्वशशांकबिंबम् ॥१८॥
किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा,
युष्मन्मुखेन्दुदलितेषु तमःसु नाथ !
निष्पन्न शालिवनशालिनि जीवलोके,
कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ।१९।
ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं,
नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु ।
तेजःस्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं,
नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ।२०॥
मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन्मनो हरति नाथ!भवांतरेऽपि ।२१।
स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।

सर्वादिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥
त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस-
मादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं,
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनींद्र पन्थाः ।२३।
त्वामव्ययं विभुमचिंत्यमसंख्यमाद्यं,
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् ।
योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं,
ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ।२४।
बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्,
त्वं शङ्करोऽसि भुवनत्रय शङ्करत्वात् ।
धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानाद,
व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि २५।
तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ,
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय ।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिनभवोदधिशोषणाय ।२६।

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै-
स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश ।
दोषैरुपात्तविविधाश्रयजातगर्वैः,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि २७।

उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूख-
माभाति रूपममलं भवतो नितांतं ।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमो वितानं,
बिंबं रवेरिवपयोधरपार्श्ववर्ति ।२८।

सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम्
बिंबं वियद्विलसदंशुलतावितानं,
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीवसहस्ररश्मेः ।२९।

कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं,
विभ्राजते तव वपुः कलधौतकान्तम्
उद्यच्छशाङ्कशुचिनिर्झरवारिधार-
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ।३०।

छत्रत्रयं तव विभाति शशाङ्ककान्त
मुच्चैः स्थितं स्थगितभानुकरप्रतापम्

उन्निद्रहेमनवपङ्कजपुञ्जकांती,
पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेंद्र ! धत्तः,
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ।३६।
इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेंद्र,
धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य ।
यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा,
तादृक् कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोऽपि ।३७।
श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूल-
मत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपं ।
ऐरावताभमिभमुद्धतमापतंतं,
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ।३८।
भिन्नेभकुम्भगलदुज्ज्वलशोणिताक्त-
मुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभागः ।
बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि,
नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ।३६।
कल्पांतकालपवनोद्धतवह्निकल्पं,
दावानलंज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम्

उद्भूतभीषणजलोदरभारभुग्नाः,
शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः ।
त्वत्पादपङ्कजरजोमृतदिग्धदेहा,
मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥४५॥
आपादकण्ठमुरुशृङ्खलवेष्टिताङ्गा,
गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजंघाः ।
त्वन्नाममंत्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ॥४६॥
मत्तद्विपेन्द्रमृगराजदवानलाहि-
संग्रामवारिधि महोदरबन्धनोत्थम्
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव,
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥४७॥
स्तोत्र स्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां,
भक्त्या मया विविधवर्णविचित्रपुष्पाम्
धत्ते जनो य इह कण्ठगता-मजस्रं,
तं मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥४८॥

इति श्री मानतुङ्गाचार्य विरचित भक्तामर स्तोत्रं समाप्तम् ।

तत्त्वार्थसूत्रम्

[आचार्य गृद्धपिच्छ]

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये ॥

त्रैकाल्यं द्रव्य-षट्कं नव-पद-सहितं जीव-षट्काय-लेश्याः
पञ्चान्ये चास्तिकाया व्रत-समिति-गति-ज्ञान-चारित्र-भेदाः ।
इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवन-महितैः प्रोक्तमर्हद्भिरीशैः
प्रत्येति श्रद्दधाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः ॥१॥

सिद्धे जयप्पसिद्धे चउविहाराहणफलं पत्ते ।
वंदित्ता अरहंते वोच्छं आराहणा कमसो ॥२॥

उज्जोवणमुज्जवणं णिव्वहणं साहणं च णिच्छरणं ।
दंसण-णाण-चरित्तं तवाणमाराहणा भणिया ॥३॥

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्ष-मार्गः ॥१॥ तत्त्वार्थ-श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥२॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥३॥ जीवाजीवास्रव-बन्ध-संवर-निर्जरा-मोक्षास्तत्त्वम् ॥४॥ नाम-स्थापना-द्रव्य-भावतस्तन्न्यासः ॥५॥ प्रमाण-नयैरधिगमः ॥६॥ निर्देश-स्वामित्व-साधनाधिकरण - स्थिति-विधानतः ॥ ७ ॥ सत्संख्या-क्षेत्र-स्पर्शन-कालान्तर-भावाल्पबहुत्वैश्च ॥८॥ मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानि ज्ञानम् ॥९॥ तत्प्रमाणे ॥१०॥ आद्ये परोक्षम् ॥११॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥१२॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥१३॥ तदिन्द्रियानिन्द्रिय-

निमित्तम् ॥१४॥ अवग्रहेहावाय-धारणाः॥१५॥ वहु-वहुविध-क्षिप्रानिःसृतानुक्त-ध्रुवाणां सेतराणाम् ॥१६॥ अर्थस्य॥१७॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥१८॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥१९॥ श्रुतं मति-पूर्वं द्व्यनेक-द्वादश-भेदम्।२०। भव-प्रत्ययोऽवधिर्देव-नारकाणाम्।२१।क्षयोपशम-निमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम्॥२२॥ ऋजु-विपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्या तद्विशेषः ॥ २४ ॥ विशुद्धि-क्षेत्र-स्वामि-विषयेभ्योऽवधि-मनः-पर्यययोः॥२५॥मति-श्रुतयोर्निवन्धो द्रव्येष्वसर्व-पर्यायेषु॥२६॥ रूपिष्ववधेः॥२७॥तदनन्त-भागे मनःपर्ययस्य ॥२८॥ सर्व-द्रव्य-पर्यायेषु केवलस्य ॥२९॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ३० ॥ मति-श्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥ ३१ ॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ नैगम-संग्रह-व्यवहारर्जु-सूत्र-शब्द-समभिरूढैवम्भूता नयाः ॥३३॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्याय ॥ १॥

औपशमिक-क्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्व-मौदयिक-पारिणामिकौ च ॥ १ ॥ द्वि-नवाष्टादशैकविंशति-त्रि-भेदा यथाक्रमम् ॥ २ ॥ सम्यक्त्व-चारित्रे ॥ ३ ॥ ज्ञान-दर्शन-दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणि च ॥ ४ ॥ ज्ञाना-ज्ञानदर्शन-लब्धयश्चतुस्त्रित्रि-पञ्च-भेदाः सम्यक्त्व-चारित्र-संयमासंयमाश्च ॥ ५ ॥ गति-कषाय-लिङ्ग-मिथ्यादर्शनाज्ञाना-संयतासिद्ध-लेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैक-षड्भेदाः ॥ ६ ॥ जीव-भव्याभव्यत्वानि च ॥ ७ ॥ उपयोगो लक्षणम् ॥ ८ ॥ स

द्विविधोऽष्ट-चतुर्भेदः ॥ ९ ॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥ १० ॥
समनस्कामनस्काः ॥ ११ ॥ संसारिणस्त्रस-स्थावराः ॥१२॥
पृथिव्यप्तेजो वायु-वनस्पतयः स्थावराः ॥१३॥ द्वीन्द्रियादय-
स्त्रसाः ॥ १४ ॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥१५॥ द्विविधानि ॥१६॥
निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ॥ १७ ॥ लब्ध्युपयोगौ
भावेन्द्रियम् ॥१८॥ स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षुः-श्रोत्राणि ॥१९॥
स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण-शब्दास्तदर्थाः ॥ २० ॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य
॥२१॥ वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥२२॥ कृमि-पिपीलिका-भ्रमर-
मनुष्यादीनामेकैक-वृद्धानि ॥२३॥ संज्ञिनः समनस्काः ॥२४॥
विग्रह-गतौ कर्म-योगः ॥ २५ ॥ अनुश्रेणि गतिः ॥ २६ ॥
अविग्रहा जीवस्य ॥ २७ ॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक्
चतुर्भ्यः ॥ २८ ॥ एक-समयाऽविग्रहा ॥ २९ ॥ एकं द्वौ
त्रीन्वानाहारकः ॥३०॥ सम्मूर्छन-गर्भोपपादा जन्म ॥ ३१ ॥
सचित्त-शीत-संवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥ ३२ ॥
जरायुजाण्डज-पोतानां गर्भः ॥ ३३ ॥ देव-नारकाणा-
मुपपादः ॥ ३४ ॥ शेषाणां सम्मूर्छनम् ॥ ३५ ॥ औदारिक-
वैक्रियिकाहारक-तैजस-कार्मणानि शरीराणि ॥ ३६ ॥ परं
परं सूक्ष्मम् ॥३७॥ प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ॥३८॥
अनन्त-गुणे परे ॥ ३९ ॥ अप्रतीघाते ॥ ४० ॥
अनादि-सम्बन्धे च ॥ ४१ ॥ सर्वस्य ॥ ४२ ॥ तदादीनि
भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ४३ ॥ निरुपभोग-

मन्त्यम् ॥ ४४ ॥ गर्भसंमूर्च्छनजमाद्यम् ॥४५॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥४६॥ लब्धि-प्रत्यय च ॥४७॥ तैजसमपि ॥४८॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥ ४९ ॥ नारक-संमूर्च्छिनो नपुंसकानि ॥ ५० ॥ न देवाः ॥ ५१ ॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥ ५२ ॥ औपपादिक-चरमोत्तमदेहाऽसंख्येय-वर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥ ५३ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्याय ॥ २ ॥

रत्न-शर्करा-वालुका-पङ्क-धूम-तमो-महातमः-प्रभा-भूमयो घनाम्बुवाताकाश-प्रतिष्ठाः सप्ताऽधोऽधः ॥ १ ॥ तासु त्रिंश-त्पंचविंशति-पंचदश-दश-त्रि-पञ्चोनैक-नरक-शतसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ॥२॥ नारका नित्याऽशुभतर-लेश्या-परिणाम-देह-वेदना-विक्रियाः ॥ ३ ॥ परस्परोदीरित-दुःखाः ॥ ४ ॥ सक्लिष्टाऽसुरोदीरित-दुखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥ ५ ॥ तेष्वेक-त्रि-सप्त-दश-सप्तदश–द्वाविंशति - त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वाना परा स्थितिः ॥ ६ ॥ जंबूद्वीप-लवणोदादयः शुभ-नामानो द्वीप-समुद्राः॥७॥द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्व-पूर्व-परिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥८॥ तन्मध्ये मेरु-नाभिर्वृत्तो योजन-शतसहस्र-विष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥ ९ ॥ भरत-हैमवत-हरि-विदेह-रम्यक-हैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥१०॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरा-यता हिमवन्महाहिमवन्निषध-नील-रुक्मि-शिखरिणो वर्षधर-पर्वताः ॥११॥ हेमार्जुन-तपनीय-वैडूर्य-रजत-हेममयाः ॥१२॥

मणिविचित्र-पार्श्वा उपरि मूले च तुल्य-विस्ताराः ॥ १३ ॥
पद्म-महापद्म-तिगिंछ-केशरि-महापुण्डरीक-पुण्डरीका ह्रदास्ते-
षामुपरि ॥ १४ ॥ प्रथमो योजन-सहस्रायामस्तदर्द्धविष्कम्भो
ह्रदः ॥ १५ ॥ दश-योजनावगाहः ॥ १६ ॥ तन्मध्ये योजनं
पुष्करम् ॥१७॥ तद्द्विगुण-द्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ॥१८॥
तन्निवासिन्यो देव्यः श्री-ह्री-धृति-कीर्ति-बुद्धि-लक्ष्म्यः पल्यो-
पमस्थितयः ससामानिक-परिषत्काः ॥ १९ ॥ गङ्गा-सिन्धु-
रोहिद्रोहितास्या-हरिद्धरिकान्ता-सीता-सीतोदा-नारी-नरकान्ता-
सुवर्ण-रूप्यकूला-रक्ता-रक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २० ॥
द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥ २१ ॥ शेषास्त्वपरगाः ॥ २२ ॥
चतुर्दश-नदी-सहस्र-परिवृता गंगा-सिन्ध्वादयो नद्यः ॥२३॥
भरतः षड्विंशति-पञ्चयोजनशत-विस्तारः षट् चैकोनविंशति-
भागा योजनस्य॥२४॥ तद्द्विगुण-द्विगुण-विस्तारा वर्षधर-वर्षा
विदेहान्ताः॥२५॥ उत्तरा दक्षिण-तुल्याः॥२६॥ भरतैरावतयो-
र्वृद्धि-ह्रासौ षट्-समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥ २७ ॥
ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥ २८ ॥ एक-द्वि-त्रि-
पल्योपम-स्थितयो हैमवतक-हारिवर्षक-दैवकुरवकाः ॥ २९ ॥
तथोत्तराः ॥ ३० ॥ विदेहेषु संख्येय-कालाः ॥३१॥ भरतस्य
विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवति-शत-भागः ॥ ३२ ॥
द्विर्धातकीखण्डे ॥३३॥ पुष्करार्द्धे च ॥३४॥ प्राङ्मानुषो-
त्तरान्मनुष्याः ॥ ३५ ॥ आर्या म्लेच्छाश्च ॥ ३६ ॥

भरतैरावत-विदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः॥३७॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते ॥ ३८ ॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥ ३९ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

देवाश्चतुर्णिकायाः॥१॥आदितस्त्रिषु पीतान्त-लेश्याः॥२॥ दशाष्ट-पञ्च-द्वादश-विकल्पाः कल्पोपपन्न-पर्यन्ताः ॥३॥ इन्द्र-सामानिक - त्रायस्त्रिंश-पारिषदात्मरक्ष - लोकपालानीक-प्रकीर्णकाभियोग्य-किल्विषिकाश्चैकशः ॥४॥ त्रायस्त्रिंश-लोक-पाल-वर्ज्या व्यन्तर-ज्योतिष्काः ॥ ५ ॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥ ६ ॥ काय-प्रवीचारा आ ऐशानात् ॥७॥ शेषाः स्पर्श-रूप-शब्द-मनः-प्रवीचाराः ॥८॥ परेऽप्रवीचाराः॥९॥ भवनवासिनोऽसुर-नाग-विद्युत्सुपर्णाग्नि-वात-स्तनितोदधि-द्वीप-दिक्कुमाराः ॥१० व्यन्तराः किन्नर-किंपुरुष-महोरग-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-भूत-पिशाचाः ॥ ११ ॥ ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रह-नक्षत्र-प्रकीर्णक-तारकाश्च॥१२॥ मेरु-प्रदक्षिणा नित्य-गतयो नृ-लोके ॥१३॥ तत्कृतः काल-विभागः ॥१४॥ बहिरवस्थिताः ॥१५॥ वैमानिकाः ॥१६॥ कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ॥१७॥ उप-र्युपरि ॥१८॥ सौधर्मैशान-सानत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर-लान्तव-कापिष्ठ-शुक्र-महाशुक्र-शतार-सहस्रारेष्वानत-प्राणतयो-रारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजय-वैजयन्त-जयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥१९॥ स्थिति-प्रभाव-सुख-द्युति-लेश्या-

विशुद्धीन्द्रियावधि-विपयतोऽधिकाः ॥ २० ॥ गतिशरीर-परिग्रहाभिमानतो हीनाः ॥२१॥ पीत-पद्म-शुक्ल-लेश्या द्वि-त्रि-शेषेषु ॥२२॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥२३॥ ब्रह्म-लोकालया लौकान्तिकाः ॥ २४ ॥ सारस्वतादित्य - वह्न्यरुण - गर्दतोय-तुपिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥२५॥ विजयादिषु द्वि-चरमाः ॥२६॥ औपपादिक-मनुष्येभ्यः शेपास्तिर्यग्योनयः ॥२७॥ स्थिति-रसुर-नाग-सुपर्ण-द्वीप-शेपाणां सागरोपम-त्रिपल्योपमार्ध-हीन-मिताः ॥२८॥ सौधर्मैशानयोः सागरोपमेऽधिके ॥२९॥ सानत्कुमार-माहेन्द्रयोः सप्त ॥३०॥ त्रि-सप्त-नवैकादश-त्रयोदश-पञ्चदशभिरधिकानि तु ॥३१॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥३२॥ अपरा पल्यो-पममधिकम् ॥३३॥ परतःपरतःपूर्वा पूर्वाऽनन्तरा ॥३४॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥३५॥ दश-वर्ष-सहस्राणि प्रथमायाम् ॥३६॥ भवनेषु च ॥३७॥ व्यन्तराणां च ॥३८॥ परा पल्योपम-मधिकम् ॥३९॥ ज्योतिष्काणां च ॥४०॥ तदष्ट-भागोऽपरा ॥४१॥ लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेपाम् ॥४२॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्याय ॥ ४ ॥

अजीव-काया धर्माधर्माकाश-पुद्गलाः ॥१॥ द्रव्याणि ॥ २ ॥ जीवाश्च ॥ ३ ॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥ ४ ॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥ ५ ॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥ ६ ॥ निष्क्रियाणि च ॥ ७ ॥ असंख्येयाः प्रदेशा धर्माधर्मैक-

जीवानाम् ॥८॥ आकाशस्यानन्ताः॥९॥ संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥१०॥ नाणोः ॥११॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥ १२ ॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥ १३ ॥ एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥ १४ ॥ असंख्येय-भागादिषु जीवानाम् ॥१५॥ प्रदेश-संहार-विसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥१६॥ गति-स्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकारः ॥१७॥ आकाशस्यावगाहः॥१८॥ शरीर-वाङ्-मनः-प्राणापानाः पुद्गलानाम्॥१९ सुख-दुःख-जीवित-मरणोपग्रहाश्च ॥ २० ॥ परस्परोपग्रहो जीवानाम् ॥ २१ ॥ वर्तना-परिणाम-क्रिया-परत्वापरत्वे च कालस्य ॥ २२ ॥ स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णवन्तः पुद्गलाः ॥२३॥ शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्छायातपोद्योत-वन्तश्च ॥ २४ ॥ अणवः स्कन्धाश्च ॥ २५ ॥ भेद-संघातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥२६॥ भेदादणुः ॥२७॥ भेद-संघाताभ्यां चाक्षुषः ॥ २८ ॥ सद् द्रव्य-लक्षणम् ॥ २९ ॥ उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य-युक्तं सत् ॥ ३० ॥ तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥३१॥ अर्पितानर्पितसिद्धेः ॥ ३२ ॥ स्निग्ध-रूक्षत्वाद्बन्धः ॥ ३३ ॥ न जघन्य-गुणानाम् ॥३४॥ गुण-साम्ये सदृशानाम् ॥३५॥ द्व्यधिकादि-गुणानां तु ॥ ३६ ॥ बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥३७॥ गुण-पर्ययवद् द्रव्यम् ॥ ३८ ॥ कालश्च ॥ ३९ ॥ सोऽनन्तसमयः ॥४०॥ द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥४१॥ तद्भावः परिणामः ॥ ४२ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

काय-वाङ्-मनः-कर्म योगः ॥१॥ स आस्रवः॥२॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥३॥ सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः ॥ ४ ॥ इन्द्रिय-कषायाव्रत-क्रियाः पञ्च-चतुः-पञ्च-पञ्चविंशति-संख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥५॥ तीव्र-मन्द-ज्ञाताज्ञात-भावाधिकरण-वीर्य-विशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥ अधिकरणं जीवाजीवाः ॥७॥ आद्यं संरम्भ-समारम्भारम्भ-योग-कृत-कारितानुमत-कषाय-विशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥८॥ निर्वर्तना-निक्षेप-संयोग-निसर्गा द्वि-चतुर्द्वि-त्रि-भेदाः परम्॥९॥तत्प्रदोष-निह्नव-मात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञान-दर्शनावरणयोः॥१० दुःख-शोक-तापाक्रन्दन-वध-परिदेवनान्यात्म-परोभय-स्थानान्यसद्वेद्यस्य ॥११॥ भूत-व्रत्यनुकम्पादान-सरागसंयमादि-योगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥१२॥ केवलि-श्रुत-संघ-धर्म-देवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥ १३ ॥ कषायोदयात्तीव्र-परिणामश्चारित्रमोहस्य ॥ १४ ॥ बह्वारम्भ-परिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥१५॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥१६॥ अल्पारम्भ-परिग्रहत्वं मानुषस्य ॥१७॥स्वभाव-मार्दवं च॥१८॥ निःशील-व्रतत्वं च सर्वेषाम्॥१९॥ सरागसंयम-संयमासंयमाकामनिर्जरा-बालतपांसि दैवस्य ॥२०॥ सम्यक्त्वं च ॥२१॥ योगवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः॥२२॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥२३॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता शील-व्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्ण-ज्ञानोपयोग-संवेगौ शक्तितस्त्याग-तपसी साधु-समाधिर्वैया

वृत्यकरणमर्हदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचन-भक्तिरावश्यकापरिहाणि-मार्ग-प्रभावना प्रवचन-वत्सलत्वमिति तीर्थंकरत्वस्य ॥२४॥ परात्म-निन्दा-प्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य॥२५॥ तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य॥२६॥ विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥२७॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्याय ॥ ६ ॥

हिंसाऽनृत-स्तेयाब्रह्म-परिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ॥१॥ देश-सर्वतोऽणु-महती॥२॥तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥३॥ वाङ्-मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपण-समित्यालोकित-पानभोजनानि पञ्च ॥४॥क्रोध-लोभ भीरुत्व-हास्य-प्रत्याख्यानान्यनुवीची-भाषणं च पञ्च॥५॥शून्यागार-विमोचितावास-परोपरोधाकरण-भैक्ष्यशुद्धि-सधर्माविसंवादाः पञ्च ॥६॥ स्त्रीरागकथाश्रवण-तन्मनोहरांग-निरीक्षण-पूर्वरतानुस्मरण-वृष्येष्टरस-स्वशरीरसंस्कार-त्यागाः पञ्च ॥७॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय-विषय-राग-द्वेष-वर्जनानि पञ्च ॥८॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् ॥९॥ दुःखमेव वा ॥१०॥ मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थानि च सत्त्व-गुणाधिक-क्लिश्य-मानाविनेयेषु ॥११॥ जगत्काय-स्वभावौ वा संवेग-वैराग्यार्थम् ॥ १२ ॥ प्रमत्तयोगात्प्राण-व्यपरोपणं हिंसा ॥ १३ ॥ असदभिधानमनृतम् ॥१४॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥१५॥ मैथुन-मब्रह्म ॥१६॥ मूर्छा परिग्रहः ॥१७॥ निःशल्यो व्रती ॥१८॥ अगार्यनगारश्च॥१९॥ अणुव्रतोऽगारी॥२०॥ दिग्देशानर्थदण्ड-

विरति-सामायिक-प्रोषधोपवासोपभोग-परिभोग-परिमाणा-
तिथि संविभाग-व्रत-सम्पन्नश्च ॥२१॥ मारणान्तिकीं सल्लेखनां
जोषिता ॥ २२ ॥ शंका-कांक्षा-विचिकित्सान्यदृष्टि-प्रशंसा-
संस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः ॥२३॥ व्रत-शीलेषु पञ्च पञ्च
यथाक्रमम् ॥ २४ ॥ बन्ध-वध-च्छेदातिभारारोपणान्नपान-
निरोधाः ॥२५॥ मिथ्योपदेश-रहोभ्याख्यान-कूटलेखक्रिया-
न्यासापहार-साकारमन्त्रभेदाः ॥२६॥ स्तेनप्रयोग-तदाहृता-
दान-विरुद्धराज्यातिक्रम-हीनाधिकमानोन्मान-प्रतिरूपकव्यव-
हाराः ॥ २७ ॥ परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीता-
गमनानङ्गक्रीडा-कामतीव्राभिनिवेशाः ॥ २८ ॥ क्षेत्रवास्तु-
हिरण्यसुवर्ण-धनधान्य-दासीदास-कुप्य-प्रमाणातिक्रमाः ॥२९॥
ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रम-क्षेत्रवृद्धि-स्मृत्यन्तराधानानि ॥३०॥
आनयन-प्रेष्यप्रयोग-शब्द-रूपानुपात-पुद्गलक्षेपाः ॥ ३१ ॥
कन्दर्प-कौत्कुच्य-मौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थ-
क्यानि ॥ ३२ ॥ योग-दुःप्रणिधानानादर-स्मृत्यनुपस्थानानि
॥ ३३ ॥ अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादान-संस्तरोपक्रमणा-
नादर-स्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३४ ॥ सचित्त-सम्बन्ध-सम्मि-
श्राभिषव-दुःपक्वाहाराः ॥३५॥ सचित्तनिक्षेपापिधान-पर-
व्यपदेश-मात्सर्य-कालातिक्रमः ॥३६॥ जीवित-मरणाशंसा-
मित्रानुराग-सुखानुबन्ध-निदानानि ॥ ३७ ॥ अनुग्रहार्थं
स्वस्यातिसर्गो दानम् ॥३८॥ विधि-द्रव्य-दातृ-पात्र-विशेषा-

त्तद्विशेषः ॥२६॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्याय ॥७॥

मिथ्यादर्शनाविरति-प्रमाद-कषाय-योगा बन्धहेतवः ।१। सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्धः॥२॥ प्रकृति-स्थित्यनुभव-प्रदेशास्तद्विधयः ॥ ३ ॥ आद्यो ज्ञान-दर्शनावरण-वेदनीय-मोहनीयायुर्नाम-गोत्रान्तरायाः ॥ ४ ॥ पञ्च-नव-द्वयष्टाविंशति-चतुर्द्विचत्वारिंशद्-द्वि-पञ्च-भेदा यथा-क्रमम् ॥५॥ मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानाम् ॥६॥ चक्षु-रचक्षुरवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-प्रचलाप्रचला-स्त्यानगृद्धयश्च ॥७॥ सदसद्वेद्ये ॥८॥ दर्शन-चारित्र-मोहनीया-कषाय-कषायवेदनीयाख्यास्त्रि-द्वि-नव-षोडशभेदाः सम्यक्त्व-मिथ्यात्व-तदुभयान्यकषाय-कषायौ हास्य-रत्यरति-शोक-भय-जुगुप्सा-स्त्री-पुन्नपुंसक-वेदा अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यान-प्रत्या-ख्यान-संज्वलन-विकल्पाश्चैकशः क्रोध-मान-माया-लोभाः॥६॥ नारक-तैर्यग्योन-मानुष-दैवानि ॥ १० ॥ गति-जाति-शरी-राङ्गोपाङ्ग-निर्माण-बन्धन-संघात-संस्थान–संहनन–स्पर्श–रस-गन्ध-वर्णानुपूर्व्यगुरुलघूपघात - परघातातपोद्योतोच्छ्वास-विहायोगतयः प्रत्येकशरीर-त्रस-सुभग-सुस्वर-शुभ-सूक्ष्म-पर्याप्ति-स्थिरादेय-यशःकीर्ति-सेतराणि तीर्थकरत्वं च ॥११॥ उच्चैर्नीचैश्च ॥ १२ ॥ दान - लाभ - भोगोपभोग-वीर्याणम् ॥ १३ ॥ आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपम-कोटीकोट्यः

परा स्थितिः ॥१४॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥१५॥ विंशतिर्नाम-गोत्रयोः ॥१६॥ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥१७॥ अपरा द्वादश-मुहूर्ता वेदनीयस्य ॥१८॥ नाम-गोत्रयोरष्टौ ॥१९॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ता॥२०॥विपाकोऽनुभवः॥२१॥स यथानाम॥२२ ततश्च निर्जरा ॥२३॥ नाम-प्रत्ययाः सर्वतो योग-विशेषात् सूक्ष्मैक-क्षेत्रावगाह-स्थिताः सर्वात्म-प्रदेशेष्वनन्तानन्त-प्रदेशाः ॥२४॥ सद्वेद्य-शुभायुर्नाम-गोत्राणि पुण्यम् ॥२५॥ अतोऽन्यत्पापम् ॥२६॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः ॥८॥

आस्रव-निरोधः संवरः॥१॥ स गुप्ति-समिति-धर्मानुप्रेक्षा-परीषहजय-चारित्रैः ॥२॥ तपसा निर्जरा च ॥३॥ सम्यग्योग-निग्रहो गुप्तिः ॥ ४ ॥ ईर्या-भाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥५॥ उत्तम-क्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तपस्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि धर्मः॥६॥ अनित्याशरण-संसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रवसंवरनिर्जरा - लोक-बोधिदुर्लभ-धर्मस्वाख्यातत्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः ॥ ७ ॥ मार्गाच्यवन-निर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥८॥ क्षुत्पिपासा-शीतोष्णदंशमशक-नाग्न्यारति-स्त्री-चर्या - निषद्या - शय्याक्रोश-वध - याचनालाभ-रोग-तृणस्पर्श-मल-सत्कारपुरस्कार-प्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ॥९॥ सूक्ष्मसाम्पराय-च्छद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥१०॥ एकादश जिने ॥११॥ बादरसाम्पराये सर्वे ॥१२॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञा-

ज्ञाने ॥१३॥ दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालाभौ ॥१४॥ चारित्र-मोहे नाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाचनासत्कारपुरस्काराः ॥१५॥ वेदनीये शेषाः ॥१६॥ एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतेः ॥१७॥ सामायिकछेदो-पस्थापनापरिहारविशुद्धि-सूक्ष्मसाम्पराय-यथाख्यातमिति चारित्रम् ॥१८॥ अनशनावमौदर्य-वृत्तिपरिसंख्यान-रस-परित्याग-विविक्तशय्यासन-कायक्लेशा बाह्यं तपः ॥१९॥ प्रायश्चित्त-विनय-वैयावृत्त्य-स्वाध्याय-व्युत्सर्ग-ध्यानान्युत्तरम् ॥२०॥ नव-चतुर्दश-पञ्च-द्वि-भेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥२१॥ आलोचना-प्रतिक्रमण-तदुभय-विवेक-व्युत्सर्ग-तपश्छेद-परि-हारोपस्थापनाः ॥२२॥ ज्ञान-दर्शन-चारित्रोपचाराः ॥२३॥ आचार्योपाध्याय-तपस्वि-शैक्ष-ग्लान-गण-कुल-संघ-साधु-मनोज्ञानाम् ॥२४॥ वाचना-पृच्छनानुप्रेक्षाम्नाय-धर्मोपदेशाः ॥२५॥ बाह्याभ्यन्तरोपध्योः ॥२६॥ उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्ता-निरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात् ॥२७॥ आर्त-रौद्र-धर्म्य-शुक्लानि ॥२८॥ परे मोक्षहेतू ॥२९॥ आर्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृति-समन्वाहारः ॥३०॥ विपरीतं मनोज्ञस्य ॥३१॥ वेदनायाश्च ॥३२॥ निदानं च ॥३३॥ तदविरत-देशविरत-प्रमत्तसंयतानाम् ॥३४॥ हिंसानृत-स्तेय-विषयसंरक्षणे-भ्यो रौद्रमविरत-देशविरतयोः ॥३५॥ आज्ञापाय-विपाक-संस्थान-विचयाय धर्म्यम् ॥३६॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥३७॥

परे केवलिनः ॥३८॥ पृथक्त्वैकत्ववितर्क-सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति-व्युपरतक्रियानिवर्तीनि ॥ ३९ ॥ त्र्येकयोग-काययोगा-योगानाम्॥४०॥ एकाश्रये सवितर्क-वीचारे पूर्वे ॥४१॥ अवी-चारं द्वितीयम्॥४२॥ वितर्कः श्रुतम्॥४३॥ वीचारोऽर्थ-व्यञ्जन-योग-संक्रान्तिः ॥४४॥ सम्यग्दृष्टि-श्रावक-विरतानन्तवियोजक-दर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशान्त-मोहक्षपक- क्षीणमोह-जिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुण-निर्जराः ॥ ४५ ॥ पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रन्थ-स्नातका निर्ग्रन्थाः॥४६॥ संयम-श्रुत-प्रतिसेवना-तीर्थ-लिङ्ग-लेश्योपपाद-स्थान-विकल्पतः साध्याः ॥४७॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्याय ॥९॥

मोहक्षयाज्ज्ञान-दर्शनावरणान्तराय-क्षयाच्च केवलम्॥१॥ बन्धहेत्वभाव-निर्जराभ्यां कृत्स्न-कर्म-विप्रमोक्षो मोक्षः ॥२॥ औपशमिकादि-भव्यत्वानां च ॥३॥ अन्यत्र केवलसम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-सिद्धत्वेभ्यः ॥४॥ तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्या लोका-न्तात् ॥ ५ ॥ पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद् बन्धच्छेदात्तथागतिपरि-णामाच्च॥६॥ आविद्धकुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाबुवदेरण्ड-बीजवदग्निशिखावच्च ॥७॥ धर्मास्तिकायाभावात् ॥८॥ क्षेत्र-काल-गति-लिङ्ग-तीर्थ-चारित्र-प्रत्येकबुद्ध -बोधित-ज्ञानावगाह-नान्तर-संख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ॥९॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्याय ॥१०॥

कोटीशत द्वादश चैव कोट्यो लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव ।
पञ्चाशदष्टौ च सहस्रसंख्यामेतत् श्रुतं पञ्चपद नमामि ॥ १ ॥

अरहंत भासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सव्वं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाणमहोवयं सिरसा ॥ २ ॥
अक्षर-मात्र-पद-स्वर-हीन व्यंजन-सन्धि-विवर्जित-रेफम् ।
साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं को न विमुह्यति शास्त्र-समुद्रे ॥३॥
दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्त्वार्थे पठिते सति ।
फलं स्यादुपवासस्य भाषितं मुनिपुंगवै ॥ ४ ॥
तत्त्वार्थसूत्रकर्त्तारं गृद्ध्रपिच्छोपलक्षितम् ।
वन्दे गणीन्द्रसंजातमुमास्वामिमुनीश्वरम् ॥ ५ ॥
जं सक्कइ तं कीरइ जं पुण सक्कइ तहेव सद्दहणं ।
सद्दहमाणो जीवो पावइ अजरामरं ठाणं ॥६॥
तवयरणं वयधरणं संजमसरणं च जीवदयाकरणम् ।
अंते समाहिमरणं चउविहदुक्खं णिवारेइ ॥ ७ ॥
इति तत्त्वार्थसूत्रं समाप्तम् ।

चौवीस तीर्थंकरोंके चिन्ह

छप्पय ।

गऊपुत्र गजराज, बाज बानर मनमोहै ।
कोक कमल साथिया, सोम सफरीपति सोहै ॥
सुरतरु गैंड़ा महिष, कोल पुनि सेही जानौं ।
वज्र हिरन अज मीन, कलश कच्छप उर आनौं ॥
शतपत्र शंख अहिराज हरि ऋषभदेव जिन आदिले ।
वर्द्धमानलौं जानिये, चिन्ह चारु चौवीस ये ॥

श्री चांदनगांव महावीर स्वामी पूजा

छन्द ।

श्री वीर सन्मति गांव चाँदन में प्रकट भये आय कर ।
जिनको वचन मन काय से मैं पूजहूँ शिर नाय कर ॥
हुये दयामय नार नर लखि, शांतिरूपी भेष को ।
तुम ज्ञानरूपी भान से कीना सुशोभित देश को ॥
सुर इन्द्र विद्याधर मुनि नरपति नवावें शीस को ।
हम नवत नित चावसों महावीर प्रभु जगदीश को ॥

ॐ ह्रीं श्री चांदनपुर महावीर जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ॥
ॐ ह्रीं श्री चांदनपुर महावीर जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।
ॐ ह्रीं श्री चांदनपुर महावीर जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक ।

क्षीरोदधि से भरि नीर कंचन के कलशा ।
तुम चरणनि देत चढ़ाय आवागमन नशा ॥
चाँदनपुर के महावीर तोरी छवि प्यारी ।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी ॥
ॐ ह्रीं श्री चांदनपुर महावीर स्वामिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ॥ १ ॥

मलयागिरि और कपूर केशर ले हरषों ।
प्रभु भव आताप मिटाय तुम चरणनि परसों ॥ चाँदन०
ॐ ह्रीं श्री चांदनपुर महावीर स्वामिने भवातापविनाशनाय चन्दनं ॥ २ ॥

तन्दुल उज्ज्वल अति धोय थारा में लाऊँ।
तुम सन्मुख पुञ्ज चढ़ाय अक्षय पद पाऊँ॥ चाँदन०
ॐ ह्रीं श्री चाँदनपुर महावीर स्वामिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षत० ॥ ३ ॥

बेला केतुकी गुलाब चम्पा कमल लऊँ।
जे कामबाण करि नाश तुम्हरे चरण दऊँ॥ चाँदन०
ॐ ह्रीं श्री चाँदनपुर महावीर स्वामिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्प० ॥ ४ ॥

फैनी गुञ्जा अरु स्वार मोदक ले लीजे।
करि क्षुधा रोग निरवार तुम सन्मुख कीजे॥ चाँदन०
ॐ ह्रीं श्री चाँदनपुर महावीर स्वामिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य ० ॥ ५ ॥

घृत में कर्पूर मिलाय दीपक मे जारो।
करि मोह तिमिर को दूर तुम सन्मुख बारो॥ चाँदन०
ॐ ह्रीं श्री चाँदनपुर महावीर स्वामिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं० ॥ ६ ॥

दश विधि ले धूप बनाय तामें गन्ध मिला।
तुम सन्मुख खेऊँ आय आठों कर्म जला॥ चाँदन०
ॐ ह्रीं श्री चाँदनपुर महावीर स्वामिने अष्टकर्मदहनाय धूप० ॥ ७ ॥

पिस्ता किसमिस बादाम श्रीफल लौंग सजा।
श्री वर्द्धमान पद राख पाऊँ मोक्ष पदा॥ चाँदन०
ॐ ह्रीं श्री चाँदनपुर महावीर स्वामिने मोक्षफलप्राप्तये फल० ॥ ८ ॥

जल गन्ध सु अक्षत पुष्प चरुवर जोर करों।
लै दीप धूप फल मेलि आगे अर्घ करों॥ चाँदन०
ॐ ह्रीं श्री चाँदनपुर महावीर स्वामिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घ० ॥ ९ ॥

टोक के चरणो का अर्घ

जहां कामधेनु नित आय दुग्ध जु बरसावै।
तुम चरणनि दरशन होत आकुलता जावै॥
जहां छतरी बनी विशाल तहां अतिशय बहु भारी।
हम पूजत मन वच काय तजि संशय सारी॥
चांदनपुर के महावीर तोरी छवि प्यारी।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी॥

ॐ ह्रीं टोक में स्थापित श्री महावीर चरणेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

टीले के अन्दर विराजमान समय का अर्घ

टीले के अन्दर आप सोहें पदमासन।
जहां चतुर निकाई देव आवे जिन शासन॥
नित पूजन करत तुम्हार कर मे ले झारी।
हम हू वसु द्रव्य बनाय पूजे भरि थारी॥
चांदनपुर के महावीर तोरी छवि प्यारी।
प्रभु भव आताप निवार तुम पद बलिहारी॥

ॐ ह्रीं श्री चांदनपुर महावीर जिनेन्द्राय टीले के अन्दर विराजमान समय का अर्घं०।

पञ्चकल्याणक।

कुण्डलपुर नगर मझार त्रिशला उर आयो।
शुक्ल छट्ठि असाढ़ सुर आई रतन जु बरसायो॥ चांदन०

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय असाढ़ शुक्ल छट्ठि गर्भमङ्गल प्राप्ताय अर्घं० १॥

जनमत अनहद भई घोर, आये चतुर निकाई।
तेरस शुक्ल को चैत्र सुर गिरि ले जाई॥ चांदन०

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय चैत शुक्ल तेरस जन्ममङ्गल प्राप्ताय अर्घं ॥ २ ॥

कृष्णा मंगसिर दश जान लौकान्तिक आये।
करि केश लौंच ततकाल झट वन को धाये॥ चांदन०

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय मगसिर कृष्ण दशमी तपमङ्गल प्राप्ताय अर्घं० ॥ ३ ॥

वैशाख शुक्ल दश मांहि घाती क्षय करना।
पायौ तुम केवलज्ञान इन्द्रनि की रचना॥ चांदन०

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय वैशाख शुक्ल दशमी केवलज्ञान प्राप्ताय अर्घं० ॥ ४ ॥

कार्तिक जु अमावस कृष्णा पावापुर ठाहीं।
भयो तीनलोक में हर्ष पहुँचे शिव माहीं॥ चांदन०

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय कार्तिक कृष्ण अमावस मोक्षमङ्गल प्राप्ताय अर्घं० ॥ ५ ॥

जयमाला।

दोहा—मङ्गलमय तुम हो सदा श्रीसन्मति सुखदाय।
चांदनपुर महावीर की कहूँ आरती गाय॥

पद्धड़ी छन्द।

जय जय चाँदनपुर महावीर, तुम भक्तजनौ की हरत पीर।
जड़ चेतन जग के लखत आप, दई द्वादशांग वाणी अलाप॥
अब पञ्चम काल मझार आय, चाँदनपुर अतिशय दई दिखाय।
टीले के अन्दर बैठि वीर, नित हरा गाय का आप क्षीर॥

ग्वाला को फिर आगाह कीन, जब दर्शन अपना आप दीन।
सूरत देखी अति ही अनूप, हैं नग्न दिगम्बर शान्ति रूप॥
तहां श्रावक जन वह गये आय, किये दर्शन करि मनवचनकाय।
है चिह्न शेर का ठीक जान, निश्चय है ये श्री वर्द्धमान॥
सब देशन के श्रावक जु आय, जिन भवन अनूपम दियो बनाय।
फिर शुद्ध दई वेदी कराय, तुरतहि गजरथ फिर लयो सजाय॥
ये देख ग्वाल मन में अधीर, मम ग्रह को त्यागो नही वीर।
तेरे दर्शन बिन तजूं प्राण, सुनि टेर मेरी किरपा निधान॥
कीने रथ में प्रभु विराजमान, रथ हुआ अचल गिरि के समान।
तब तरह-तरह के किये जोर, बहुतन रथ गाडी दिये तोड़॥
निशिमाहि स्वप्न सचिवहिं दिखात, रथ चलै ग्वाल का लगत हाथ।
औरहि झट चरण दियो बनाय, सन्तोष दियो ग्वालहिं कराय॥
करि जय जय प्रभु से करी टेर, रथ चल्यो फेर लागी न देर।
बहु नृत्य करत बाजे बजाई, स्थापन कीने तह भवन जाई॥
इक दिन नृप को लगा दोष, धरि तोप कही नृप खाई रोष।
तुमको जब ध्याया वहां वीर, गोला से झट बच गया वजीर॥
मन्त्री नृप चाँदनगांव आय, दर्शन करि पूजा की बनाय।
करि तीन शिखर मन्दिर रचाय, कञ्चन कलशा दीने धराय॥
वह हुक्म कियो जयपुर नरेश, सालाना मेला हो हमेश।
अब जुडन लगे नर और नार, तिथि चैत शुक्ल पूनों मझार॥
मीना गूजर आवें विचित्र, सब वरण जुटे करि मन पवित्र।
बहु निरत करत गावें सुहाय, कोई-कोई घृत दीपक रह्यो चढाय॥

कोई जय जय शब्द करैं गम्भीर, जय जय जय हे श्री महावीर।
जैनी जन पूजा रचत आन, कोई छत्र चवर के करत दान॥
जिसकी जो मन इच्छा करन्त, मन वाछित फल पावे तुरन्त।
जो करै वन्दना एक बार, सुख पुत्र सम्पदा हो अपार॥
जो तुम चरणो मे रखै प्रीत, ताको जग मे को सकै जीत।
है शुद्ध यहा का पवन नीर, जहा अति विचित्र सरिता गम्भीर॥
'पूरणमल' पूजा रची सार, हो भूल लेउ सज्जन सुधार।
मेरा है शमशाबाद ग्राम, त्रयकाल करूँ प्रभु को प्रणाम॥

घत्ता।

श्रीवर्द्धमान तुम गुण निधान, उपमा न बनी तुम चरण की।
है चाह यही नित बनी रहै, अभिलाष तुम्हारे दर्शन की॥

ॐ ह्री श्री चाँदनगाव महावीर जिनेन्द्राय जयमालार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—अष्ट-कर्म के दहन को पूजा रची विशाल।
पढे सुने जो भाव से छूटे जग जञ्जाल॥
सम्वत् जिन चौबीस सौ है बासठ की साल।
एकादश कार्तिक बदी पूजा रची सम्हाल॥

इत्याशीर्वाद।

सदाचार

- मानव जीवन राज्य है, मन उसका राजा है, इन्द्रियाँ उसकी सेना हैं, कषाय शत्रु है। यदि मन विवेकशील है तो इन्द्रियाँ सदा सचेत रह कर कषाय शत्रुओं को पराजित करती रहेंगी।

—'वर्णी वाणी' से

बृहत् अभिषेक पाठ

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवंद्य जगत्त्रयेशं, स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम् । श्रीमूलसंघसुदृशाम् सुकृतैकहेतुजैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाभ्यधायि ॥ १ ॥

पुष्पाञ्जलिं क्षेपण ।

सौगन्ध्यसंगतमधुव्रतझंकृतेन, सौवर्ण्यमानमिव गन्धमनिंद्यमादौ । आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्दवन्द्य, पादारविन्दमभिवन्द्य जिनोत्तमानाम् ॥ २ ॥

अभिषेक करनेवालो को अङ्ग मे चन्दन लगाना चाहिये ।

नोट—अभिषेक पाठ करने के पहले गर्भ और जन्म के दो मगल बोलना चाहिये ।

प्रोत्फुल्लनीलकुलिशोत्पलपद्मराग, निर्जत्करप्रकरबंधसुरेन्द्रचापं । जैनाभिषेक समयेऽगुलिपर्वमूले, रत्नांगुलीयकमहं विनिवेशयामि ॥ ३ ॥

अभिषेक करनेवालों को मुद्रिका धारण करना चाहिये ।

सम्यक्पिनद्धनवनिर्मलरत्नपंक्तिः, रोचिर्वृहद्वलयजातबहुप्रकारं । कल्याणनिर्मितमहं कटकं जिनेशं, पूजाविधानललिते स्वकरे करोमि ॥ ४ ॥

अभिषेक करनेवालो को हाथ में ककण धारण करना चाहिये ।

पूर्वं पवित्रतरसूत्रविनिर्मितं यत्, प्रीतः प्रजापतिरकल्पयदंगसंगं । सद्भूषणं जिनमहे निजकण्ठधार्य्ययज्ञोपवीतमहमेष तदा तनोमि ॥ ५ ॥

अभिषेक करनेवालों को यज्ञोपवीत धारण करना चाहिये ।

पुन्नागचम्पकपयोरुहकिंकरात,जातीप्रसूननवकेसर-

कुन्ददग्धम् । देव ! त्वदीयपदपंकजसत्प्रसादात्, मूर्द्धनि प्रणाममतिशेषकरं दधेऽहं ॥ ६ ॥

अभिषेक करनेवालों को शिर पर मुकुट धारण करना चाहिये।

कटकं च सूत्रत्रयकुण्डलानि, केयूरहारगजमुद्रितमुद्रिकां च। प्रालेयपाटं मुकुटस्वरूपं, स्वस्ति क्रियामेखलकर्णपूर्णं ॥ ७ ॥

अभिषेक करनेवालों को कुण्डल धारण करना चाहिये।

ये सन्ति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता, नागाः प्रभूत वलदर्पयुता विवोधाः। संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां, प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम् ॥ ८ ॥

ॐ क्ष्रां क्ष्रीं क्ष्रूं क्ष्रौं क्ष इसको पढ कर अभिषेक के लिये भूमि या चौकी का प्रक्षालन करे।

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः, प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेकवारम्। अत्युद्धमुद्यतमहं जिनपादपीठं, प्रक्षालयामि भवसम्भवतापहारि ॥ ९ ॥

सिंहासन प्रक्षालन करें, जिस पर भगवान विराजते है।

श्रीशारदा सुमुख निर्गत बीजवर्णं, श्रीमंगलीकवर सर्वजनस्य नित्यं। श्रीमत्स्वयंक्षयित तस्य विनाश विघ्नं, श्रीकारवर्ण लिखितं जिन भद्रपीठे ॥ १० ॥

यह श्लोक पढ कर सिंहासन पर 'श्री' लिखना चाहिये।

इन्द्राग्निदण्डधरनैऋतपाशपाणि, वायुत्तरेशशशि मौलिफणीन्द्रचन्द्राः। आगत्य यूयमिह सानुचराः सचिन्हाः स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपाभिषेके ॥११॥

दश दिक्पालों के लिये अर्घ चढ़ाने की विधि

१ ॐ आं क्रौं ह्रीं इन्द्र आगच्छ आगच्छ इन्द्राय स्वाहा ।

२ ॐ आं क्रौं ह्रीं अग्ने आगच्छ आगच्छ अग्नये स्वाहा ।

३ ॐ आं क्रौं ह्रीं यम आगच्छ आगच्छ यमाय स्वाहा ।

४ ॐ आं क्रौं ह्रीं नैऋत आगच्छ आगच्छ नैऋताय स्वाहा ।

५ ॐ आं क्रौं ह्रीं वरुण आगच्छ आगच्छ वरुणाय स्वाहा ।

६ ॐ आं क्रौं ह्रीं पवन आगच्छ आगच्छ पवनाय स्वाहा ।

७ ॐ आं क्रौं ह्रीं कुबेर आगच्छ आगच्छ कुबेराय स्वाहा ।

८ ॐ आं क्रौं ह्रीं ऐशान आगच्छ आगच्छ ऐशानाय स्वाहा ।

९ ॐ आं क्रौं ह्रीं धरणीन्द्र आगच्छ आगच्छ धरणीन्द्राय स्वाहा ।

१० ॐ आं क्रौं ह्रीं सोम आगच्छ आगच्छ सोमाय स्वाहा ।

इति दश दिक्पाल मन्त्रा ।

अत्युग्रतारमौक्तिकचूर्णवर्णैर्भृंगारनालमुखनिर्गतचारु धारैः । शीतैः सुगन्धिभिरतीव जलैर्जिनेन्द्रबिंबोत्सव-स्नपनमेष समारभेऽहम् ॥ १२ ॥

पुष्पाञ्जलि क्षेपण ।

दध्युज्ज्वलाक्षतमनोहरपुष्पदीपैः, पात्रार्पितैः प्रतिदिनं महतादरेण । त्रैलोक्यमंगलसुखालयकामदाहमारार्तिकं तव विभोरवतारयामि ॥ १३ ॥

दधि, अक्षत, पुष्प और दीप पात्र में लेकर मंगल पाठ तथा अनेक वादित्रों के साथ भगवान की आरती उतारनी चाहिये ।

पुण्याहमद्य सुमहन्ति च मंगलानि, सर्वे प्रहृष्टमनसश्च भवन्ति भव्याः । पुण्योदकेन भगवन्तमनन्तकान्तिमर्हं-तिमुज्ज्वलतनुं परिवर्तयामि ॥ १४ ॥

नाथ ! त्रिलोकमहिताय दशप्रकारः धर्माम्बुवृष्टि-परिषिक्तजगत्त्रयाय । अर्घं महार्घगुणरत्नमहार्णवाय, तुभ्यं ददामि कुसुमैर्विशदाक्षतैश्च ॥ १५ ॥

(जहाँ भगवान विराजमान हों, वहाँ जाकर अर्घ चढ़ाना चाहिये ।)

जन्मोत्सवादिसमयेषु यदीयकीर्ति, सेन्द्राः सुराः प्रमदभारनताः स्तुवन्ति । तस्याग्रतो जिनपतेः परया विशुद्धया, पुष्पांजलिं मलयजातमुपाक्षिपेऽहम् ॥ १६ ॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

नीचे लिखा श्लोक बोल कर सिंहासन पर जिनबिम्ब की स्थापना ।

यं पाण्डुकामलशिलागतमादिदेवमस्नापयन् सुरवराः सुरशैलमूर्ध्नि । कल्याणमीप्सुरहमक्षततोयपुष्पैः, संभावयामि पुर एव तदीय बिम्बम् ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं अरहन्तदेव ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं अरहन्तदेव ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं अरहन्तदेव ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

सत्पल्लवार्चितमुखान्कलधौतरौप्य, ताम्रारकूटघटितान्पयसा सुपूर्णान् । संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान्, संस्थापयामि कलशान् जिनवेदिकान्ते ॥१८॥

चार दिशाओं में जल से पूर्ण स्वस्तिक लगे हुए कलश स्थापन ।

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमलबहुलेनामुना चन्दनेन, श्रीदृक् पेयैरमीभिः शुचिसदकचयैरुद्गमै रेभिरुद्धैः । हृद्यै रेभिर्निवेद्यै र्मख भवनमिमैर्दीपयद्भिः प्रदीपैः धूपैः

प्रायोभिरेभिः पृथुभिरपि फलै रेभिरीशैर्यजामि ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री परमदेवाय श्रीअर्हंपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटीसंलग्नरत्नकिरणच्छविधूसरांघ्रिम्। प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टैर्भक्त्या जलै र्जिनपतिं वहुधाभिषिंचे ॥ २० ॥

ॐ ह्रीं श्री भगवन्त कृपालसन्त श्रीवृषभादि वीर पर्यन्त चतुर्विंशति तीर्थंङ्कर परमदेव जिनाभिषेक समये आद्ये आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे नाम्नि नगरे मासानां मासोत्तमे मासे पक्षे पर्वणि शुभ • तिथौ वासरे मुनि आर्यिकाणां क्षुल्लक क्षुल्लिकाणां श्रावक श्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं जलेनाभिसिंचेति स्वाहा।

यह मन्त्र पढ़कर भगवान के ऊपर शुद्ध जल की धारा देनी चाहिये।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिराम, देहप्रभावलयसंगमलुप्तदीप्तिम्। धारां घृतस्य शुभगन्धगुणानुमेयां, वन्देऽर्हतां सुरभिसंस्नपनोपयुक्ताम् ॥

गाथा—जो घियकंचणवण्णहुइ जिणण्हावे धरि भाव।
सो दुग्गयगइ अवहर जम्मनदुक्कइपाइ ॥

अभिषेक मन्त्र में 'जलेनाभिषिंचे' की जगह 'घृतेनाभिषिंचे' पढें। इति घृत कलशाऽभिषेक। पीछे 'उदकचन्दनादि' बोल कर अर्घ चढाना चाहिये।

सम्पूर्णशारदशशांकमरीचिजालस्यन्दैरिवात्मयशसामिव सुप्रवाहैः क्षीरैर्जिनाः शुचितरैरभिषिंच्यमानाः, सम्पादयन्तु मम चित्तसमीहितानि ॥

गाथा—दुद्धहि जिणवर जो ण्हवई मुत्ताहलधवलेण।
सो संसार न संभवइ मुच्चइ पावमलेण॥

अभिषेक मन्त्र मे 'जलेनाभिषिंचे' की जगह 'क्षीरेणाभिषिंचे' पढें। इति दुग्धकलशाभिषेक। पीछे 'उदकचन्दनादि' बोल कर अर्घ चढावें।

दुग्धाब्धिवीचिपयसंचितफेनराशिपाण्डुत्वकान्तिमवधारयतामतीव। दध्ना गता जिनपतेः प्रतिमा सुधारा, सम्पाद्यतां सपदि वांछित सिद्धये नः।

गाथा—दुद्धझडाझड उत्तरइ दडवडदहीपडन्त।
भवियह मुच्चइ कलिमलह जिणदिट्ठ उवीसन्त॥

मन्त्र में 'जलेनाभिषिंचे' की जगह 'दध्ना' पढें। इति दधिकलशाभिषेक। पीछे 'उदकचन्दनादि' बोल कर अर्घ चढाना चाहिये।

भक्त्याललाटतटदेशनिवेशितोच्चैः, हस्तैश्च्युता सुरवराऽसुरमर्त्यनाथैः। तत्कालपीलितमहेक्षुरसस्य धारा, सद्यः पुनातु जिनविम्बगतैव युष्मान्॥

मन्त्र में 'जलेनाभिषिंचे' की जगह 'इक्षुरसेनाभिषिंचे' पढें। पीछे "उदकचन्दन" बोल कर अर्घ चढाना चाहिये।

संस्नापितस्य घृतदुग्धदधीक्षुवाहैः, सर्वाभिरौषधिभिरर्हतमुज्ज्वलाभिः। उद्वर्तितस्य विदधाम्यभिषेकमेलाकालेयकुंकुमरसोत्कटवारिपूरैः॥

गाथा—रसदुद्धदही पाणीय जो जिनवर ण्हावै।
भवसंकल तोडे विकरि अचल सुक्ख पावइ॥

मन्त्र में 'जलेनाभिषिंचे' की जगह 'सर्वौषधेनाभिषिंचे' पढें। इति सर्वौषधिकलशाभिषेक। पीछे 'उदकचन्दनादि' बोल कर अर्घ चढाना।

द्रव्यैरनल्प घनसारचतुःसमाद्यै रामोदवासितसमस्त-दिगन्तरालैः । मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुंगवानां, त्रैलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि ॥

मन्त्रमें 'जलेनाभिषिंचे' की जगह 'सुगन्धजलेन' पढें। केशर कर्पूरादि सुगन्धित पूर्ण कलशाभिषेक। पीछे 'उदकचन्दनादि' बोल कर अर्घ चढ़ाना।

इष्टैर्मनोरथशतैरिव भव्यपुंसां, पूर्णैः सुवर्णकलशैर्निखिलैर्वसानैः। संसारसागरविलंघन हेतुसेतुमाप्लावये त्रिभुवनैकपतिं जिनेन्द्रम् ॥

श्लोक—श्रीमन्नीलोत्पलामोदैराहूता भ्रमरोत्कटैः ।
गन्धोदकैर्जिनेन्द्रस्य पादाभ्यर्चनमारंभे ॥

पूरा अभिषेक मन्त्र बोल कर बाकी बचे हुए समस्त कलशोंसे भगवान का अभिषेक करना चाहिये।

अथ गन्धोदक धारण

मुक्ति श्री वनिताकरोदकमिदं पुण्यांकुरोत्पादकं ।
नागेन्द्रत्रिदशेन्द्रचक्रपदवी राज्याभिषेकोदकं ॥
सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनलता संवृद्धि सम्पादकं ।
कीर्तिश्री जयसाधकं तव जिन ! स्नानस्य गन्धोदकं

श्लोक—निर्मलं निर्मलीकरणं पावनं पापनाशनम् ।
जिनगन्धोदकं वन्दे अष्टकर्मविनाशकम् ॥

इसको पढ कर गन्धोदक अपने मस्तक पर लगाना चाहिये।

अभिषेक पूजा

अथाष्टकम्

सद्गन्धतोयैः परिपूरितेन, श्रीखण्डमाल्यादिविभूषितेन ।
पादाभिषेकं प्रकरोमिभूत्यै, भृङ्गारनालेनजिनस्यभक्त्या ॥१॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

काश्मीरपंकहरिचन्दनसारसांद्र निस्पंदनादिरचितेन विलेपनेन । अभ्याजसौरभतनौ प्रतिमा जिनस्य, संचर्चयामि भवदुःखविनाशनाय ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनवृषभादिवीरान्तेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीतिस्वाहा ।

तत्कालभक्तिसमुपार्जितसौख्यबीज, पुण्यात्सरेणुनिकरैरिव संगलब्धिः । पुंजीकृतःप्रतिदिनं कमलाक्षतोघैः, पूजां करोति रचयामि जिनाधिपानाम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनवृषभादिवीरान्तेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षत निर्वपामीति स्वाहा ।

अम्भोजकुन्दबकुलोत्पलपारिजात, मन्दारजातविदलं नवमल्लिकाभिः । देवेन्द्र मौलिविरजीकृतपादपीठं, भक्त्या जिनेश्वरमहं परिपूजयामि ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनवृषभादिवीरान्तेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।

अत्युज्ज्वलं सकललोचनचारुहार, नानाविधौ कृतनिवेद्यमनिन्द्यगन्धं । आघ्रायमाण रमणीयसि हेमपात्रे संस्थापितं जिनवराय निवेदयामि ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनवृषभादिवीरान्तेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।

निःकज्ज्वलस्थिरशिखाकलिकाकलापैः, माणिक्यरश्मिशिखराणिविडंबयद्भिः । सर्वाभिरुज्ज्वलविशालतरा-

वलोकै र्दीपैर्जिनेन्द्रभवनानि यजे त्रिसन्ध्यम् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितिर्जिनवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा

कर्पूरचन्दनतरुष्कसुरेन्द्रदारुकृष्णागरुप्रभृतिचूर्णविधान-
सिद्धि । नासाक्षिकण्ठमनसां प्रियधूमवर्तिधूपैर्जिनेन्द्र-
मभितो वहुभीः क्षपेऽहम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनवृषभादिवीरान्तेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

वर्णेन जातिनयनोत्सवमावहन्ति, यानी प्रियाणि
मनसो रससंपदा च । गन्धेन सुष्ठु रमयन्ति च यान्ति
नाशं. तैस्तैः फलैर्जिनपतेर्विदधामि पूजाम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

एवं यथाविधिमनागपि यः सपर्यामर्हस्तव स्तवपुर-
स्सरमातनोति । कामं सुरेन्द्रनरनाथसुखानि भक्त्या,
मोक्षं तमप्यभयनन्दि पदं स याति ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनवृषभादिवीरान्तेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

श्रीमत्श्रीजिनराजजन्मसमये इन्द्रोऽतिहर्षायमान् ।
इन्द्राणीपरिवार भृत्यसहितो देवांगनां नृत्यवान् ॥
नानागीतविनोदमंगलविधौ पूजार्थमादाय सः ।
जलगन्धाक्षतपुष्पचारुचरुभिर्दीपैश्च धूपैः फलैः ॥

छन्द ।

जन्म जिनराज को जवहिं जिन जानियो ।
इन्द्र धरणिन्द्र सुर सकल अकुलानियो ॥

देवदेवांगना चलियउ जयकारती ।
सचिय सुरपति सहित करहिं जिन आरती ॥ २ ॥
साजि गजराज हरि लक्ष योजन तनौ ।
वदन शतवदनप्रतिदन्तवसु सोहनौ ॥
सजल भरिपूर प्रतिदन्त सर सोहती ॥ सचिय० ॥ ३ ॥
सरहि सर पञ्च द्वै इक कमलिनी वनी ।
तासु प्रति कमल पच्चीस शोभा वनी ॥
कमल दल एक सौ आठ विस्तारती ॥ सचिय० ॥ ४ ॥
दलहि दल अपछरा नाचही भावसौं ।
करहिं संगीत जयकार सुर रागसौं ॥
ताग्र तत थेइ थेइ करति पगटारती ॥ सचिय० ॥ ५ ॥
तासु करि बैठि हरि सकल परिवारसों ।
देहिं परदिछना जिनहि जयकारसौं ॥
आनि कर सचिय जिननाथ उद्धारती ॥ सचिय० ॥ ६ ॥
आनि पाण्डुकशिला पूर्वमुख थापि जिन ।
करहिं अभिषेक जो इन्द्र उत्साहसों ॥
अधिक तिनदेखि प्रभु कोटि छवि वारती ॥ सचिय० ॥ ७ ॥
योजना आठ गम्भीर कलसा वनौ ।
चारि चौड़ाई मुख एक जोजन तनौ ॥
सहस्र अठोतरसौ कलश शिर ढारती ॥ सचिय० ॥ ८ ॥
छत्र मणि खचित ईशान शिर ढारती ।
सनतमाहेन्द्र दोऊ चमर शिर ढारती ॥
देव-देवी सुपुष्पाञ्जलि डारती ॥ सचिय० ॥ ९ ॥

जल सुचन्दन अक्षत पुष्प चरु लै धरैं ।
दीप अरु धूप फल अर्घ पूजा करैं ॥
पाण्डुका और नीराञ्जना वारती ॥ नचिय० ॥ १० ॥
कियो सिंगार सब अंग सम्मानकौ ।
आनि मातहिं दियो फेरि जिनराजकौ ॥
तृप्त नहिं होत दृग रूप को नीहारती ॥ सचिय० ॥ ११ ॥
ताल मृदङ्ग-ध्वनि सप्त स्वर वाजहीं ।
नृत्य ताण्डव करत इन्द्र अति छाजहीं ॥
करत उत्साह सौं जिन सुपग ढारती ॥ सचिय० ॥ १२ ॥
भव्यजन लोक जन्ममहोत्सव करैं ।
आगिले जन्म के सकल पातक हरैं ॥
भक्ति जिनराज की पार उत्तारती ।
नचिय सुरपति सहित करहिं जिन आरती ॥१३॥

घत्ता—जिनवर वर माता, माननीया सुरेन्द्रैः ।
स जयति जिनराजा "लालचन्द्र" विनोदी ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनवृषभादितीर्थङ्करेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं इत्याशीर्वाद ।

नव तिलक

पूजा करनेवाले को प्रथम नव तिलक करना चाहिये ।

शिखा शीश की जानि, ललाट सु लीजिये ।
कण्ठ, हृदय अरु कान, भुजा गनि लीजिये ॥
कूंख, हाथ अरु नाभि, सरस शुभ कीजिये ।
तब जिनवर को जजो, तिलक नव कीजिये ॥१॥

देव-शास्त्र-गुरु पूजा संस्कृत

पूजा प्रारम्भ करते समय विनयपाठ पढ़ने के बाद आगे छपा हुआ जिन सहस्र नाम पढ़ कर अर्घ चढ़ाना चाहिये। इसके बाद स्वस्ति मंगल बोल कर देव-शास्त्र-गुरु पूजा प्रारम्भ करना चाहिये।

सार्वः सर्वज्ञनाथः सकल-तनुभृतां पाप-संताप-हर्ता
त्रैलोक्याक्रान्त-कीर्तिः क्षत-मदनरिपुर्घातिकर्म-प्रणाशः।
श्रीमान्निर्वाणसंपद्वरयुवति-करालीढ-कण्ठः सुकण्ठैः
देवेन्द्रैर्वन्द्य-पादो जयति जिनपतिः प्राप्त-कल्याण-पूजः ॥१॥

जय जय जय श्रीसत्कान्ति-प्रभो जगतां पते।
जय जय भवानेव स्वामी भवाम्भसि मज्जताम्॥
जय जय महामोह-ध्वान्त-प्रभातकृतेऽर्चनम्।
जय जय जिनेश त्वं नाथ प्रसीद करोम्यहम्॥२॥

ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

देवि श्रीश्रुतदेवते भगवति त्वत्पाद-पङ्केरुह-
द्वन्द्वे यामि शिलीमुखत्वमपरं भक्त्या मया प्रार्थ्यते।
मातश्चेतसि तिष्ठ मे जिन-मुखोद्भूते सदा त्राहि मां
दृग्दानेन मयि प्रसीद भवतीं सम्पूजयामोऽधुना॥३॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशाङ्गश्रुतज्ञान अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः।
तपःप्राप्त-प्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः॥४॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अक्षय अक्षय मैं कहूँ, सो अक्षय पद नाय।
महा अक्षय पद तुम लियो, यातैं पूजूं नाय ॥
ॐ ह्रीं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
विनीत-भव्याब्ज-विबोधसूर्यान्वर्यान् सुचर्या-कथनैक-धुर्यान्।
कुन्दारविन्द-प्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेन्द्र-सिद्धान्त-यतीन् यजेऽहम्॥८॥
पुष्प चाप धर पुष्प सर, धारी मनमथ वीर।
यातैं पूजा पुष्प की, हरै मदन की पीर॥
कामदाप पुष्पे हरो, सो तुम जीते राय।
यातैं मैं पायन पडूं, मदन काम नशि जाय॥
ॐ ह्रीं कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
कुदर्प-कन्दर्प-विसर्प-सर्प-प्रसह्य-निर्णाशन-वैनतेयान्।
प्राज्याज्यसारैश्चरुभी रसाढ्यैर्जिनेन्द्र-सिद्धान्त-यतीन् यजेऽहम्॥९॥
परम अन्न नैवेद्य विधि, क्षुधाहरण तन पोष;
जे पूजैं नैवेद्य सों, मिटै क्षुधादिक दोष॥
भोजन नाना विधि कियो, मूल क्षुधा नहिं जाय।
क्षुधा रोग प्रभु तुम हरो, यातैं पूजूं पाय॥
ॐ ह्रीं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
ध्वस्तोद्यमान्धीकृत-विश्व-विश्वमोहान्धकार-प्रतिघात-दीपान्।
दीपैः कनत्कांचन-भाजनस्थैर्जिनेन्द्र-सिद्धान्त-यतीन् यजेऽहम्॥१०
आपा पर देखे सकल, निशि मे दीपक जोत।
दीपक सों जिन पूजिये, निर्मल ज्ञान उद्योत॥
दीप शिखा घट में वसै, ज्ञान घटा घट माय।
ढूंढ़त डोलैं करम को, कृत कलंक मिट जाय॥
ॐ ह्रीं मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दुष्टाष्ट-कर्मेन्धन-पुष्ट-जाल-संधूपने भासुर-धूमकेतून्।
धूपैर्विधूतान्य-सुगन्ध-गन्धैर्जिनेन्द्र-सिद्धान्त-यतीन् यजेऽहम्॥११॥

पावक में सुगन्ध को, धूप कराये सोय।
खेवत धूप जिनेश को, अष्ट कर्म क्षय होय॥
जय प्रभु धूपायन लखो, ध्यान अग्निपर धीर।
कर्म काठिन खेइये, त्रिभुवन पति गम्भीर॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसामगम्यान् कुवादि-वादाऽस्खलित-प्रभावान्।
फलैरलं मोक्ष-फलाभिसारैर्जिनेन्द्र-सिद्धान्त-यतीन् यजेऽहम्॥१२॥

जो जैसी करनी करै, सो तैसा फल लेय।
फल पूजा महाराज की, निश्चय शिव फल देय॥
फल फल मानै फल है ये फल पै फल नाय।
महा मोक्ष फल तुम लियो, ताते पूजूं पांय॥

ॐ ह्रीं मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा।

सद्वारि-गन्धाक्षत-पुष्पजातैर्नैवेद्य-दीपामल-धूप-धूम्रैः।
फलैर्विचित्रैर्घन-पुण्य-योगाज्जिनेन्द्र-सिद्धान्त-यतीन् यजेऽहम्॥१३॥

जलधारा चन्दन चढ़ौ, अक्षत पुष्प नैवेद्य।
दीप धूप फल अर्घ युत, ये पूजा वसु भेव॥
ये जिन पूजा अष्ट विधि, कीजे कर शुचि अङ्ग।
प्रभु पूजा जलधार सों, दीजे धार अभंग॥

ॐ ह्रीं अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ये पूजा जिननाथ-शास्त्र-यमिना भक्त्या सदा कुर्वते
त्रैसन्ध्यं सुविचित्र-काव्य-रचनामुच्चारयन्तो नराः।

पुण्याढ्या मुनिराज-कीर्ति-सहिता भूत्वा तपोभूषणा-
स्ते भव्याः सकलावबोध-रुचिरा सिद्धिं लभन्ते पराम् ॥१४॥
[इत्याशीर्वाद, पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।]

वृषभोऽजितनामा च सम्भवश्चाभिनन्दनः ।
सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तम: ॥१५॥
चन्द्राभः पुष्पदन्तश्च शीतलो भगवान्मुनिः ।
श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमल-द्युतिः ॥१६॥
अनन्तो धर्मनामा च शान्तिः कुन्थुर्जिनोत्तमः ।
अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमि-तीर्थकृत् ॥१७॥
हरिवंश-समुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ।
ध्वस्तोपसर्ग-दैत्यारिः पार्श्वो नागेन्द्र-पूजितः ॥१८॥
कर्मान्तकृन्महावीरः सिद्धार्थ-कुल-सम्भवः ।
एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥१९॥
पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्भूरि-भूतिभिः ।
चतुर्विधस्य संघस्य शान्तिं कुर्वन्तु शाश्वतीम् ॥२०॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सम्यक्त्वमेव संसार-वारणं मोक्ष-कारणम् ॥२१॥
[पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि]

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सज्ज्ञानमेव संसार-वारणं मोक्ष-कारणम् ॥२२॥
[पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि]

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
चारित्रमेव संसार-वारणं मोक्ष-कारणम् ॥२३॥
[पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि]

देव-जयमाला

वत्ताणुट्ठाणें जणु धणदाणें पइं पोसिउ तुहुं खत्तधरु ।
तवचरणविहाणे केवलणाणें तुहुं परमप्पउ परमपरु ॥१॥
जय रिसह रिसीसर-णविय-पाय । जय अजिय जियंगय-रोस-राय ॥
जय संभव संभव-कय-विओय । जय अहिणंदण णंदिय-पओय ॥२॥
जय सुमइ सुमइ-सम्मय-पयास । जय पउमप्पह पउमा-णिवास ॥
जय जयहि सुपास सुपास-गत्त । जय चंदप्पह चंदाहवत्त ॥३॥
जय पुप्फयंत दंतंतरंग । जय सीयल सीयल-वयण-भंग ।
जय सेय सेय-किरणोह-सुज्ज । जय वासुपुज्ज पुज्जाणुपुज्ज ॥४॥
जय विमल विमल-गुणसेढि-ठाण । जय जयहि अणंताणंत-णाण ॥
जय धम्म धम्म-तित्थयर संत । जय संति संति-विहियायवत्त ॥५॥
जय कुंथु कुंथु-पहुअंगि सदय । जय अर-अर-मा-हर विहिय-समय ॥
जय मल्लि मल्लिआ-दाम-गंध । जय मुणिसुव्वय सुव्वय-णिबंध ॥६॥
जय णमि णमियामर-णियर-सामि । जय णेमि धम्म-रह-चक्क-णेमि ॥
जय पास पास-छिंदण-किवाण । जय वड्ढमाण जस-वड्ढमाण ॥७॥

घत्ता

इह जाणिय-णामहिं दुरिय-विरामहिं परहि वि णमिय-सुरावलिहिं ।
अणिहणहिं अणाइहिं समिय-कुवाइहिं पणविवि अरहंतावलिहिं ॥

ॐ ह्रीं वृषभादिमहावीरान्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो अर्घं

शास्त्र-जयमाला

संपइ-सुह-कारण कम्म-वियारण भव-समुद्द-तारणतरणं ।
जिणवाणि णमस्समि सत्ति पयासमि सग्ग-मोक्ख-संगम-करणं ॥१॥
जिणिंद-मुहाओ विणिग्गय-तार । गणिंद-विगुंफिय गंथ-पयार ॥
तिलोयहि मंडण धम्मह खाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥२॥
अवग्गह-ईह-अवायजुएहिं । सुधारणभेयहि तिण्णिसएहिं ॥

मई छत्तीस वहु-प्पमुहाणि । सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥३॥
सुदं पुण दोण्णि अणेय-पयार । सुवारह-भेय जगत्तय-सार ॥
सुरिंद-णरिंद-समुच्चिय जाणि । सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥४॥
जिणिंद-गणिंद-णरिंदह रिद्धि । पयासइ पुण्ण पुरा किउ लद्धि ॥
णिउग्गु पहिल्लउ एहु वियाणि । सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥५॥
जु लोय-अलोयह जुत्ति जणेइ । जु तिण्णि वि काल सरूव भणेइ ॥
चउग्गइ-लक्खण दुज्जउ जाणि । सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥६॥
जिणिंद-चरित्त विचित्त मुणेइ । सुसावहि धम्मह जुत्ति जणेइ ॥
णिउग्गु वि तिज्जउ इत्थु वियाणि । सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥७॥
सुजीव-अजीवह तच्चह चक्खु । सुपुण्णु वि पाव वि बंध वि मुक्खु ॥
चउत्थु णिउग्गु वि भासिय जाणि । सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥८॥
तिभेयहि ओहि वि णाणु विचित्तु । चउत्थ रिजु विउल मइ उत्तु ॥
सुखाइय केवलणाण वियाणि । सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥९॥
जिणिंदह णाणु जग-त्तय-भाणु । महातम णासिय सुक्ख-णिहाणु ॥
पयच्चउ भत्तिभरेण वियाणि । सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥१०॥
पयाणि सुवारह कोडि सयेण । सुलक्ख तिरासिय जुत्ति-भरेण ॥
सहस अट्ठावण पंच वियाणि । सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥११॥
इकावण कोडिउ लक्ख अठेव । सहस चुलसीदिय सा छक्केव ॥
सढाइगवीसह गन्थ-पयाणि । सया पणमामि जिणिदह वाणि ॥१२॥
घत्ता— इह जिणवर-वाणि विसुद्ध मई । जो भवियण णिय-मण धरई ॥
सो सुर-णरिंद संपइ लहई । केवलणाण वि उत्तरई ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानायार्घं ।

गुरु-जयमाला

भवियह भव-तारण सोलह-कारण अज्जवि तित्थयरत्तणहं ।
तवकम्म असंगइ दयधम्मंगइ पालवि पंच महव्वयहं ॥१॥
वंदामि महारिसि सीलवंत, पंचिंदिय-संजम जोगजुत्त ।
जे ग्यारह अंगह अणुसरंति, जे चउदह पुव्वह मुणि थुणंति॥२॥

पादाणुसारि-वरकुट्ठबुद्धि, उप्पण्णु जाह आयासरिद्धि ।
जे पाणाहारी तोरणीय, जे रुक्ख-मूल आतावणीय ।।३।।
जे मोणिधाय चन्दाहणीय, जे जत्थत्थ वणि णिवासणीय ।
जे पंच-महव्वय धरणधीर, जे समिदि-गुत्ति पालणहि वीर ।।४।।
जे वड्ढहि देह विरत्तचित्त, जे राय-रोस-भय-मोह-चित्त ।
जे कुगइहि संवरु विगयलोह, जे दुरियविणासणकामकोह ।।५।।
जे जल्लमल्लतणगत्तलित्त, आरंभ-परिग्गह जे विरत्त ।
जे तिण्णकाल बाहर गमंति, छट्ठट्ठम-दसमउ तउ चरंति।। ६।।
जे इक्कगास दुइगास लिंति, जे णीरस-भोयण रइ करंति ।
ते मुणिवर वंदउं ठियमसाण, जे कम्म डहइ वर सुक्कझाण।।७।।
बारहविह संजम जे धरंति, जे चारिउ विकहा परिहरंति ।
बावीस परीषह जे सहंति, संसार-महण्णउ ते तरंति ।।८।।
जे धम्मबुद्धि महियलि थुणंति, जे काउस्सग्गे णिसि गमंति।
जे सिद्धि-विलासणि अहिलसंति, जे पक्ख-मास आहार लिंति।।९।।
गोदूहण जे वीरासणीय, जे धणुह-सेज्ज-वज्जासणीय ।
जे तव-बलेण आयास जंति, जे गिरि-गुह-कंदर-विवर थंति।।१०।।
जे सत्तु-मित्त समभाव चित्त, ते मुणिवर वंदउ दिढ-चरित्त ।
चउवीसह गंथह जे विरत्त, ते मुणिवर वंदउ जग-पवित्त ।।११।।
जे सुज्झाणिज्झा एकचित्त, वंदामि महारिसि मोक्खपत्त ।
रयण-त्तय-रंजिय सुद्ध-भाव, ते मुणिवर वंदउ ठिदि-सहाव ।।१२।।

घत्ता

जे तप-सूरा संजम-धीरा सिद्ध-वधू अणुराईया ।
रयण-त्तय-रंजिय कम्मह-गंजिय ते ऋसिवर मय झाईया।।१३।।

[ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।]

वृहत् सिद्धचक्र पूजा भाषा

दोहा

परम ब्रह्म परमातमा, परमजोति परमीश।
परमनिरञ्जन परमपद, नमों सिद्ध जगदीश॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाण सिद्ध परमेष्ठिन ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वानन।

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाण सिद्ध परमेष्ठिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन।

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाण सिद्ध परमेष्ठिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्

अथाष्टकं, सोरठा।

मोहि तृषा दुःख देत, सो तुमने जीती प्रभू।
जलसौं पूजों तोहि, मेरो रोग मिटाइयो॥ १।

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम भव आतप मांहि, तुम न्यारे संसार तैं।
कीजे शीतल छांह, चन्दन सों पूजा करौं॥ २।

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो समारतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीपि स्वाहा।

हम औगुण समुदाय, तुम अक्षय सब गुण भरे।
पूजौं अक्षत ल्याय, दोष नाश गुण कीजिये॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षत निर्वपामीति स्वाहा

काम अग्नि है मोहि, निश्चैय शील सुभाव तुम।
फूल चढ़ाऊँ तोहि, सेवक की बाधा हरो॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो कामवाणविध्वसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।

हमैं क्षुधा दुःख सूर, ध्यान खड्ग सौं तुम हती।
मेरी बाधा चूर, नेवजसौं पूजा करौं॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।

मोहतिमिर हम पास, तुम पै चेतन जोत है।
पूजौं दीप प्रकाश, मेरो तम निरवारियो॥ ६॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा

अष्ट करम वनजाल, मुकति मांहि तुम सुख करौ ।
खेऊँ धूप रसाल. मम निकाल वनजाल से ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अन्तराय दुःखटार, तुम अनन्त थिरता लिये ।
पूजों फल दरशाय, विघनटार शिव फल करो ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

हममें आठों दोष. जजों अरघलों सिद्धजो ।
दीजे वसु गुण मोहि, कर जोरे द्यानत खड़े ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानावरणीकर्मनाशक सिद्ध जयमाला ।

दोहा

मूरति ऊपर पट करौ, रूप न जाने कोय ।
ज्ञानावरणी करमतैं, जीव अज्ञानी होय ॥१॥

चौपाई

तिपसै छत्तिम विधि मति वरणी, ताहि ढकै मति ज्ञानावरणी ।
द्वादश विधि श्रुत ज्ञान न होवै, श्रुत ज्ञानावरणी सो होवै ॥ २ ॥
तिय विधि षट विधि अवधि छिपावै, अवधि ज्ञानावरण कहावै ।
जो विधि मनःपर्य्यय नहि हो है, मनःपर्य्यय आवरणी सो है ॥३॥
केवलज्ञान अनन्तानन्ता, केवल ज्ञानावरणी हन्ता ।
उदय अनुदय मूरख ठानै, कुमति कुश्रुत कुअवधि पहिचानै ॥ ४ ॥
क्षय उपशम करि सम्यक्धारी, चारों ज्ञान लहै अविकारी ।
ज्ञानावरणी सर्व विनाशै, केवल ज्ञान रूप परकाशै ॥ ५ ॥

दोहा

ज्ञानावरणी पञ्च हत, प्रगट्यो केवलज्ञान ।
द्यानत मनवचकायसौं, नमौं सिद्ध गुणखान ॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो ज्ञानावरणी कर्मविनाशनाय अर्घ्यं० ।

दर्शनावरणीकर्मनाशक सिद्ध जयमाला।

दोहा

जैसे भूपति दरश को, होन न दे दरवान।
तैसे दरशन आवरण, देख न देई सुजान ॥१॥

चौपाई।

जाके उदै आप नहि होई, चक्षु दर्शनावर्णी सोई।
नहिं मुख नाक फरस सुख करणं, उदै अचक्षु दर्शनावरण ॥ २ ॥
अवधि दर्श प्रमाण विलोकै, अवधि दर्शनावर्णी रोकै।
केवल लोकालोक निहारै, केवल दर्शनावरण निवारै ॥ ३ ॥
निद्रा उदै सर्व तन सोवै, थोरी नींद सुरत कछु होवै।
प्रचला चलसौ आंख खुली है, अर्द्ध मुदी-सी अर्द्ध खुली है ॥ ४ ॥
निद्रा-निद्रा उदै वखानी, पलक उघार सकै नहि प्राणी।
प्रचला-प्रचला उदै कहावै, लार वहै मुख अंग चलावै ॥ ५ ॥
उठै चलै बोलै सुध नाहीं, जोर विशेष बढ़ै तन माहीं।
काम प्रचण्ड तास तै होवै, स्त्यानगृद्धि निद्रा जो सोवै ॥ ६ ॥

दोहा

दरशन आवरणी हतै, केवल दर्शन रूप।
द्यानत सिद्ध नमों सदा, अमल अचल चिद्रूप ॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो दर्शनावरणी कर्मविनाशनाय अर्घ्यं०।

वेदनीयकर्मनाशक सिद्ध जयमाला

सोरठा

शहद मिली असिधार, सुख दुःख जीवनको करै।
कर्मवेदनीय सार, साताअसाता देत हैं ॥ १ ॥

चौपाई छन्द।

पुन्नी कनक महल मे सोवै, पापी राह परौ दुःख रोवै।
पुन्नी वांछित भोजन खावै, पापी मांगे टूक न पावै ॥ २ ॥

पुन्नी डरे जवाहर सोभै, पापी फाटे कपड़े ओढ़ै ।
पुन्नी कंचन थार कटोरा, पापी के कर प्याला कोरा ॥ ३ ॥
पुन्नी गज पर चढ़ चालन्ता, पापी नंगे पग धावन्ता ।
पुन्नी के शिर छत्र फिरावै, पापी शीश बोझ ले धावै ॥ ४ ॥
पुन्नी हुकम जगत पर होई, पापी बात सुनै नहिं कोई ।
पुन्नी भवन द्रव्य नित आवै, पापी धन देखन नहिं पावै ॥ ५ ॥
पुन्नी को सब देखन आवै, पापी जन को सुर न लगावै ।
पुन्नी कबहू रोग न पावै, पापी को नित व्याधि सतावै ॥ ६ ॥
पुन्नी शीलरूप गुनआगे, पापी लहै न कानी कागे ।
पुन्नी के सुत करै कमाई, पापी नरकै है दुःखदाई ॥ ७ ॥
पुन्नी वस्तु गई फिर आवै, पापी के कर से गिर जावै ।
पुन्नी षट ऋतु के सुख भोगै, पापी महादुःखी अति रोवै ॥ ८ ॥

सोरठा।

पुण्य पाप दोऊ डार, कर्मवेदनी वृक्ष के ।
सिद्ध जलावन हार, द्यानत निरबाधा करौं ॥

ॐ ह्रीं श्री [illegible] अर्घ्यं ।

मोहनीयकर्मनाशक सिद्ध जयमाला ।

दोहा

ज्यों मदिराके पान तैं, सुधबुध सबै भुलाय ।
त्यों मोहनी-कर्म उदै, जीव गहिल हो जाय ॥

चौपाई ।

दरशन मोह तीन परकार, नाश करै सम्यक् गुण सार ।
मिथ्या जुरै उदै जब आवै, धर्म मधुर रस भूल न आवै ॥ २ ॥
मिश्र भाव निरगिनि समख्यातं, एक मर्म सम्यकमिथ्यातं ।
सम्यक् प्रकृति मिथ्यात सतावै, चल मल शिथिल दोष उपजावै ॥३॥
चारित्र मोह पचीस प्रकार, जो मेटै सम्यक् आचार ।

क्रोध मान माया अर लोभ, चारों चार-चार विधि शोभं ॥ ४ ॥
अनन्तानुबन्धी चौकड़िया, जिनने निरमल समकित हरिया।
अप्रत्याख्यानी चऊ भाखै, श्रावक व्रत विधि वश कर राखै ॥ ५ ॥
प्रत्याख्यान चौकड़ी मोई, जाके उदय न मुनि व्रत होई।
सो संज्वलन चतुष्क बखानी, यथाख्यात पावै नहीं प्राणी ॥ ६ ॥
हास्य उदै तैं हांसी ठाने, रतिके उदै जीव रति मानै।
अरति उदय तैं कछु न सुहावै, शोक उदै सेती विललावै ॥ ७ ॥
भयतैं डरे जुगुप्स गिलान, पुरुष भाव तिन पावक जानं।
गोठे की पावक समनारी, पंढापा जावे अगनि निहारी ॥ ८ ॥

दोहा

अट्ठाईसों मोह की, तुम नाशक भगवान।
अटल शुद्ध अवगाहना, नमों सिद्ध गुणखान ॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोहनीयकर्मविनाशनाय अर्घ्य०।

आयुकर्मनाशक सिद्ध जयमाला।

सोरठा

जैसे नरको पांव. दियो काठमें थिर रहै।
तैसे आयु स्वभाव, जियको चहुँगति थिति करै ॥

चौपाई।

नरक आयुतै नरक लहे हैं, तेतिस सागर तहां रहे हैं।
गाढ़ा करि आरेसों चीरे, कोल्हू मांहि डारकै पेरें ॥ २ ॥
वैतरणी दुर्गन्ध नहावे, पुतरी अगनी मांहि गलावै।
सूली देहिं कड़ाई तावे, शाल्मली तल मांहि सुवावैं ॥ ३ ॥
शीश तलै कर गिरिसैं डारे, नीचे वज्र मुष्टि सौं मारे।
भूख प्यास तप शीत सहारी, पञ्च प्रकार सहै दुःख भारी ॥ ४ ॥
पशु की आयु करै पशु काया, विना विवेक सदा विललाया।
जन्म बैर ज़िय तै दुःख पावैं, बाधमारकी कौन चलावैं ॥ ५ ॥

मानुष आयु धरै नर देही, इष्ट वियोग लहै दुःख तेही।
धन संपतिको सदा भिखारी, प्रभुता मांहि पचै ससारी ॥ ६ ॥
देव आयुतैं देव कहाया, परको विभव देख खुनसाया।
मरण चिह्न लख अति दुःख दानी, इम चारौं गतिभटकै प्राणी ॥

दोहा

द्यानत चारौं आयुके, तुम नाशक भगवान।
अटल शुद्ध अवगाहना, नमों सिद्ध गुणखान ॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो आयुकर्मविनाशनाय अर्घ्यं०।

नामकर्मनाशक सिद्ध जयमाला।

दोहा

चित्रकार जैसे लिखे, नाना चित्र अनूप।
नाम-कर्म तैसे करै, चेतन के बहु रूप ॥ १ ॥

चौपाई।

गतिके उदय चहूं गति जानी, जाति पंचइन्द्री सब प्राणी।
आनुपूरवी गति ले जाई, दो विहाय दो चाल बताई ॥ २ ॥
बन्धन पञ्च पञ्च विधि काया, तन बन्धान पञ्च दृढ़ लाया।
बन्धं सघन सो पञ्च संघातं, अंग उपंग तीन ही गातं ॥३॥
वरण पंच तन रंग बखानै, पांचौं ही तन के रस जानै।
गन्ध दोय तन मांहि कहे हैं, आठ फरस तन मांहि लहे हैं ॥४॥
षट संठान देह आकारं, हाड छह भेद संहनन धारं।
उड़ै पड़ै न अगुरु लघु काया, स्वास उस्वास नाक सुर गाया ॥५॥
निज दुःख दे उपघात शरीरं, तन पर घात करै पर पीरं।
चन्द्र विम्ब जिय देह उद्योतं, भानुविंब जिय आतप होत ॥६॥
थावर उदै सुथिर न चलै है, त्रस के उदैतैं चलै हलै है।
परयापत पूरी जब होई, खिरै बीच अपरयापति सोई ॥७॥
थिरके उदै सुथिर तन गाया, अथिर उदैतैं कंपै काया।
तन प्रत्येक जिय एक भनन्तं, साधारण तन जीव अनन्त ॥८॥

मारै मरे रहे आधारं, दीसै अर लोकनि मे मारं।
वादर जीया चहूं पसरंतं, सूक्ष्म जीव इन तें विपरीत ॥९॥
शुभ के उदै होय शुभ काया, अशुभ उदै तन अशुभ बताया।
शुभग उदै भाग का पूरा, अशुभ उदै अभाग हजूरा ॥१०॥
सुस्वर उदय कोकिला वानी, दुस्वर गर्दभ-ध्वनि सम जानी।
आदर तैं बहु आदर पावै, उदय अनादर तैं न सुहावै ॥११॥
जसके उदय सुजस जग मांही, अजस उदय अपजस जग मांही।
थान प्रमान दुविधि निर्मानं, तीर्थङ्कर है पुण्य प्रधानं ॥१२॥

दोहा

व्यालीस और तिरानवै, तथा एकसौ तीन।
द्यानत सो प्रकृति हरी, सिद्ध अमूरति लीन ॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नामकर्मविनाशनाय अर्घ्यं०।

गोत्रकर्मनाशक सिद्ध जयमाला।

दोहा

ज्यों कुम्हार छोटो बड़ौ, भांड़ौ घड़ा जनेय।
गोत्र-कर्म त्यों जीवको, ऊँच नीच कुल देय ॥१॥

चौपाई।

नीच गोत्र पशु नर्क निहारं, ऊंच गोत्र सब देव कुमारं।
मनुष मांहि दो गोत्र बखाने, नीच गोत्र सब शूद्र प्रवाने ॥ २ ॥
ब्राह्मण क्षत्री वैश्य मझारं, मद्य मांस जो करे अहारं।
जो पंचनितैं बाहिर होई, नीच गोत्र कहिये नर सोई ॥ ३ ॥
परगुणको औगुण करि भाखै, निज औगुणको गुण अभिलाषै।
परको निन्दै आप बड़ाई, बांधै नीच गोत्र दु.खदाई ॥ ४ ॥
नीच गोत्रको मुनिव्रत नाहीं, क्योंकर जाय मुकतिके माहीं।
नीच काज तज ऊंच सम्हारै, दया धरम कर आतम तारै ॥ ५ ॥

सोरठा ऊँच नीच दो गोत्र, नाश अगुरुलघु गुण भये।
द्यानत आतम जोत, सिद्ध शुद्ध वंदौं सदा ॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो गोत्रकर्मविनाशनाय अर्घ्यं०।

अन्तरायकर्मनाशक सिद्ध जयमाला ।

दोहा

भूप दिलावै दर्व को, भण्डारी दे नाहिं ।
हीन देय नहिं सम्पदा, अन्तराय जगमाहिं ॥१॥

चौपाई ।

छती वस्तु दे सकै न प्राणी, दान अन्तराय विधि जानी ।
उद्यम करै न होय कमाई, लाभ अन्तराय दुःखदाई ॥२॥
भोजन त्यार खान नहिं पावै, भोग अन्तराय जब आवै ।
पट भूषण हैं पहिरत नाहीं, उपभोग अन्तराय की छाहीं ॥३॥
तन वर पोखै बल नहिं होई, वीर्य अन्तराय है सोई ।
इह विधि अन्तराय विवहारी, निश्चय बात सुनो मति धारी ॥४॥
मिथ्याभाव त्याग सो दानं, समताभाव लाभ परधानं ।
आतमीक सुख भोग सजोगं, अनुभौ अभ्यास सदा उपभोग ॥५॥
ध्यान ठानकै कर्म विनासै, सो वीरज निज भाव प्रकासै ।
पांचों भाव जहाँ नहिं लहिये, निश्चै अन्तराय सो कहिये ॥६॥

दोहा

अन्तराय पांचों हते, प्रगट्यो सुबल अनन्त ।
द्यानत सिद्ध नमों सदा, ज्यों पाऊँ भव अन्त ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अन्तरायकर्मविनाशनाय अर्घ्यं० ।

आठ कर्मनाशक सिद्ध जयमाला ।

सोरठा

आठ करम को नाश, आठों गुण परगट भये ।
सिद्ध सदा सुखरास, करौं आरती भावसौं ॥१॥

चौपाई ।

ज्ञानावरणी कर्म विनाशै, लोकालोक ज्ञान परकाशै ।
दरशन आवरणी छय कीनी, दुःख सुगुण परजय लखि लीनी ॥२॥

कर्म वेदनी नाश गया है, निराबाधा गुण प्रगट भया है।
मोह कर्म नाशा दुःखकारी, निर्मल छायक दरशन धारी ॥३॥
आयु-कर्म थिति सर्व विनाशी, अवगाह गुण अटल प्रकाशी।
नाम-कर्म जीता जग नामी, चेतन जोत अमूरति स्वामी ॥४॥
गोत्र-कर्म घाता वरवीरं, सिद्ध अगुरु लघु गुण गम्भीरं।
अन्तराय दुःखदाय हरा है, बल अनन्त परकाश करा है ॥५॥
जा पद मांहि सर्वपद छाजै, ज्यों दर्पण प्रतिबिंब विराजै।
राग न दोष मोह नहि भावै, अजर अमर अव अचल सुहावै ॥६॥
जाके गुण सुर नर सब गावे, जाको जोगीश्वर नित ध्यावे।
जाकी भगति मुकति पद पावै, सो शोभा किह भांति बतावै ॥७॥
ये गुण आठ थूल इम भाखे, गुण अनन्त निज मनमें राखे।
सिद्धनकी थुतिको कर जाने, या मिस सो शुभ नाम बखाने ॥८॥

सोरठा।

बहु विधि नाम बखान, परमेश्वर सबही भजें।
ज्यों का त्यों सरधान, द्यानत सेवैं ते बड़े ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय अर्घ्यं०।

ज्ञान

■ आंख वही है जिसमें देखने की शक्ति हो अन्यथा उसका होना न होने के तुल्य है। इसी तरह ज्ञान वही है जो 'स्व' और 'पर' का विवक करा देवे, अन्यथा उस ज्ञान का कोई मूल्य नहीं।

—'वर्णी वाणी' से

तीस चौवीसी पूजा

अडिल्ल

पाँच भरत शुभ क्षेत्र, पांच ऐरावते ।
आगत नागत वर्त्तमान जिन शाश्वते ॥
सो चौवीसी तीस जजों मन लायके ।
आह्वानन विधि करूँ वार त्रय गायके ॥

ॐ ह्रीं [illegible]
ॐ ह्रीं [illegible]
ॐ ह्रीं [illegible]

अथाष्टक, रेखता ।

नीर दधि क्षीर सम लायो, कनकके भृङ्ग भरवायो ।
जरामृतु रोग सन्तायो, अबै तुम चर्ण ढिग आयो ॥
दीप ढाई सरस राजै, क्षेत्र दश ता विषैं छाजै ।
सात शत बीस जिन राजै, पूजते पाप सब भाजै ॥

ॐ ह्रीं [illegible] क्षेत्रके सातसौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०

सुरभि जुत चन्दनं लायो, संग करपूर घसवायो ।
धार तुम चरण ढरवायो, भवोदधि ताप नसवायो ॥ द्वीप०

ॐ ह्रीं [illegible] क्षेत्रके सातसौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं०।

चन्द सम तन्दुलं सारं, किरण मुक्ता जु उनहारं ।
पुञ्ज तुम चरण ढिग धारं, अखै पद काजके कारं ॥ द्वीप०

ॐ ह्रीं [illegible] क्षेत्रके सातसौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं० ।

पुष्प शुभ गन्ध जुत सोहे, सुगन्धित तास मन मोहे ।
जजत तुम मदन छय होवे, मुक्तिपुर पलकमे जोवे ॥ द्वीप०

ॐ ह्रीं [illegible] क्षेत्रके सातसौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं० ।

सरस व्यञ्जन लिया ताजा, तुरत बनवाइया खाजा ।
चरण तुम जजों महाराजा, क्षुधादु:ख पलकम भाजा ॥ द्वीप०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहक्षेत्रके सातसौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ।

दीप तम नाश कारी है, सरस शुभ ज्योतिधारी है ।
होय दशदिश उजारी है, धूम्र मिस पाप जारी है ॥ द्वीप०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहक्षेत्रके सातसौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं० ।

सरस शुभ धूप दश अङ्गी, जराऊँ अग्नि के सङ्गी ।
कर्म की सेन चतुरङ्गी, चरण तुम पूजते अङ्गी ॥ द्वीप०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहक्षेत्रके सातसौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं० ।

मिष्ट उत्कृष्ट फल ल्यायो, अष्ट अरि दुष्ट नसवायो ।
श्रीजिन भेंट करवायो, कार्य मनवांछित पायो ॥ द्वीप०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहक्षेत्रके सातसौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं० ।

द्रव्य आठों जु लीना है, अर्घ कर में नवीना है ।
पूजते पाप छीना है, 'भानु'मल जोड़ि कीना है ॥ द्वीप०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिविदेहक्षेत्रके सातसौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं० ।

प्रत्येक अर्घ (अडिल्ल छन्द)

आदि सुदर्शन मेरु तनी दक्षिण दिशा ।
भरत क्षेत्र सुखदाय सरस सुन्दर बसा ॥
तिहँ चौबीसी तीन तने जिनरायजी ।
बहत्तरि जिन सर्वज्ञ नमों शिरनायजी ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु के दक्षिणदिशा के भरतक्षेत्रसम्बन्धि तीनचौबीसी के बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

ताहि मेरु उत्तर ऐरावत सोहनो ।
आगत नागत वर्त्तमान मनमोहनो ॥
तिहें चौवीसी तीन तने जिनरायजी ।
बहत्तरि जिन सर्वज्ञ नमों शिरनायजी ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं [illegible] ऐरावतक्षेत्रसम्बन्धि तीनचौबीसी के बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं [illegible] ॥ २ ॥

कुसुमलता छन्द ।

खण्ड धातुकी विजय मेरुके दक्षिण दिशा भरत शुभ जान ।
तहां चौवीसी तीन विराजें आगत नागत अरु वर्त्तमान ॥
तिनके चरण कमलको निशिदिन अर्घ चढ़ाय करूं उर ध्यान ।
इस संसार भ्रमणतें तारो अहो जिनेश्वर करुणावान ॥

ॐ ह्रीं [illegible] पूर्वदिशा [illegible] दक्षिणदिश [illegible] तीनचौबीसी [illegible] जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

इसी द्वीपकी प्रथम शिखरके उत्तर ऐरावत जो महान ।
आगत नागत वर्त्तमान जिन बहत्तरि सदा शास्वते जान ॥
तिनके चरणकमलको निशिदिन अर्घ चढ़ाय करूं उर ध्यान ।
इस संसार भ्रमणतें तारो अहो जिनेश्वर करुणावान ॥

ॐ ह्रीं [illegible] पूर्वदिश [illegible] उत्तरदिश ऐरावतक्षेत्र सम्बन्धी तीनचौबीसी [illegible] जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

चौपाई छन्द

खण्ड धातु गिरि अचल जु मेरु, दक्षिण तास भरत बहु घेरु ।
तामें चौवीसी त्रय जान, आगत नागत अरु वर्त्तमान ॥

ॐ ह्रीं [illegible] पश्चिमदिश अचलमेरु [illegible] दक्षिण दिश भरतक्षेत्र सम्बन्धी तीनचौबीसी [illegible] जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

अचल मेरु उत्तर दिश जाय, ऐरावत शुभ क्षेत्र बताय ।
तामें चौवीसी त्रय जान, आगत नागत अरु वर्त्तमान ॥

ॐ ह्रीं धातुकीखण्ड की पश्चिमदिश अचलमेरु के उत्तरदिश ऐरावतक्षेत्र सम्बन्धी तीनचोवीसी के बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

सुन्दरी छन्द ।

द्वीप पुष्करकी पूरब दिशा, मन्दिर मेरुकी दक्षिण भरत-सा ।
ता विषै चौबीसी तीन जू, अर्घ लेय जजों परवीन जू ॥

ॐ ह्रीं पुष्करद्वीप की पूर्वदिश मन्दिरमेरु की दक्षिणदिश भरतक्षेत्र सम्बन्धी तीसचौबीसी के बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

गिरि सुमन्दिर उत्तर जानियो, क्षेत्र ऐरावत सुबखानियो ।
ता विषै चौबीसी तीन जू, अर्घ लेय पूजों परवीन जू ॥

ॐ ह्रीं पुष्करद्वीप की पूर्वदिश मन्दिरमेरु की उत्तरदिश ऐरावतक्षेत्र सम्बन्धी तीनचौबीसी के बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

पद्धडी छन्द ।

पश्चिम पुष्कर गिरि विद्युतमाल, ता दक्षिण भरत बन्यो रसाल
तामें चौवीसी है जु तीन, वसु द्रव्य लेय पूजों प्रवीन ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्धद्वीप की पश्चिमदिश विद्युन्मालीमेरु के दक्षिणदिश भरतक्षेत्र सम्बवी तीनचौबीसी के बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

याही गिरिके उत्तर जु ओर, ऐरावत क्षेत्र तनी सुठौर ।
तामें चौबीसी है जु तीन, वसु द्रव्य लेय पूजों प्रवीन ॥

ॐ ह्रीं पुष्करार्द्धद्वीप की पश्चिमदिश विद्युन्मालीमेरु के उत्तरदिश ऐरावतक्षेत्र सम्बन्धी तीनचौबीसी के बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

कुण्डलिया ।

द्वीप अढाई के विषै, पांच मेरु हितदाय ।
दक्षिण उत्तर तासुके, भरत ऐरावत भाय ॥
भरत ऐरावत भाय एक क्षेत्र के मांहीं ।

चौबीसी है तीन तीन दशहीके माहीं ॥
दशों क्षेत्र के तीस, सात सौ बीस जिनेश्वर ।
अर्घ लेय करजोर जजों 'रविमल' मन शुद्ध कर ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धी दशक्षेत्र के विषै तीनचौबीसी के सातसौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं० ।

जयमाला ।

दोहा—चौबीसी तीसों तनी, पूजा परस रसाल ।
मन वच तनसों शुद्ध कर, अब वरणों जयमाल ।

पद्धडी छन्द ।

जय द्वीप अढाई में जु सार, गिरि पञ्चमेरु उन्नत अपार ।
ता गिरि पूरव पश्चिम जु ओर, शुभ क्षेत्र विदेह बसे जु ठौर ॥१॥
ता दक्षिण क्षेत्र भरत सुजान, है उत्तर ऐरावत महान ।
गिरि पांच तने दस क्षेत्र जोय, ताको वर्णन सुनि भव्य लोय ॥२॥
जो भरत तनो वरणन विशाल, तैसो ही ऐरावत रसाल ।
इक क्षेत्र बीच विजयार्द्ध एक, ता ऊपर विद्याधर अनेक ॥३॥
इक क्षेत्र तने षट् खण्ड जान, तहाँ छहों काल वरते समान ।
जो तीन काल में भोग भूमि, दश जाति कल्पतरु रहे झूमि ॥४॥
जब चौथो काल लगै जु आय, तब कर्मभूमि वरते सु आय ।
जब तीर्थंकरको जनम होय, सुर लेय जजैं गिरि मेरु सोय ॥५॥
बहु भक्ति करें सब देव आय, ता थेई थेई थेई तान लाय ।
हरि ताडव नृत्य करे अपार, सब जीवन मन आनन्दकार ॥६॥
इत्यादि भक्ति करिके सुरिन्द, निज थान जाय युत देव वृन्द ।
या विधि पाँचों कल्याण जोय, हरि भक्ति करे अति हर्ष होय ॥७॥
या काल विषै पुण्यवन्त जीव, नर जन्म धार शिव लहे अतीव ।
सब त्रसठ पुरुष प्रवीण जोय, सब याही काल विषै जु होय ॥८॥
जब पञ्चम काल करै प्रवेश, मुनि धर्म तनों नहि रहे लेश ।
विरले कोई दक्षिण देश माहिं, जिनधर्मी जन बहुते जु नाहिं ॥९॥

जब आवत है षष्ठम जु काल, दुःखमादुःख प्रगटे अति कराल।
तब मांसभक्षी नर सर्व होय, जहाँ धर्म नाम नहिं सुनै कोय ॥१०॥
याही विधि से षट्काल जोय, दश क्षेत्रन में इकसार होय।
सब क्षेत्रन में रचना समान, जिनवाणी भाख्यो सो प्रमान ॥११॥
चौबीसी है इक क्षेत्र तीन, दश क्षेत्र तीस जानों प्रवीन।
आगत नागत जिन वर्त्तमान, सब सात सतक अरु बीस जान ॥१२॥
सबही जिनराज नमों त्रिकाल, मोहि भव वारिधिते ल्यो निकाल।
यह वचन हिये में धारि लेव, मम रक्षा करो जिनेन्द्र देव ॥१३॥
"रविमल" की विनती सुनो नाथ, मैं पांय पड़ू जुग जोरि हाथ।
मन वांछित कारज करो पूर, यह अरज हिये में धरि हजूर ॥१४॥

घत्ता।

शत सात जू बीसं श्रीजगदीशं आगत नागत बरततु है।
मन वच तन पूजै शुद्ध मन हूजै सुरग मुक्ति पद धारतु है ॥

ॐ ह्रीं पाच भरत पाच ऐरावत दशक्षेत्र के विषैं तीनचौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजाकार की प्रार्थना।

दोहा—संवत् शत उगनीस के, ता ऊपर पुनि आठ।
पौष कृष्ण तृतीया गुरु, पूरण कीना पाठ ॥
अक्षर मात्रा की कसर, बुधजन शुद्ध करेहिं।
अल्प बुद्धि मो जानके, दोष नाहिं मम देहिं ॥
पढ्यो नहीं व्याकरण मैं, पिङ्गल देख्यो नाहिं।
जिनवाणी परसादतै, उमग भई घट माहिं ॥
मान बड़ाई ना चहूं, चहूं धर्म को अंग।
नितप्रति पूजा कीजियो, मनमें धार उमंग ॥

इत्याशीर्वाद।

अकृत्रिम चैत्यालय पूजा

आठ कोड़ अरु छप्पन लाख, सहस सत्यानव चतुशत भाख।
जोड़ इक्यासी जिनवर थान, तीन लोक आह्वान करान ॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्य सम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्र चतु:शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयानि । अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ: ठ: । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

क्षीरोदधिनीरं उज्ज्वल क्षीरं, छान सुचीरं भरि झारी।
अति मधुर लखावन,परम सु पावन,तृषा बुझावन गुण भारी।।
वसुकोटि सु छप्पन लाख सत्तानव,सहस चारशत इक्यासी।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुँजग भीतर,पूजत पद ले अविनाशी।।

ओं ह्रीं तीन लोक सम्बन्धी आठ कोटि छप्पन लाख सत्यानवे हजार चार सौ इक्यासी अकृत्रिम जिन चैत्यालयेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

मलयागिरि पावन,चन्दन वावन,ताप बुझावन घसि लीनो।
धरि कनक कटोरी.द्वैकरजोरी,तुमपद ओरी,चित दीनो।वसु०

ॐ ह्रीं संसारतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।

वहुभांति अनोखे, तन्दुल चोखे, लखि निरदोखे, हम लीने।
धरि कञ्चनथाली,तुम गुणमाली,पुँज विशाली कर दीने।।वसु०

ॐ ह्रीं अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ पुष्प सुजाती है, वहुभांति, अलि लिपटाती लेय वरं ।
धरि कनकरकेबी,करगह लेवी, तुम पद जुगकी भेट धरं।वसु०

ॐ ह्रीं कामबाणविध्वंसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।

खुरमा जु गिंदोडा, वरफी पेड़ा, घेवर मोदक भरि थारी।
विधिपुर्वक कीने,घृतपय भीने,खण्ड मैं लीने,सुखकारी।वसु०

ॐ ह्रीं क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्यात महातम, छाय रह्यो मम, निजभव परणति नहि सूझै।
इहकारण पाके दीप सजाकैं, थाल धराकैं, हम पूजैं ॥वसु०

ॐ ह्रीं मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगन्ध कुटाकै, धूप बनाकैं, निजकर लेकैं, धरि ज्वाला।
तसु धूम उड़ाई, दशदिश छाई, बहु महकाई, अति आला ॥वसु०

ॐ ह्रीं अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम छुहारे, श्रीफल धारे, पिस्ता प्यारे, दाखवरं।
इन आदि अनोखे, लखि निरदोखे, थाल पजोखे, भेट धरं ॥वसु०

ॐ ह्रीं मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन तंदुल कुसुमरु नेवज, दीप धूप फल थाल रचौं।
जयघोष कराऊँ, बीन बजाऊँ, अर्घ चढ़ाऊँ, खूब नचौं ॥ वसु०

ॐ ह्रीं अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ चौपाई।

अधोलोक जिन आगमसाख, सात कोड़ि अरु बहत्तरि लाख।
श्रीजिनभवन महा छवि देइ, ते सब पूजौं वसुविधि लेइ ॥

ॐ ह्रीं अधोलोकसम्बन्धी सात कोटि बहत्तर लाख श्रीअकृत्रिम जिनचैत्यालयेभ्योऽर्घं०।

मध्यलोक जिन-मन्दिर ठाठ, साढ़े चार शतक अरु आठ।
ते सब पूजौं अर्घ चढ़ाय, मनवचतन त्रयजोग मिलाय ॥

ॐ ह्रीं मध्यलोकसम्बन्धी चारसौ अठावन श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल छन्द।

ऊर्ध्वलोकके माहिं भवन जिन जानिये।
लाख चौरासी सहस सत्यानव मानिये ॥

तापै धरि तेईस जजौं शिर नायकैं।
कञ्चन थाल मझार जलादिक लायकैं॥

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोकसम्बन्धी चौरासी लाख सत्तानवै हजार तेईस श्रीजिनचैत्यालयेभ्योऽर्घं०।

वसुकोटि छप्पन लाख ऊपर, सहस सत्यानवे मानिये।
सत चारपै गिनले इक्यासी, भवन जिनवर जानिये॥
तिहुँलोक भीतर सासते, सुर असुर नर पूजा करैं।
तिन भवनको हम अर्घ लेकैं, पूजिहैं जग दुःख हरैं॥

ॐ ह्रीं त्रिलोक सम्बन्धी आठ कोटि छप्पन लाख सत्यानवै हजार चारसौ इक्यासी अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा — अब वरणों जयमालिका, सुनो भव्य चितलाय।
जिन-मन्दिर तिहुँलोकके, देहुँ सकल दरशाय॥१॥

पद्धड़ी छन्द।

जय अमल अनादि अनन्त जान, अनिमित जु अकीर्तम अचल थान।
जय अजय अखण्ड अरूप धार, षट्द्रव्य नहीं दीसै लगार॥ २॥
जय निराकार अविकार होय, राजत अनन्त परदेश सोय।
जे शुद्ध सुगुण अवगाह पाय, दश दिशा मांहि इहविधि लखाय॥३॥
यह भेद अलोकाकाश जान, ता मध्य लोक नभ तीन मान।
स्वयमेव बन्यो अविचल अनन्त, अविनाशि अनादि जु कहत सन्त॥४॥
पुरुषाआकार ठाढो निहार, कटि हाथ धारि द्वै पग पसार।
दक्षिण उत्तर दिशि सर्व ठौर, राजू जु सात भाख्यो निचोर॥५॥
जय पूर्व अपरदिश घाट बाधि, सुन कथन कहूं ताको जु साधि।
लखि श्वभ्रतलैं राजू जु सात, मधिलोक एक राजू रहात॥६॥

फिर ब्रह्मसुरग राजू जु पांच, भूसिद्ध एक राजू जु साँच।
दश चार ऊँच राजू गिनाय, षट द्रव्य लये चतुकोण पाय ॥७॥
तसु वातवलय लपटाय तीन, इह निराधार लखियो प्रवीन।
त्रसनाड़ी तामधि जान खास, चतुकोन एक राजू जु व्यास ॥८॥
राजू उतंग चौदह प्रमान, लखि स्वयं सिद्ध रचना महान।
तामध्य जीव त्रस आदि देय, निज थान पाय तिष्ठै भलेय ॥९॥
लखि अधोभाग में श्वभ्रथान, गिन सात कहे आगम प्रमान।
षट् थान माहिं नारकि बसेय, इक श्वभ्रभाग फिर तीन भेय ॥१०॥
तसु अधोभाग नारकि रहाय, पुनि ऊर्ध्वभाग द्वय थान पाय।
बस रहे भवन व्यन्तर जु देव, पुर हर्म्य छजै रचना स्वमेव ॥११॥
तिंह थान गेह जिनराज भाख, गिन सात कोटि बहत्तरि जु लाख।
ते भवन नमों मन वचन काय, गति श्वभ्रहरण हारे लखाय ॥१२॥
पुनि मध्यलोक गोला अकार, लखि दीप उदधि रचना विचार।
गिन असंख्यात भाखे जु सन्त, लखि संभुरमण सबके जु अन्त ॥१३
इक राजु व्यास में सर्व जान, मधिलोक तनों इह कथन मान।
सब मध्य द्वीपजम्बू गिनेय, त्रयदशम रुचिकवर नाम लेय ॥१४॥
इन तेरह में जिन-धाम जान, शत चार अठावन हैं प्रमान।
खग देव असुर नर आय-आय, पद पूज जांय शिर नाय-नाय ॥१५॥
जय ऊर्ध्वलोक सुर कल्पवास, तिहं थान छजै जिन-भवन खास।
जय लाख चौरासी पर लखेय, जय सहससत्यानव और ठेय ॥१६॥
जय बीस तीन पुनि जोड देय, जिन-भवन अकीर्तम जान लेय।
प्रतिभवन एक रुचना कहाय, जिनबिम्ब एक शत आठ पाय ॥१७॥

शत पञ्च धनुष उन्नत लसाय, पद्मासनयुत वर ध्यान लाय।
शिर तीनछत्र शोभित विशाल, त्रय पादपीठ मणिजडित लाल ॥१८॥
भामण्डलकी छवि कौन गाय, पुनि चँवर ढुरत चौसठि लखाय।
जय दुन्दुभिरव अद्भुत सुनाय, जय पुष्पवृष्टि गन्धोदकाय ॥१९॥
जय तरु अशोक शोभा भलेय, मंगल विभूति राजत अमेय।
घट तूप छजें मणिमाल पाय, घट धूम्र धूम दिग सर्व छाय ॥२०॥
जय केतुपंक्ति सोहै महान, गन्धर्व देव गण करत गान।
सुर जनम लेत लखि अवधि पाय, तिहं थान प्रथम पूजन कराय ॥२१॥
जिन गेह तणो वरणन अपार, हम तुच्छ वुद्धि किम लहत पार।
जय देव जिनेसुर जगत भूप, नमि 'नेम' मंगे निज देहु रूप ॥२२॥

दोहा—तीनलोक में सासते, श्रीजिन भवन विचार।
मनवचतन करि शुद्धता, पूजों अरघ उतार ॥

ॐ ह्रीं तीन लोक सम्बन्धी आठ कोडि छप्पन लाख सत्यानवै हजार चारसौ इक्यासी अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तिहुँ जग भीतर श्रीजिनमंदिर, वने अकीर्तम अति सुखदाय।
नरसुरखग कर वन्दनीक, जे तिनको भविजन पाठ कराय ॥
धनधान्यादिक संपति तिनके, पुत्रपौत्र सुख होत भलाय।
चक्री सुर खग इन्द्र होयके, करम नाश शिवपुर सुख थाय ॥

इत्याशीर्वादः।

क्षमावणी-पूजा

[कवि मल्लजी]

छप्पय अंग क्षमा जिन-धर्मतनो दृढ़-मूल वखानो।
सम्यक रतन सँभाल हृदयमें निश्चय जानो॥
तज मिथ्या विष-मूल और चित निर्मल ठानो।
जिनधर्मीसो प्रीत करो सब पातक भानो॥
रत्नत्रय गह भविक-जन जिन-आज्ञा सम चालिये।
निश्चय कर आराधना करम-रासको जालिये॥

ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रय ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रय ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट्।

नीर सुगंध सुहावनो, पदम-द्रहको लाय।
जन्म-रोग निरवारिये, सम्यक्रतन लहाय॥
क्षमा गहो उर जीवड़ा, जिनवर-वचन गहाय।

ॐ ह्रीं निःशंकिताङ्गाय निःकांक्षिताङ्गाय निर्विचिकित्सतांगाय निर्मूढतांगाय उपगूहनाङ्गाय सुस्थितीकरणाङ्गाय वात्सल्यांगाय प्रभावनाङ्गाय जन्ममृत्युविनाशनाय सम्यग्दर्शनाय जलं

ॐ ह्रीं व्यंजनव्यजिताय अर्थसमग्राय तदुभयसमग्राय कालाध्ययनाय उपाध्यानोपहिताय विनयलब्धिप्रभावनाय गुरुवाधाह्नवाय बहुमानोन्मानाय अष्टाङ्गसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं अहिंसामहाव्रताय सत्यमहाव्रताय अचौर्यमहाव्रताय ब्रह्मचर्यमहाव्रताय अपरिग्रहमहाव्रताय मनोगुप्तये वचनगुप्तये कायगुप्तये ईर्यासमितये भाषासमितये ऐषणासमितये आदाननिक्षेपणसमितये प्रतिष्ठापनसमितये त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

केसर चंदन लीजिये, संग कपूर घसाय।
अलि पंकति आवत घनी, वास सुगंध सुहाय॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदश-
विधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय भवातापविनाशनाय चन्दनं

शालि अखंडित लीजिये, कंचन-थाल भराय।
जिनपद पूजों भावसों, अक्षत पदको पाय ॥ क्षमा

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदश-
विधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्

पारिजात अरु केतकी, पहुप सुगंध गुलाब।
श्रीजिन-चरण-सरोजकूं, पूज हर्ष चित-चाव ॥ क्षमा

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदश-
विधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं

शक्कर घृत सुरभीतना, व्यंजन षट्रस स्वाद।
जिनके निकट चढायकर, हिरदे धरि आह्लाद ॥ क्षमा

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदश-
विधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं

हाटकमय दीपक रचो, बाति कपूर सुधार।
शोधित घृत कर पूजिये, मोह-तिमिर निरवार ॥ क्षमा

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदश-
विधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं

कृष्णागर करपूर हो, अथवा दशविधि जान।
जिन-चरणन ढिग खेइये, अष्ट-कर्मकी हान ॥ क्षमा

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदश-
विधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं

केला अंब अनार ही, नारिकेल ले दाख।
अग्र धरो जिनपदतने, मोक्ष होय जिन भाख ॥ क्षमा

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदश-
विधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं

जल फल आदि मिलायके, अरघ करो हरषाय।
दुःख-जलांजलि दीजिये, श्रीजिन होय सहाय ॥ क्षमा

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय, अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय, त्रयोदश-
विधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं

[illegible]

[illegible]
[illegible]

[illegible]

[illegible]

परिग्रह देख न मूर्छित होई, पंच महाव्रत-धारक सोई।
महाव्रत ये पांचों खरे हैं, सब तीर्थंकर इनको करे हैं॥
मनमें विकल्प रंच न होई, मनोगुप्ति मुनि कहिये सोई।
वचन अलीक रंच नहिं भाखें, वचन गुप्ति सोमुनिवर राखें॥
कायोत्सर्ग परीषह सहि हैं, ता मुनि काय-गुप्ति जिन कहि हैं।
पंच समिति अब सुनिये भाई, अर्थ सहित भाखों जिनराई॥
हाथ चार जब भूमि निहारैं, तब मुनि ईर्य्यापथ पद धारैं।
मिष्टवचन मुख बोलें सोई, भाषा-समिति तास मुनि होई॥
भोजन छयालिस दूषण टारैं, सो मुनि एषण शुद्ध विचारैं।
देखकर पोथी ले अरु धर हैं, सो आदान-निक्षेपण वर हैं॥
मल-मूत्र एकांत जु डारैं, परतिष्ठापन समिति संभारैं।
यह सब अंग उनतीस कहे हैं, जिन भाखे गणधरने गहे हैं॥
आठ-आठ-तेरहविधि जानों, दर्शन-ज्ञान-चरित्र सु ठानों।
तातैं शिवपुर पहुँचो जाई, रत्नत्रयकी यह विधि भाई॥
रत्नत्रय पूरण जब होई, क्षमा क्षमा करियो सब कोई।
चैत माघ भादों त्रय बारा, क्षमा क्षमा हम उरमें धारा॥

दोहा यह क्षमावणी आरती, पढ़ै सुनै जो कोय।
कहे "मल्ल" सरधा करो, मुक्ति-श्री-फल होय॥२२॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदश विधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घं।

सोरठा दोष न गहियो कोय, गुण गह पढ़िये भावसौं।
भूल चूक जो होय, अर्थ विचारि जु शोधियो॥

[इत्याशीर्वादः । परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि]

सरस्वती पूजा

जनम जरा मृत्यु छय करै, हरै कुनय जड़रीति।
भवसागरसों ले तिरै, पूजै जिन वच प्रीति॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ ठः।
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि! अत्र मम सन्निहितानि भव वषट्।

छीरोदधिगंगा, विमल तरंगा, सलिल अभंगा सुखसंगा।
भरि कञ्चन झारी, धार निकारी, तृषा निवारी हितचंगा॥
तीर्थंकरकी धुनि, गणधरने सुनि, अंग रचे चुनि, ज्ञानमई।
सो जिनवर वानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै जन्ममृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

करपूर मंगाया, चंदन आया, केशर लाया, रंग भरी।
शारदपद वंदों, मन अभिनंदों, पापनिकंदों, दाह हरी॥ती०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै संसारतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

सुखदास कमोदं, धारकमोदं, अति अनुमोदं, चंदसमं।
बहुभक्ति बढ़ाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मात ममं॥ती

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥३॥

बहुफूल सुवासं, विमल प्रकाशं, आनंदरासं, लाय धरे।
मम काम मिटायो, शीलबढ़ायो, सुखउपजायो दोष हरे॥ती

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥४॥

पकवान बनाया, बहुघृत लाया, सब विधि भाया, मिष्ट महा।
पूजूं थुति गाऊँ, प्रीति बढ़ाऊँ, क्षुधा नशाऊँ, हर्ष लहा॥ती०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा॥५॥

करि दीपक जोतं, तमछय होतं, ज्योति उदोतं, तुमहिं चढ़ै।
तुम हो परकाशक, भरमविनाशक, हमघटभासक, ज्ञानवढ़ै। ती

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

शुभगंध दशोंकर, पावकमैं धर, धूप मनोहर, खेवत हैं।
सब पाप जलावैं, पुण्य कमावैं, दास कहावैं, सेवत हैं॥ ती

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अष्टकर्मविध्वंसनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

बादाम छुहारी, लोंग सुपारी, श्रीफल भारी, ल्यावत हैं।
मनवांछित दाता, मेट असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं॥ ती

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

नयननसुखकारी, मृदुगुणधारी, उज्ज्वलभारी, मोल धरै।
शुभगंधसम्हारा, वसन निहारा, तुम तटधारा, ज्ञान करै॥ ती

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जलचंदन अच्छत, फूल चरू चत, दीप धूप अति फल लावैं।
पूजाको ठानत, जो तुम जानत, सो नर द्यानत, सुख पावैं॥ ती

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला, सोरठा।

ओंकार धुनिसार, द्वादशांगवाणी विमल।
नमों भक्ति उर धार, ज्ञान करै जड़ता हरै॥

पहलो आचारांग बखानो, पद अष्टादश सहस प्रमानो।
दूजो सूत्रकृतं अभिलाषं, पद छत्तीस सहस गुरु भाषं॥१॥
तीजो ठाना अङ्ग सु जानं, सहस बियालिस पद सरधानं।
चौथो समवायांग निहारं, चौसठ सहस लाख इक धारं॥२॥
पञ्चम व्याख्या प्रज्ञपति दरसं, दोय लाख अट्ठाइस सहसं।

छट्ठो ज्ञातृकथा विसतारं, पांच लाख छप्पन हज्जारं ॥ ३ ॥
सप्तम उपासकाध्यायनगं, सत्तर सहस ग्यारलख भंगं।
अष्टम अन्तकृतं दश ईसं, सहस अट्ठाइस लाख तेईसं ॥ ४ ॥
नवम अनुत्तरदश सुविशालं, लाख बानवै सहस चवालं।
दशम प्रश्न व्याकरण विचारं, लाख तिरानवै सोल हजारं ॥ ५ ॥
ग्यारम सूत्रविपाक सु भाखं, एक कोड़ चौरासी लाखं।
चार कोडि अरु पन्द्रह लाखं, दो हजार सब पद गुरु शाखं ॥ ६ ॥
द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं, इकसौ आठ कोडिपनवेदं।
अडसठ लाख सहस छप्पन हैं, सहित पञ्चपद मिथ्याहन हैं ॥ ७ ॥
इकसौ बारह कोड़ि बखानो, लाख तिरासी ऊपर जानो।
ठावन सहस पञ्च अधिकाने, द्वादश अङ्ग सर्व पद माने ॥ ८ ॥
कोडि इकावन आठ हि लाखं, सहस चुरासी छह सौ भाखं।
साढ़े इकीस शिलोक बताये, एक एक पद के ये गाये ॥ ९ ॥

दोहा

जा बानी के ज्ञानसैं, सूझै लोक अलोक।
'द्यानत' जग जयवन्त हो, सदा देत हों धोक॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै महार्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

— ॰ —

सप्तर्षि-पूजा

[कविवर मनरंगलालजी]

छप्पय — प्रथम नाम श्रीमन्व दुतिय स्वरमन्व ऋषीश्वर ।
तीसर मुनि श्रीनिचय सर्वसुंदर चौथो वर ॥
पंचम श्रीजयवान विनयलालस षष्ठम भनि ।
सप्तम जयमित्राख्य सर्व चारित्र-धाम गनि ॥
ये सातों चारण-ऋद्धि-धर, करूं तास पद थापना ।
मैं पूजूं मन वचन काय करि, जो सुख चाहूं आपना ॥

ॐ ह्रीं चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वरा ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् ।
ॐ ह्रीं चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वरा ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ ठ ।
ॐ ह्रीं चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वरा ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

शुभ-तीर्थ-उद्भव-जल अनूपम, मिष्ट शीतल लायकैं ।
भव-तृषा-कंद-निकंद-कारण, शुद्ध-घट भरवायकै ॥
मन्वादि चारण-ऋद्धि-धारक, मुनिनकी पूजा करूं ।
ता करें पातक हरें सारे, सकल आनंद विस्तरूं ॥

ॐ ह्रीं श्रीचारणर्द्धिधरमन्व-स्वरमन्व-निचय-सर्वसुन्दर-जयवान-विनयलालस-जयमित्रर्षिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखंड कदलीनंद केशर, मंद मंद घिसायकै ।
तसु गंध प्रसरित दिग-दिगंतर, भर कटोरी लायकैं ॥मन्वादि०

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अति धवल अक्षत खंड-वर्जित, मिष्ट राजन-भोगके ।
कलधौत-थारा भरत सुंदर, चुनित शुभ उपयोगके ॥मन्वादि०

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

बहु-वर्ण सुवरण-सुमन आछे, अमल कमल गुलाबके ।
केतकी चंपा चारु मरुआ, चुने निज-कर चावके ॥ मन्वादि

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

पकवान नानाभांति चातुर, रचित शुद्ध नये नये ।
सदमिष्ट लाडू आदि भर बहु, पुरटके थारा लये ॥ मन्वादि०

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कलधौत-दीपक जड़ित नाना, भरित गोघृत-सारसों।
अति ज्वलित जगमग-ज्योति जाकी, तिमिरनाशनहारसों ॥म०

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दिक्-चक्र गंधित होत जाकर, धूप दश-अंगी कही।
सो लाय मन-वच-कायशुद्ध, लगाय कर खेऊं सही ॥मन्वादि०

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर दाख खारक अमित प्यारे, मिष्ट पुष्ट चुनायकें।
द्रावड़ी दाडिम चारु पुंगी, थाल भर भर लायकें ॥ मन्वादि०

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सु लावना।
फल ललित आठों द्रव्य-मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

वंदूं ऋषिराजा धर्म-जहाजा निज-पर-काजा करत भले।
करुणाके धारी गगन-विहारी दुख-अपहारी भरम दले ॥
काटत जम-फंदा भवि-जन-वृंदा करत अनंदा चरणनमें।
जो पूजैं ध्यावैं मंगल गावैं फेर न आवैं भव-वनमें ॥१॥

छंद पद्धरी

जय श्रीमनु मुनिराजा महंत, त्रस-थावरकी रक्षा करंत।
जय मिथ्या-तम-नाशक पतंग, करुणा-रस-पूरित अंग अंग।
जय श्रीस्वरमनु अकलंकरूप, पद-सेव करत नित अमर-भूप।
जय पंच अक्ष जीते महान, तप तपत देह कंचन-समान।
जय निचय सप्त तत्त्वार्थ भास, तप-रमातनो तनमें प्रकाश।
जय विषय-रोध सम्बोध भान, परणतिके नाशन अचल ध्यान।
जय जयहिं सर्वसुन्दर दयाल, लखि इन्द्रजालवत जगत-जाल।
जय तृष्णाहारी रमण राम, निज परणतिमें पायो विराम।
जय आनंदघन कल्याणरूप, कल्याण करत सबको अनूप।
जय मद-नाशन जयवान देव, निरमद विरचित सब करत सेव।
जय जयहिं विनयलालस अमान, सब शत्रु मित्र जानत समान।
जय कृशित-काय तपके प्रभाव, छवि-छटा उड़ति आनंद-दाय।

जयमित्र सकल जगके सुमित्र, अनगिनत अधम कीने पवित्र।
जय चंद्र-वदन राजीव-नैन, कबहूं विकथा बोलत न बैन।
जय सातौ मुनिवर एक संग, नित गगन-गमन करते अभंग।
जय आये मथुरापुर मँझार, तँह मरी रोगको अति प्रचार।
जय जय तिन चरणनि को प्रसाद, सब मरी देवकृत भई वाद।
जय लोक करे निर्भय समस्त, हम नमत सदा नित जोड़ हस्त।
जय ग्रीषम-ऋतु परवत मँझार, नित करत अतापन योग सार।
जय तृषा-परीषह करत जेर, कहुं रंच चलत नहिं मन-सुमेर।
जय मूल अठाइस गुणन धार, तप उग्र तपत आनंदकार।
जय वर्षा-ऋतुमें वृक्ष-तीर, तहँ अति शीतल झेलत समीर।
जय शीत-काल चौपट मँझार, कै नदी-सरोवर-तट विचार।
जय निवसत ध्यानारूढ़ होय, रंचक नहिं मटकत रोम कोय।
जय मृतकासन वज्रासनीय, गोदूहन इत्यादिक गनीय।
जय आसन नानाभांति धार, उपसर्ग सहत ममता निवार।
जय जपत तिहारो नाम कोय, लख पुत्र पौत्र कुल-वृद्धि होय।
जय भरे लक्ष अतिशय भँडार, दारिद्रतनो दुख होय छार।
जय चोर अग्नि डाकिन पिशाच, अरु ईति भीति सब नसत सांच।
जय तुम सुमरत सुख लहत लोक, सुर असुर नवत पद देत धोक।

छन्द रोला

ये सातों मुनिराज, महातप लछमी धारी।
परम पूज्य पद धरैं, सकल जगके हितकारी॥
जो मन वच तन शुद्ध, होय सेवै औ ध्यावै।
सो जन 'मनरँगलाल', अष्ट ऋद्धिनको पावै॥

दोहा

नमन करत चरनन परत, अहो गरीबनिवाज।
पंच परावर्तननितैं, निरवारो ऋषिराज॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

अनन्तव्रत पूजा

अडिल्ल छन्द ।

श्रीजिनराज चतुर्दश जग जयकारजी ।
कर्म नाशि भवतार सु शिवसुख धारजी ॥
सवौषट् ठः ठः सुवषट् यह उच्चरूँ ।
आह्वाननं स्थापन मम सन्निधि करूँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रा ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रा ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रा ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

गीता छन्द ।

गंगादि तीर्थको सु जल भर कनकमय भृङ्गार में ।
चउदश जिनेश्वर चरणयुगपरि धार डारौं सार में ॥
श्रीवृषभ आदि अनन्त जिन पर्यंत पूजों ध्यायके ।
करि अनन्तव्रत तप कर्म हनिके लहो शिव सुख जायके ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं० ।

चन्दन अगर घनसार आदि सुगन्ध द्रव्य घसायके ।
सहज हि सुगन्ध जिनेन्द्रके पद चर्च हों सुखदायके ॥ श्रीवृषभ०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं० ।

तन्दुल अखण्डित अति सुगन्ध सुमिष्ट लेके कर धरों ।
राजत तुम चरणन निकट शिरनाय पूजों शुभ वरो ॥ श्रीवृषभ०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं० ।

चम्पा चमेली केतकी पुनि मोगरो शुभ लायके ।
केवड़ो कमल गुलाब गैंदा जुही माल बनायके ॥ श्रीवृषभ०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं० ।

लाडू कलाकन्द सेव घेवर और मोतीचूर ले।
गूंजा सु पेड़ा क्षीर व्यञ्जन थाल में भरपूर ले ॥ श्रीवृष०
ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य०।
ले रत्नजड़ित सु आरती तामांहि दीप संजोयके।
जिनराज तुमपद आरतीकर तिमिर मिथ्या खोयके॥ श्रीवृष०
ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप०।
चन्दन अगरतर सिलारस कपूरकी करि धूपको।
ता गंधतें मधु चकित सो खेऊं निकट जिन भूपको॥ श्रीवृषभ०
ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूप०।
नारंगि केला दाख दाड़िम बीजपूर मंगायके।
पुनि आम्र और बदाम खारिक कनक थार भरायके॥ श्रीवृष०
ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल०।
जल सुचन्दन अखत पुष्प सुगन्ध बहुविधि लायके।
नैवेद्य दीप सुधूप फल इनको जु अर्घ बनायके॥ श्रीवृषभ०
ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तयेऽर्घ्यं०।

जयमाला पद्धड़ी छन्द।

जय वृषभनाथ वृष को प्रकाश, भविजन को तारे पाप नाश।
जय अजितनाथ जीते सु कर्म, ले क्षमा खड्ग भेदे जु मर्म ॥१॥
जय सम्भव जग सुखके निधान, जग सुख करता तुम दियो ज्ञान।
जय अभिनन्दन पद धरो ध्यान, तासों प्रगटे शुभ ज्ञान भान ॥२॥
जय सुमति सुमतिके देन हार, जासों उतरे भव उदधि पार।
जय पद्म पद्म पदकमल तोहिं, भविजन अति सेवैं मगन होहिं ॥३॥
जय जय सुपार्श्व तुम नमत पांय, क्षय होत पाप बहु पुण्य थाय।
जय चन्द्रप्रभ शशिकोट भान, जगका मिथ्यातम हरो जान ॥४॥

जय पुष्पदन्त जग मांहि सार, पुष्पकको मारयो अति सुमार।
करि धर्मभाव जगमें प्रकाश, हरि पाप तिमिर दियो मुक्तवास ॥५॥
जय शीतलजिन भवहर प्रवीन, हरि पाप ताप जग सुखी कीन।
श्रेयांस कियो जग को कल्यान, दे धर्म दुःखित तारे सुजान ॥६॥
जय वासुपूज्य जिन नमों तोहि, सुर नर मुनि पूजत गर्व खोहि।
जय विमल विमल गुण लीन मेय, भवि करे आप सम सुगुण देय ॥७॥
जय अनन्तनाथ करि अनन्तवीर्य, हरि घातिकर्म धरि नन्त धीर्य।
उपजायो केवलज्ञान भान, प्रभु लखे चराचर सब सु जान ॥८॥

दोहा—यह चौदह जिनजगत में, मंगल करन प्रवीन।
पाप हरण बहु सुख करन, सेवक सुखमय कीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यंतचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं०।

अनन्त चतुर्दशी मन्त्र

एकादशी—ॐ ह्रीं अर्हं ह्स॰ अनन्त केवलिने नमः स्वाहा।
द्वादशी—ॐ ह्रीं क्ष्वीं ह्रीं ह्रीं ह्रौं हंस॰ अमृत वाहने नमः स्वाहा।
त्रयोदशी—ॐ ह्रीं अनन्तनाथ तीर्थङ्कराय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रू ह्रौं ह्रः असि आउसा मम सर्व शान्ति कुरु-कुरु स्वाहा।
चतुर्दशी—ॐ ह्रीं अर्हं ह्सः। अनन्त केवलि भगवान अनन्त दान लाभ भोगोपभोग वीर्याभिवृद्धि कुरु-कुरु स्वाहा।

अनन्त बदलने का मन्त्र

ॐ ह्रीं अर्हं ह्स॰ अनन्त केवलि भगवान सर्व कर्म विमुक्ताय अनन्तनाथ तीर्थङ्कराय अनन्त सुख प्राप्ताय पूर्व सूत्र बन्धन मोचन करोमि स्वाहा।

अनन्त बांधने का मन्त्र

ॐ ह्रीं अनन्त तीर्थङ्कराय सर्व शान्ति कुरु-कुरु सूत्र बन्धन करोमि स्वाहा।

यज्ञोपवीत मन्त्र

ॐ ह्रीं नम परमशान्ताय परमशान्तिकराय पवित्रीकराऽहं रत्नत्रय स्वरूप यज्ञोपवीत दधामि मम गात्रं पवित्र भवतु अर्हं नमः स्वाहा।

शान्तिपाठः

दोधकवृत्त ।

शान्तिजिनं शशि-निर्मल-वक्त्रं शील-गुण-व्रत-संयम-पात्रम् ।
अष्टशतार्चित-लक्षण-गात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुज-नेत्रम् ॥१॥
पञ्चममीप्सित-चक्रधराणां पूजितमिन्द्र-नरेन्द्र-गणैश्च ।
शान्तिकरं गण-शान्तिमभीप्सुः षोडश-तीर्थकरं प्रणमामि ॥२॥
दिव्य-तरुः सुर-पुष्प-सुवृष्टिर्दुन्दुभिरासन-योजन-घोषौ ।
आतपवारण-चामर-युग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥३॥
तं जगदर्चित-शान्ति-जिनेन्द्रं शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं मह्यमरं पठते परमां च ॥४॥

वसन्ततिलका छन्द ।

येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हार-रत्नैः शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुत-पाद-पद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवर-वंश-जगत्प्रदीपास्तीर्थङ्कराः सतत-शान्तिकरा भवन्तु ॥५॥

इन्द्रवज्रा ।

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्तिं भगवाञ्जिनेन्द्रः ॥६॥

स्रग्धरावृत्त ।

क्षेमं सर्व-प्रजानां प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ।
दुर्भिक्षं चौर-मारी क्षणमपि जगतां मा स्म भूज्जीवलोके
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्व-सौख्य-प्रदायि ॥७॥

अनुष्टुप्

प्रध्वस्त-घाति-कर्माणः केवलज्ञान-भास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतां शान्तिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥८॥

अथेष्ट प्रार्थना

प्रथम करणं चरणं द्रव्यं नमः
शास्त्राभ्यासो जिनपति-नुतिः सङ्गतिः सर्वदार्यैः

सद्वृत्तानां गुण-गण-कथा दोष-वादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रिय-हित-वचो भावना चात्मतत्त्वे
सम्पद्यन्तां मम भव-भवे यावदेतेऽपवर्गः ॥९॥

आर्यावृत्त

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पद-द्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाण-सम्प्राप्तिः ॥१०॥
अक्खर- पयत्थ-हीणं मत्ता-हीणं च जं मए भणियं ।
तं खमउ णाणदेव य मज्झ वि दुक्ख-क्खयं दिंतु ॥११॥
दुक्ख-खओ कम्म-खओ समाहिमरणं च बोहि-लाहो य ।
मम होउ जगढ-बंधव तव जिणवर चरण-सरणेण ॥१२॥

स्तुतिः

त्रिभुवन-गुरो, जिनेश्वर परमानन्दैक-कारणं कुरुष्व ।
मयि किङ्करेऽत्र करुणां यथा तथा जायते मुक्तिः ॥१३॥
निर्विण्णोऽहं नितरामर्हन्वहु-दुःखया भवस्थित्या ।
अपुनर्भवाय भवहर, कुरु करुणामत्र मयि दीने ॥१४॥
उद्धर मां पतितमतो विषमाद्भवकूपतः कृपां कृत्वा ।
अर्हन्नलमुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि ॥१५॥
त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश तेनाहम् ।
मोह-रिपु-दलित-मानं फूत्करणं तव पुरः कुर्वे ॥१६॥
ग्रामपतेरपि करुणा परेण केनाप्युपद्रुते पुंसि ।
जगतां प्रभो न किं तव जिन मयि खलु कर्मभिः प्रहते ॥१७॥
अपहर मम जन्म दयां कृत्वा चेत्येकवचसि वक्तव्यम् ।

तव जिन चरणाब्ज-युगं करुणामृत-शीतलं यावत् ।
संसार-ताप-तप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥१६॥
जगदेक-शरण भगवन् नौमि श्रीपद्मनन्दित-गुणौघ ।
किं बहुना कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥२०॥

[परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि]

विसर्जन संस्कृत

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ! ॥ १ ॥
आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनं ।
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ! ॥ २ ॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ! ॥ ३ ॥
आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमम् ।
ते मयाऽभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यांतु यथास्थितं ॥४॥
सर्वमंगल मांगल्यं सर्व कल्याणकारकम् ।
प्रधानं सर्वधर्माणां जैनं जयतु शासनम् ॥ ५ ॥

पार्श्वनाथ स्तोत्र

भुजंगप्रयात छन्द ।

नरेन्द्रं फणीन्द्रं सुरेन्द्रं अधीसं, शतेन्द्रं सु पुजैं भजैं नाय शीशं ।
मुनीद्रं गणेन्द्रं नमों जोडि हाथ, नमो देवदेवं सदा पार्श्वनाथं ॥१॥
गजेन्द्रं मृगेन्द्रं गह्यो तू छुड़ावै, महा आगतैं नागतैं तू वचावै ।
महावीरतैं युद्ध मैं तू जितावै, महा रोगतैं वंधतैं तू छुड़ावै ॥ २ ॥
दुःखी दुःखहर्ता सुखीसुक्खकर्ता, सदासेवकों को महानन्द भर्ता ।
हरे यक्षराक्षस्य भूतं पिशाचं, विषं डांकिनी विघ्नकेभय अवाचं ॥३॥
दरिद्रीन को द्रव्यके दानदी ने, अपुत्रीन को तू भले पुत्र कीने ।
महासंकटोंसे निकारै विधाता, सबै सम्पदा सर्वको देहि दाता ॥४॥
महाचोरको वज्र का भय निवारै, महापौनके पुञ्जतैं तू उबारै ।
महाक्रोधकी अग्निको मेघ धारा, महालोभ शैलेशको वज्रभारा ॥५॥
महामोह अन्धेरको ज्ञान भानं, महाकर्मकांतारको दौं प्रधानं ।
किये नागनागिन अधोलोक स्वामी, हस्यो मान तूदैत्यको हो अकामी।
तुही कल्पवृक्षं तुही कामधेनु, तुही दिव्य चिन्तामणी नाग एनं।
पशू नर्क के दुःखतैं तू छुड़ावै, महास्वर्गतैं मुक्ति मैं तू वसावै ॥७॥
करै लोहको हेमपाषाण नामी, रटै नाम सो क्यों न हो मोक्षगामी।
करै सेव ताकी करैं देव सेवा, सुनै वैन सोही लहैं ज्ञान मेवा ॥८॥
जपै जाप ताको नहीं पाप लागै, धरै ध्यान ताके सबै दोष भागै ।
विना तोहि जाने धरे भव घनेरे, तुम्हारी कृपातैं सरैं काज मेरे ॥९।

दोहा—गणधर इन्द्र न कर सकैं, तुम विनती भगवान ।
'द्यानत' प्रीति निहारकैं, कीजै आप समान ॥

श्री जिनवाणी भजन

जिनवाणी माता दर्शन की बलिहारियां ॥ टेक ॥

प्रथम देव अरहन्त मनाऊ, गणधरजी को ध्याऊ ।
कुन्दकुन्द आचारज स्वामी, नितप्रति शीश नवाऊ ॥ ए जिनवाणी०

योनि लाख चौरासी मांही, घोर महा दुःख पायो ।
तेरी महिमा सुन कर माता, शरण तिहारी आयो ॥ ए जिनवाणी०

जाने थारो शरणा लीनो, अष्ट-कर्म क्षय कीनो ।
जामन मरण मेट के माता, मोक्ष महाफल लीनो ॥ ए जिनवाणी०

बार-बार मैं विनऊ माता, मिहरजु मोपर कीजे ।
पार्श्वदास की अरज यही है, चरण शरण मोहि दीजे ॥ ए जिनवाणी०

जिनवाणी स्तुति

वीर हिमाचलते निकसी गुरु गौतम के मुख कुण्ड ढरी है ।
मोह महाचल भेद चली जग की जड़ता तप दूर करी है ॥
ज्ञान पयोनिधि माहि रली बहु भक्ति तरङ्गनि सों उछरी है ।
ता शुचि शारद गङ्ग नदी प्रति मैं अंजुरी निज शीश धरी है ॥ १ ॥

या जग मन्दिर मे अनिवार अज्ञान अन्धेर छयो अति भारी ।
श्रीजिन की धुनि दीपशिखा सम जो नहिं होत प्रकाशन हारी ॥
तो किस भांति पदारथ पांति कहा लहते रहते अविचारी ।
या विधि सन्त कहैं धनि है धनि हैं जिन वैन बड़े उपगारी ॥ २ ॥

अथ भूधरकृत गुरु स्तुति

वन्दौ दिगम्बर गुरुचरण जग—तरण तारण जान।
जे भरम भारी रोग को है, राजवैद्य महान॥
जिनके अनुग्रह बिन कभी नहिं, कटै कर्म जजीर।
ते साधु मेरे उर बसहु, मेरी हरहु पातक पीर॥ १ ॥

यह तन अपावन अथिर है, ससार सकल असार।
ये भोग विषपकवान से, इह भाति सोच विचार॥
तप विरचि श्रीमुनि वन बसे, सब छाडि परिग्रह भीर। ते साधु०॥२॥

जे काच कञ्चनसम गिनहिं, अरि मित्र एक स्वरूप।
निन्दा बडाई सारिखी, वनखण्ड शहर अनूप॥
सुख दुःख जीवन मरन मे, नहिं खुशी नहि दिलगीर। ते साधु०॥३॥

जे वाह्य परवत वन बसै, गिरि गुफा महल मनोग।
सिल सेज समता सहचरी, शशि किरन दीपक जोग॥
मृग मित्र भोजन तपमई, विज्ञान निरमल नीर। ते साधु०॥४॥

सूखहि सरोवर जल भरे, सूखहिं तरगिनि-तोय।
बाटहि वटोही ना चलै, जहँ घाम गरमी होय॥
तिहँकाल मुनिवर तपतपहिं, गिरि शिखर ठाडे धीर। ते साधु०॥५॥

घनघोर गरजहिं घनघटा, जलपरहिं पावसकाल।
चहुँ ओर चमकहि बीजुरी, अति चलै सीरी व्याल॥
तरुहेट तिष्ठहिं तब जती, एकान्त अचल शरीर। ते साधु०॥६॥

जब शीतमास तुषारसो, दाहै सकल वनराय।
जब जमै पानी पोखरां, थरहरै सबकी काय॥
तब नगन निवसै चौहटे, अथवा नदी के तीर। ते साधु०॥७॥

करजोर 'भूधर' बीनवै, कब मिलहिं वे मुनिराज।
यह आश मन की कब फलै, मम सरहिं सगरे काज॥
ससार विषम विदेश मे, जे बिना कारण वीर। ते साधु०॥८॥



अथ भूधरकृत दूसरी गुरु स्तुति

राग भरथरी—दोहा।

ते गुरु मेरे मन बसो, जे भवजलधि जिहाज।
आप तिरहिं पर तारही, ऐसे श्रीऋषिराज॥ ते गुरु० ॥ १ ॥

मोहमहारिपु जीतिकै, छाड्यो सब घरबार।
होय दिगम्बर वन बसे, आतम शुद्ध विचार॥ ते गुरु० ॥ २ ॥

रोग उरग-विलवपु गिण्यो, भोग भुजंग समान।
कदलीतरु ससार है, त्याग्यो सब यह जान॥ ते गुरु० ॥ ३ ॥

रत्नत्रयनिधि उर धरैं, अरु निरग्रन्थ त्रिकाल।
मार्यो कामखबीस को, स्वामी परम दयाल॥ ते गुरु० ॥ ४ ॥

पञ्च महाव्रत आचरै, पांचो समिति समेत।
तीन गुपति पालै सदा, अजर अमर पदहेत॥ ते गुरु० ॥ ५ ॥

धर्म धरै दशलाक्षणी, भावैं भावना सार।
सहैं परीषह बीस द्वै, चारित-रतन-भण्डार ॥ ते गुरु० ॥ ६ ॥

जेठ तपै रवि आकरो, सूखै सर वर नीर।
शैल-शिखर मुनि तप तपै, दाझै नगन शरीर ॥ ते गुरु० ॥ ७ ॥

पावस रैन डरावनी, बरसै जलधर धार।
तरुतल निवसै तव यती, चालै झञ्झा व्यार ॥ ते गुरु० ॥ ८ ॥

शीत पडै कपि-मद गलै, दाहै सब वनराय।
तालतरगनि के तटै, ठाडे ध्यान लगाय ॥ ते गुरु० ॥ ९ ॥

इहि विधि दुद्धर तप तपै, तीनो काल मझार।
लागे सहज सरूप मे, तनसो ममत निवार ॥ ते गुरु० ॥ १० ॥

पूरव भोग न चिन्तवै, आगम वांछै नाहिं।
चहुँ गतिके दुःखसौ डरै, सुरति लगी शिवमाहिं ॥ ते गुरु० ॥ ११ ॥

रङ्गमहल मे पौढते, कोमल सेज बिछाय।
ते पच्छिम निशि भूमि मे, सोवै सवरि काय ॥ ते गुरु० ॥ १२ ॥

गज चढ़ि चलते गर्वसो, सैना सजि चतुरङ्ग।
निरखि-निरखि पग वे धरै, पालै करुणा अङ्ग ॥ ते गुरु० ॥ १३ ॥

वे गुरु चरण जहा धरै, जग मे तीरथ जेह।
सो रज मम मस्तक चढो, 'भूधर' मागे एह ॥ ते गुरु० ॥ १४ ॥

संकट हरण विनती

हे दीनबन्धु श्रीपति करुणा निधान जी।
अब मेरी व्यथा क्यों ना हरो बार क्या लगी॥ टेक॥
मालिक हो दो जहान के जिनराज आप ही।
ऐबो हुनर हमारा कुछ तुमसे छिपा नहीं॥
बेजान में गुनाह मुझसे बन गया सही।
ककरी के चोर को कटार मारिये नहीं॥ हे दीन०॥ १॥
दुःख दर्द दिल का आपसे जिसने कहा सही।
मुश्किल कहर बहर से लई है भुजा गही॥
सब वेद और पुराण में प्रमाण है यही।
आनन्द कन्द श्रीजिनेन्द्र देव है तुही॥ हे दीन०॥ २॥
हाथी पे चढ़ी जाती थी सुलोचना सती।
गङ्गा में ग्राह ने गही गजराज की गती॥
उस वक्त में पुकार किया था तुम्हें सती।
भय टार के उबार लिया है कृपा पती॥ हे दीन०॥ ३॥
पावक प्रचण्ड कुण्ड में उमण्ड जब रहा।
सीता से शपथ लेने को तब राम ने कहा॥
तुम ध्यान धरके जानकी पग धारती तहां।
तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कमल लहलहा॥ हे दीन०॥ ४॥
जब चीर द्रौपदी का दुःशासन ने था गहा।
सबरी सभा के लोग कहते थे हहा-हहा॥
उस वक्त भीर पीर में तुमने करी सहा।
परदा ढका सती का सुयश जगत में रहा॥ हे दीन०॥ ५॥

श्रीपाल को सागर विषै जब सेठ गिराया।
उसकी रमा से रमने को आया था बेहया॥
उस वक्त के सङ्कट मे सती तुमको जो ध्याया।
दुःख द्वन्दफन्द मेट के आनन्द बढ़ाया॥ हे दीन०॥ ६॥
हरिषेण की माता को जहाँ सौत सताया।
रथ जैन का तेरा चले पीछे से बताया॥
उस वक्तके अनशन मे सती तुमको जो ध्याया।
चक्रेश हो सुत उसके ने रथ जैन चलाया॥ हे दीन०॥ ७॥
सम्यक्त शुद्ध शीलवन्त चन्दना सती।
जिसके नजीक लगती थी जाहर रती-रती॥
बेडी मे पडी थी तुम्हें जब ध्यावती हुती।
तब वीर धीर ने हरी दुःख द्वन्द की गती॥ हे दीन०॥ ८॥
जब अञ्जना सती को हुआ गर्भ उजारा।
तब सास ने कलङ्क लगा घर से निकारा॥
बन वर्ग के उपसर्ग मे सती तुमको चितारा।
प्रभु भक्त व्यक्त जानि के भय देव निवारा॥ हे दीन०॥ ९॥
सोमा से कहा जो तू सती शील विशाला।
तो कुम्भतैं निकाल भला नाग जु काला॥
उस वक्त तुम्हें ध्याय सती हाथ जो डाला।
तत्काल ही वह नाग हुआ फूल की माला॥ हे दीन०॥ १०॥
जब राज रोग था हुआ श्रीपाल राज को।
मैना सती तब आपकी पूजा इलाज को॥
तत्काल ही सुन्दर किया श्रीपालराज को।
वह राज रोग भोग गया मुक्तिराज को॥ हे दीन०॥ ११॥

जब सेठ सुदर्शन को मृषा दोष लगाया।
रानी के कहे भूप ने शूली पै चढाया॥
उस वक्त तुम्हें सेठ ने निज ध्यान मे ध्याया।
शूली से उतार उसको सिंहासन पै बिठाया॥ हे दीन०॥ १२॥
जब सेठ सुधंन्नाजी को वापी मे गिराया।
ऊपर से दुष्ट था उसे वह मारने आया॥
उस वक्त तुम्हें सेठ ने निज ध्यान मे ध्याया।
तत्काल ही जञ्जाल से तब उसको बचाया॥ हे दीन०॥ १३॥
इक सेठ के घर मे किया दारिद्र ने डेरा।
भोजन्न का ठिकाना नहीं था साझ सवेरा॥
उस वक्त तुम्हें सेठ ने जब ध्यान मे घेरा।
घर उसके मे तब कर दिया लक्ष्मी का बसेरा॥ हे दीन०॥ १४॥
बलि वाद मे मुनिराज सो जब पार न पाया।
तब रात को तलवार ले शठ मारने आया॥
मुनिराज ने निज ध्यान मे मन लीन लगाया।
उस वक्त हो प्रत्यक्ष तहाँ देव बचाया॥ हे दीन०॥ १५॥
जब राम ने हनुमन्त को गढ लङ्क पठाया।
सीता की खबर लेने को सह सैन्य सिधाया॥
मग बीच दो मुनिराज की लख आग मे काया।
झट वार मूसलधार से उपसर्ग बुझाया॥ हे दीन०॥ १६॥
जिननाथ ही को माथ नवाता था उदारा।
घेरे मे पडा था वो कुम्भकरण विचारा॥
उस वक्त तुम्हें प्रेम से सङ्कट मे उचारा।
रघुवीर ने सब पीर तहा तुरत निवारा॥ हे दीन०॥ १७॥

रणपाल कुँवर के पडी थी पाँव मे वेरी।
उस वक्त तुम्हें ध्यान मे ध्याया था मवेरी॥
तत्काल ही सुकुमाल की सव झड पडी वेरी।
तुम राजकुँवर की सभी दुःख द्वन्द निवेरी॥ हे दीन०॥ १८॥
जव सेठ के नन्दन को डसा नाग जु कारा।
उस वक्त तुम्हे पीर में धर धीर पुकारा॥
तत्काल ही उस वाल का विष भूरि उतारा।
वह जाग उठा सोके मानो सेज सकारा॥ हे दीन०॥ १९॥
मुनि मानतुङ्ग को दई जव भूप ने पीरा।
ताले मे किया वन्द भरी लोह जञ्जीरा॥
मुनीश ने आदीश की थुति की है गम्भीरा।
चक्रेश्वरी तव आन के झट दूर की पीरा॥ हे दीन०॥ २०॥
शिवकोटि ने हट था किया समन्तभद्र सों।
शिवपिण्ड को वन्दन करो शङ्को अभद्र सों॥
उस वक्त स्वयम्भू रचा गुरु भाव भद्र सों।
प्रतिमा जहा जिन चन्द्र की प्रगटी सुभद्र सों॥ हे दीन०॥ २१॥
सूवे ने तुम्हें आन के फल आम चढाया।
मेंढक ले चला फूल भरा भक्ति का भाया॥
तुम दोनों को अभिराम स्वर्ग धाम वसाया।
हम आपसे दातार को लख आज ही पाया॥ हे दीन०॥ २२॥
कपि, श्वान, सिंह, नवल, अज, वैल विचारे।
तिर्यञ्च जिन्हें रञ्च न था बोध चितारे॥
इत्यादि को सुरधाम दे शिवधाम में धारे।
प्रभु आपसे दातार को हम आज निहारे॥ हे दीन०॥ २३॥

तुमही अनन्त जन्तु का भय भीर निवारा।
वेदों-पुराण में गुरु गणधर ने उचारा॥
हम आपकी शरणागति में आके पुकारा।
तुम हो प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष ईक्षु अहारा॥ हे दीन०॥ २४॥

प्रभु-भक्त व्यक्त जक्त भुक्त मुक्त के दानी।
आनन्द कन्द वृन्द को हो मुक्ति के दानी॥
मोहि दीन जान दीनबन्धु पातकी भानी।
ससार विषम तार-तार अन्तर यामी॥ हे दीन०॥ २५॥

करुणा निधान दास को अब क्यों न निहारो।
दानी अनन्त दान के दाता हो सम्भारो॥
वृष चन्द नन्द वृन्द का उपसर्ग निवारो।
ससार विषमक्षार से प्रभु पार उतारो॥
हे दीनबन्धु श्रीपति करुणा निधानजी।
अब मेरी व्यथा क्यों न हरो वार क्या लगी॥ हे दीन०॥ २६॥

वर्णी वाणी की डायरी से

- "किसी को मत सताओ" यह परम कल्याण का मार्ग है। इसका यह तात्पर्य है कि जो पर को कष्ट देने का भाव है वह आत्मा का विभाव भाव है, उसके होते ही आत्मा विकृत अवस्था को प्राप्त हो जाती है और विकृत भाव के होते ही आत्मा स्वरूप से च्युत हो जाती है, स्वरूप से च्युत होते ही आत्मा नाना गतियों का आश्रय लेती है और वहाँ नाना प्रकार के दुःखों का अनुभव करती है; इसका नाम कर्म फल चेतना है। कर्मफल चेतना का कारण कर्म चेतना है, जब तक कर्म चेतना का सम्बन्ध न छूटेगा इस ससार चक्र से सुलझना कठिन ही नहीं, असम्भव है।

भजन—होनहार बलवान

नर होनहार होतव्य, न तिल भर टरती।
भई जरदकुवर के हाथ मौत गिरिधर की॥
श्री नेमिनाथ जिन आगम यह उच्चारी।
भई बारह वर्ष विनाशि द्वारिका सारी॥
बचे फक्त श्री बलभद्र और गिरिधारी।
गये निकलि देश से कथ तृषा अधिकारी॥
भये निद्रावश वन बीच निवृत्ति हरि की।
भई जरदकुवर के हाथ मौत गिरिधर की॥
बलभद्र भरन गये नीर न नियरे पाया।
धरि भेष शिकारी जरदकुंवर तह आया॥
लखि पीताम्बर पट पीत पद्म हरषाया।
तब मृगा जानि यदुवश ने वाण चलाया॥
लागत ही तीर उठि वोर पीर तरकस की।
भई जरदकुंवर के हाथ मौत गिरिधर. की॥
चित चकित होत चहुँ ओर निहारे वन मे।
किन मारा बैरी वाण आय इस वन मे॥
यह वचन सुनत यदुकुंवर बिलखते मन में।
श्री नेमिनाथ जिन वचन लखे दृग मन में॥
होनी से शक्ति न होवे गणधर मुनि की।
भई जरदकुंवर के हाथ मौत गिरिधर की॥

ले आये नीर बलभद्र तीर नरपति के।
लखि हाल भये बेहाल देख भूपति के॥
षट् मास फिरे बलभद्र मोहवश भ्रमते।
दिया तुङ्गीगिरि पर दाह बोध चितधर के॥
कहे गुणीजन के सुन वाणी यह जिनवर की।
भई जरदकुंवर के हाथ मौत गिरिधर की॥

श्री नेमिनाथजी की विनती

सैयो म्हारी नेमीसुर बनडाने गिरनारी जातां राख लीजो ये ॥ टेक॥
समद विजयजी रा लाडला ये माय, सैयो म्हारी दोनूं छै हरघर लार।
पिताजी ने जाय कहिजो ये ॥ १ ॥
नेमीसुर बनडो बण्यो हे माय, सैयो म्हारी खूब बणी छै बरात।
झरोखा से झांख लीजो ये ॥ २ ॥
तोरन पर जब आईया ये माय, सैयो म्हारी पशुवन सुणी पुकार।
पाछो रथ फेरियो ये माय ॥ ३ ॥
तोड्या छै कांकण डोरडा ये माय, सैयो म्हारी तोड्या छै नवसर हार।
दीक्षा उरधार लीनो है माय ॥ ४ ॥
संजम अब मैं धारस्यूं ये माय, सैयो म्हारी जास्या गढ़ गिरिनार।
कर्म फन्द काटस्या ये माय ॥ ५ ॥
सेवक की ये विनती ये माय, सैयो म्हारी मागो छै शिवपुर वास।
दया चित्त धार लीजो ये माय ॥ ६ ॥

शास्त्र-भक्ति

अकेला ही हूँ मैं करम सब आये सिमटिके।
लिया है मैं तेरा शरण अब माता सटकिके॥
भ्रमावत है मोको-करम दु:ख देता जनमका।
करो भक्ती तेरी, हरो दु:ख माता भ्रमणका॥ १॥

दु:खी हुआ भारी, भ्रमत फिरता हूँ जगतमे।
सहा जाता नाही, अकल घबराई भ्रमणमे॥
करो क्या मा मोरी, चलत वश नाही मिटनका।
करो भक्ती तेरी, हरो दु:ख माता भ्रमणका॥ २॥

सुनो माता मोरी, अरज करता हूँ दरदमे।
दु:खी जानो मोको, डरप कर आयो शरणमे॥
कृपा ऐसी कीजे, दरद मिट जावै मरणका।
करो भक्ती तेरी, हरो दु:ख माता भ्रमणका॥ ३॥

पिलावै जो मोको, सुबुधिकर प्याला अमृतका।
मिटावै जो मेरा, सरब दु:ख सारा फिरनका॥
पडू पावा तेरे, हरो दु:ख सारा फिकरका।
करो भक्ती तेरी, हरो दु:ख माता भ्रमणका॥ ४॥

सवैया।

मिथ्या-तम नाशवे को, ज्ञान के प्रकाशवे को।
आपा-पर-भासवे को, भानुसो बखानी है॥
छहो द्रव्य जानवे को, वसुविधि भानवे को।
स्वपर पिछानवे को, परम प्रमानी है॥
अनुभौ बताइवे को, जीव के जतायवे को।
काहू न सतायवे को, भव्य उर आनी है॥
जहां तहां तारवे को, पार के उतारवे को।
सुख विस्तारवे को, ऐसी जिनवानी है॥ ५॥

दोहा—जिनवाणी की स्तुति करै, अल्प बुद्धि परमान।
'पन्नालाल' विनती करै, दे माता मोहि ज्ञान॥
हे जिनवाणी भारती, तोहि जपूं दिन रैन।
जो तेरा शरणा गहै, सुख पावै दिन रैन॥
जा वानी के ज्ञानतैं, सूझै लोकालोक।
सो वानी मस्तक चढ़ो, सदा देत हों धोक॥

वर्णी वाणी की डायरी से

■ संसार की दशा जो है वही रहेगी इसको देख कर उपेक्षा करनी चाहिये। केवल स्वात्म गुण और दोषों को देखो। उन्हें देख कर गुणों को ग्रहण करो और दोषों को त्यागो।

पं० भूधरकृत दूसरी स्तुति

अहो ! जगतगुरु देव, सुनियो अरज हमारी ।
तुम हो दीनदयाल, मै दुःखिया संसारी ॥
इस भव वन में वादि, काल अनादि गमायो ।
भ्रमत चहूँगति माहिं, सुख नहि दुःख बहु पायो ॥
कर्म महारिपु जोर, एक न कान करै जी ।
मन मान्या दुःख देहि, काहू सो नाहि डरै जी ॥
कबहूँ इतर निगोद, कबहूँ नर्क दिखावें ।
सुरनर-पशुगति माहि, बहुविधि नाच नचावें ॥
प्रभु इनके परसग, भव भव माहि बुरे जी ।
जे दुःख देखे देव । तुमसो नाहिं दुरे जी ॥
एक जनम की बात, कहि न सको सुनि स्वामी ।
तुम अनन्त परजाय, जानत अन्तरयामी ॥
मैं तो एक अनाथ, ये मिलि दुष्ट घनेरे ।
कियो बहुत बेहाल, सुनियो साहिब मेरे ॥
ज्ञान महानिधि लूटि, रङ्क निबल करि डारयो ।
इन ही तुम मुझ माहि, हे जिन ! अन्तर पारयो ॥
पाप पुण्य मिलि दोइ, पायनि बेडी डारी ।
तन कारागृह माहि, मोहि दिये दुःख भारी ॥

इनको नेक विगार, मैं कछु नाहिं कियो।
बिन कारन जगवधु! बहुविधि बैर लियो ॥
अब आयो तुम पास, सुनि कर सुजस तिहारो।
नीति निपुन महाराज, कीजे न्याय हमारो ॥
दुष्टन देहु निकार, साधुन को रख लीजै।
विनवै "भूधरदास" हे प्रभु! ढील न कीजै ॥

मंगलाष्टक (वृन्दावन कृत भाषा)

सघ सहित श्रीकुन्दकुन्द गुरु, वन्दन हेत गये गिरनार।
बाद परयो तह संशय मतिसों, साक्षी बदी अम्बिकाकार ॥
'सत्य' पथ निरग्रथ दिगम्बर, कही सुरी तह प्रकट पुकार।
सो गुरुदेव वसौ उर मेरे, विघन हरण मङ्गल करतार ॥ १ ॥

स्वामी समन्तभद्र मुनिवरसों, शिवकोटी हट कियो अपार।
वन्दन करो शम्भु पिण्डी को, तब गुरु रच्यो स्वयभू भार ॥
वन्दन करत पिण्डिका फाटी प्रगट भये जिनचन्द उदार ॥ सो० २ ॥

श्री अकलङ्कदेव मुनिवरसों, बाद रच्यौ जहं बौद्ध विचार।
तारादेवी घट में थापी, पटके ओट करत उच्चार ॥
जीत्यो स्यादवादबल मुनिवर, बौद्ध बोध तारामद टार ॥ सो० ३ ॥

श्रीमत विद्यानन्दि जबै, श्री देवागम थुति सुनी सुधार।
अर्थ हेतु पहुँच्यो जिनमन्दिर, मिल्यो अर्थ तह सुख दातार ॥
तब व्रत परम दिगम्बर को धर, परमतको कीनों परिहार ॥ सो० ४ ॥

श्रीमत मानतुङ्ग मुनिवर पर, भूप कोप जब कियो गंवार।
बन्द कियो तालों में तबही, भक्तामर गुरु रच्यो उदार॥
चक्रेश्वरी प्रगट तब ह्वैके, बन्धन काट कियो जयकार॥ सो० ५॥

श्रीमत वादिराज मुनिवरसों, कह्यो कुष्टि भूपति जिहं वार।
श्रावक सेठ कह्यो तिहं अवसर, मेरे गुरु कंचन तनधार॥
तबहीं एकीभाव रच्यो गुरु, तन सुवरण द्युति भयो अपार॥ सो० ६॥

श्रीमत कुमुदचन्द्र मुनिवरसों, वाद पर्यो जहं सभा मंझार।
तब ही श्रीकल्याण धामथुति, श्रीगुरु रचना रची अपार॥
तब प्रतिमा श्रीपार्श्वनाथ की प्रकट भयी त्रिभुवन जयकार॥ सो० ७॥

श्रीमत अभयचन्द्र गुरुसों जब, दिल्लीपति इमि कही पुकार।
कै तुम मोहि दिखावहु अतिशय, कै पकरौं मेरो मत सार॥
तब गुरु प्रकट अलौकिक अतिशय, तुरत हर्यो ताको मदभार।
सो गुरुदेव बसो उर मेरे, विघन हरण मङ्गल करतार॥ सो० ८॥

दोहा—विघन हरण मङ्गल करण, वाञ्छित फल दातार।
'वृन्दावन' अष्टक रच्यो, करो कण्ठ सुखकार॥

वर्णी-वाणी (डायरी) से

- जो स्वच्छ मन में आवे, उसे कहने में संकोच मत करो।
- किसी से राग-द्वेष मत करो।
- राग-द्वेष के आवेग में आकर अन्यथा प्रचार मत करो, यही आत्मा के सुधार की मुख्य शिक्षा है।

सुप्रभात स्तोत्रम्

यत्स्वर्गावतरोत्सवे यद्भगवज्जन्माभिषेकोत्सवे,
यद्दीक्षाग्रहणोत्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे ।
यन्निर्वाणगमोत्सवे जिनपतेः पूजाद्भुतं तद्भवैः,
संगीतस्तुतिमंगलैः प्रसरतान्मे सुप्रभातोत्सवः ॥ १ ॥

श्रीमन्नतामरकिरीटमणिप्रभाभि
रालीढ़पादयुग दुर्धरकर्मदूर ।
श्रीनाभिनंदनजिनाजितसंभवाख्य
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥ २ ॥

छत्रत्रयप्रचलचामरवीज्यमान,
देवाभिनंदनमुने सुमते जिनेन्द्र ।
पद्मप्रभारुणमणिद्युतिभासुरांग । त्व० ॥ ३ ॥

अर्हन् सुपार्श्व कदलीदलवर्णगात्र,
प्रालेयतारगिरिमौक्तिकवर्णगौर ।
चन्द्रप्रभ, स्फटिकपाण्डुर पुष्पदन्त । त्व० ॥ ४ ॥

सन्तप्तकाञ्चनरुचे जिनशीतलाख्य,
श्रेयन्विनष्टदुरिताष्टकलंकपक ।
बन्धूकबन्धुररुचे जिनवासुपूज्य । त्व० ॥ ५ ॥

उद्दण्डदर्पकरिपो विमलामलांग
स्थेमन्ननन्तजिदनन्त सुखाम्बुराशे ।
दुष्कर्मकल्मषविवर्जित धर्मनाथ । त्व० ॥ ६ ॥

देवामरीकुसुमसन्निभ शांतिनाथ
कुन्थो दयागुणविभूषणभूषितांग ।

देवाधिदेव भगवन्नरतीर्थनाथ। त्व० ॥ ७ ॥
यन्मोहमल्लमदभञ्जनमल्लिनाथ
क्षेमकरोऽवितथशासनसुव्रताख्य ।
यत्सम्पदाप्रशमितो नमिनामधेयं। त्व० ॥ ८ ॥
तापिच्छगुच्छरुचिरोज्ज्वल नेमिनाथ
घोरोपसर्गविजयिन् जिन पार्श्वनाथ
स्याद्वादसूक्तिमणिदर्पणवर्द्धमान। त्व०॥ ९ ॥
प्रालेयनीलहरितारुणपीतभासं
यन्मूर्तिमव्यय सुखावसथं मुनीन्द्राः ।
ध्यायन्ति सप्ततिशतं जिनवल्लभानां। त्व०॥१०॥
सुप्रभातं सुनक्षत्रं मांगल्यं परिकीर्तितम् ।
चतुर्विंशतितीर्थानां सुप्रभातं दिने दिने ॥११॥
सुप्रभातं सुनक्षत्रं श्रेयः प्रत्यभिनन्दितम् ।
देवता ऋषयः सिद्धाः सुप्रभातं दिने दिने ॥ १२॥
सुप्रभातं तवैकस्य वृषभस्य महात्मनः ।
येन प्रवर्तितं तीर्थं भव्यसत्त्वसुखावहम् ॥ १३ ॥
सुप्रभातं जिनेंद्राणां ज्ञानोन्मीलितचक्षुषाम् ।
अज्ञानतिमिरान्धानां नित्यमस्तमितो रविः ॥१४॥
सुप्रभातं जिनेन्द्रस्य, वीरः कमल लोचनः ।
येन कर्माटवी दग्धा, शुक्लध्यानोग्रवह्निना ॥१५॥
सुप्रभातं सुनक्षत्रं सुकल्याणं सुमंगलम् ।
त्रैलोक्यहितकर्तॄणां जिनानामेव शासनम् ॥१६॥

अद्याष्टकस्तोत्रम्

अद्य मे सफलं जन्म नेत्रे च सफले मम ।
त्वामद्राक्षं यतो देव हेतुमक्षयसंपदः ॥ १ ॥
अद्य संसार-गंभीर-पारावारः सुदुस्तरः ।
सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ २ ॥
अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते ।
स्नातोऽहं धर्म-तीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥३॥
अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमंगलम् ।
संसारार्णव-तीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ४ ॥
अद्य कर्माष्टक-ज्वालं विधूतं सकषायकम् ।
दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ५ ॥
अद्य सौम्या ग्रहाः सर्वे शुभाश्चैकादश-स्थिताः ।
नष्टानि विघ्न-जालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥६॥
अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणां दुःखदायकः ।
सुख-सङ्गं समापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥७॥
अद्य कर्माष्टकं नष्टं दुःखोत्पादन-कारकम् ।
सुखाम्भोधि-निमग्नोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥८॥
अद्य मिथ्यान्धकारस्य हन्ता ज्ञान-दिवाकरः ।
उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात ॥९॥
अद्याहं सुकृती भूतो निर्धूताशेषकल्मषः ।
भुवन-त्रय-पूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥१०॥
अद्याष्टकं पठेद्यस्तु गुणानन्दित-मानसः ।
तस्य सर्वार्थसंसिद्धिर्जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥११॥

मङ्गलाष्टकम्

श्रीमन्नम्र-सुरासुरेन्द्र-मुकुट-प्रद्योत-रत्नप्रभा-
भास्वत्पाद-नखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः ।
ये सर्वे जिन-सिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥१॥

सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं
मुक्ति-श्री-नगराधिनाथ-जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः ।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्रयालयं
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥२॥

नाभेयादि-जिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशतिः
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश ।
ये विष्णु-प्रतिविष्णु-लाङ्गलधराः सप्तोत्तरा विंशतिः
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥३॥

देव्योऽष्टौ च जयादिका द्विगुणिता विद्यादिका देवताः
श्रीतीर्थङ्करमातृकाश्च जनका यक्षाश्च यक्ष्यस्तथा ।
द्वात्रिंशत्त्रिदशाधिपास्तिथिसुरा दिक्कन्यकाश्चाष्टधा
दिक्पाला दश चेत्यमी सुरगणाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥४॥

ये सर्वौषधऋद्धयः सुतपसो वृद्धिंगताः पञ्च ये
ये चाष्टाङ्गमहानिमित्तकुशला येऽष्टाविधाश्चारणाः ।

पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धिऋद्धीश्वराः
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥५॥

कैलासे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे
चम्पायां वसुपूज्यतुग्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम् ।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥६॥

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा
जम्बू-शाल्मलि-चैत्यशाखिषु तथा वक्षार-रूप्याद्रिषु ।
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥७॥

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक् ।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा संभावितः स्वर्गिभिः
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥८॥

इत्थं श्रीजिनमङ्गलाष्टकमिदं सौभाग्यसंपत्प्रदं
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणामुषः ।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थकामान्विता
लक्ष्मीराश्रयते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि ॥९॥

इति मङ्गलाष्टकम्

दृष्टाष्टकस्तोत्रम्

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवतापहारि
भव्यात्मनां विभव-संभव-भूरिहेतु ।
दुग्धाब्धि-फेन-धवलोज्ज्वल-कूटकोटी-
नद्ध-ध्वज-प्रकर-राजि-विराजमानम् ॥१॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भुवनैकलक्ष्मी-
धामर्द्धिवर्द्धित-महामुनि-सेव्यमानम् ।
विद्याधरामर-वधूजन-मुक्तदिव्य-
पुष्पाञ्जलि-प्रकर-शोभित-भूमिभागम् ॥२॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवनादिवास-
विख्यात-नाक-गणिका-गण-गीयमानम् ।
नानामणि-प्रचय-भासुर-रश्मिजाल-
व्यालीढ-निर्मल-विशाल-गवाक्षजालम् ॥३॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं सुर-सिद्ध-यक्ष-
गन्धर्व-किन्नर-करार्पित-वेणु-वीणा- ।
संगीत-मिश्रित-नमस्कृत-धारनादै-
रापूरिताम्बर-तलोरु-दिगन्तरालम् ॥ ४ ॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विलसद्विलोल-
मालाकुलालि-ललितालक-विभ्रमाणम् ।
माधुर्यवाद्य-लय-नृत्य-विलासिनीनां
लीला-चलद्वलय-नूपुर-नाद-रम्यम् ॥ ५ ॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं मणि-रत्न-हेम-
सारोज्ज्वलैः कलश-चामर-दर्पणाद्यैः ।
सन्मंगलैः सततमष्टशत-प्रभेदै-
र्विभ्राजितं विमल-मौक्तिक-दामशोभम् ॥६॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं वरदेवदारु-
कर्पूर-चन्दन-तरुष्क-सुगन्धिधूपैः ।
मेघायमानगगने पवनाभिघात-
चञ्चच्चलद्विमल-केतन-तुङ्ग-शालम् ॥ ७ ॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं धवलातपत्र-
च्छाया-निमग्न-तनु-यक्षकुमार-वृन्दैः ।
दोधूयमान-सित-चामर-पंक्तिभासं
भामण्डल-द्युतियुत-प्रतिमाभिरामम् ॥ ८ ॥

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विविधप्रकार-
पुष्पोपहार-रमणीय-सुरत्नभूमिः ।
नित्यं वसन्ततिलकश्रियमादधानं
सन्मंगलं सकल-चन्द्रमुनीन्द्र-वन्द्यम् ॥ ९ ॥

दृष्टं मयाद्य मणि-काञ्चन-चित्र-तुङ्ग-
सिंहासनादि-जिनबिम्ब-विभूतियुक्तम् ।
चैत्यालयं यदतुलं परिकीर्तितं मे
सन्मंगलं सकल-चन्द्रमुनीन्द्र-वन्द्यम् ॥१०॥

इति दृष्टाष्टकम्

एकीभावस्तोत्रम्

[श्रीवादिराज]

एकीभावं गत इव मया यः स्वयं कर्म-बन्धो
घोरं दुःखं भव-भव-गतो दुर्निवारः करोति ।
तस्याप्यस्य त्वयि जिन-रवे भक्तिरुन्मुक्तये चेत्
जेतुं शक्यो भवति न तया कोऽपरस्तापहेतुः ॥१॥

ज्योतीरूपं दुरित-निवह-ध्वान्त-विध्वंस-हेतुं
त्वामेवाहुर्जिनवर चिरं तत्त्व-विद्याभियुक्ताः ।
चेतोवासे भवसि च मम स्फार-मुद्भासमान-
स्तस्मिन्नंहः कथमिव तमो वस्तुतो वस्तुमीष्टे ॥२॥

आनन्दाश्रु-स्नपित-वदनं गद्गदं चाभिजल्पन्
यश्चायेत त्वयि दृढ-मनाः स्तोत्र-मन्त्रैर्भवन्तम् ।
तस्याभ्यस्तादपि च सुचिरं देह-वल्मीक-मध्यात्
निष्कास्यन्ते विविध-विषम-व्याधयः काद्रवेयाः ॥३॥

प्रागेवेह त्रिदिव-भवनादेष्यता भव्य-पुण्यात्
पृथ्वी-चक्रं कनकमयतां देव निन्ये त्वयेदम् ।
ध्यान-द्वारं मम रुचिकरं स्वान्त-गेहं प्रविष्टः
तत्किं चित्रं जिन वपुरिदं यत्सुवर्णीकरोषि ॥४॥

लोकस्यैकस्त्वमसि भगवन्निर्निमित्तेन बन्धु-
स्त्वय्येवासौ सकल-विषया शक्तिरप्रत्यनीका ।
भक्ति-स्फीता चिरमधिवसन्मामिकां चित्त-शय्यां
मय्युत्पन्नं कथमिव ततः क्लेश-यूथं सहेथाः ॥५॥

जन्माटव्यां कथमपि मया देव दीर्घं भ्रमित्वा
प्राप्तैवेयं तव नय-कथा स्फार-पीयूष-वापी ।
तस्या मध्ये हिमकर-हिम-व्यूह-शीते नितान्तं
निर्मग्नं मां न जहति कथं दुःख-दावोपतापाः ॥६॥
पाद-न्यासादपि च पुनतो यात्रया ते त्रिलोकीं
हेमाभासो भवति सुरभिः श्रीनिवासश्च पद्मः ।
सर्वाङ्गेण स्पृशति भगवंस्त्वय्यशेषं मनो मे
श्रेयः किं तत्स्वयमहरहर्यन्न मामभ्युपैति ॥७॥
पश्यन्तं त्वद्वचनममृतं भक्ति-पात्र्या पिबन्तं
कर्मारण्यात्पुरुषमसमानन्द-धाम प्रविष्टम् ।
त्वां दुर्वार-स्मर-मद-हरं त्वत्प्रसादैक-भूमिं
क्रूराकाराः कथमिव रुजा-कण्टका निर्लुठन्ति ॥८॥
पाषाणात्मा तदितरसमः केवलं रत्न-मूर्तिः
मानस्तम्भो भवति च परस्तादृशो रत्न-वर्गः ।
दृष्टि-प्राप्तो हरति स कथं मान-रोगं नराणां
प्रत्यासत्तिर्यदि न भवतस्तस्य तच्छक्ति-हेतुः ॥९॥
हृद्यः प्राप्तो मरुदपि भवन्मूर्ति-शैलोपवाही
सद्यः पुंसां निरवधि-रुजा-धूलिबन्धं धुनोति ।
ध्यानाहूतो हृदय-कमलं यस्य तु त्वं प्रविष्टः
तस्याशक्यः क इह भुवने देव लोकोपकारः ॥१०॥
जानासि त्वं मम भव-भवे यच्च यादृक्च दुःखं
जातं यस्य स्मरणमपि मे शस्त्रवन्निष्पिनष्टि ।

त्वं सर्वेशः सकृप इति च त्वामुपेतोऽस्मि भक्त्या
यत्कर्तव्यं तदिह विषये देव एव प्रमाणम् ॥११॥
आपद्दैवं तव नुति-पदैर्जीवकेनोपदिष्टैः
पापाचारी मरण-समये सारमेयोऽपि सौख्यम् ।
कः सन्देहो यदुपलभते वासव-श्री-प्रभुत्वं
जल्पञ्जाप्यैर्मणिभिरमलैस्त्वन्नमस्कार-चक्रम् ॥१२॥
शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरिते सत्यपि त्वय्यनीचा
भक्तिर्नो चेदनवधि-सुखावञ्चिका कुञ्चिकेयम् ।
शक्योद्घाटं भवति हि कथं मुक्ति-कामस्य पुंसो
मुक्ति-द्वारं परिदृढ-महामोह-मुद्रा-कवाटम् ॥१३॥
प्रच्छन्नः खल्वयमघमयैरन्धकारैः समन्तात्
पन्था मुक्तेः स्थपुटित-पदः क्लेश-गर्तैरगाधैः ।
तत्कस्तेन व्रजति सुखतो देव तत्त्वावभासी
यद्यग्रेऽग्रे न भवति भवद्भारती-रत्न-दीपः ॥१४॥
आत्म-ज्योतिर्निधिरनवधिर्द्रष्टुरानन्द-हेतुः
कर्म-क्षोणी-पटल-पिहितो योऽनवाप्यः परेषाम् ।
हस्ते कुर्वन्त्यनतिचिरतस्तं भवद्भक्तिभाजः
स्तोत्रैर्बन्ध-प्रकृति-परुषोद्दाम-धात्री-खनित्रैः ॥१५॥
प्रत्युत्पन्ना नय-हिमगिरेरायता चामृताब्धेः
या देव त्वत्पद-कमलयोः संगता भक्ति-गङ्गा ।
चेतस्तस्यां मम रुचि-वशादाप्लुतं क्षालितांहः
कल्माषं यद्भवति किमियं देव सन्देह-भूमिः ॥१६॥

कोपावेशो न तव न तव क्वापि देव प्रसादो
व्याप्तं चेतस्तव हि परमोपेक्षयैवानपेक्षम् ।
आज्ञावश्यं तदपि भुवनं संनिधिर्वैरहारी
क्वैवंभूतं भुवन-तिलकं प्राभवं त्वत्परेषु ॥ २२ ॥

देव स्तोतुं त्रिदिव-गणिका-मण्डली-गीत-कीर्तिं
तोतूर्ति त्वां सकल-विषय-ज्ञान-मूर्तिं जनो यः ।
तस्य क्षेमं न पदमटतो जातु जोहूर्ति पन्थाः
तत्त्वग्रन्थ-स्मरण-विषये नैष मोमूर्ति मर्त्यः ॥२३॥

चित्ते कुर्वन्निरवधि-सुख-ज्ञान-दृग्वीर्य-रूपं
देव त्वां यः समय-नियमादादरेण स्तवीति ।
श्रेयोमार्गं स खलु सुकृती तावता पूरयित्वा
कल्याणानां भवति विषयः पञ्चधा पञ्चितानाम् ॥२४

भक्ति-प्रह्व-महेन्द्र-पूजित-पद त्वत्कीर्तने न क्षमाः
सूक्ष्म-ज्ञान-दृशोऽपि संयमभृतः के हन्त मन्दा वयम् ।
अस्माभिः स्तवन-च्छलेन तु परस्त्वय्यादरस्तन्यते
स्वात्माधीन-सुखैषिणां स खलु नः कल्याण-कल्पद्रुमः ॥

वादिराजमनु शाब्दिक-लोको वादिराजमनु तार्किक-सिंहः ।
वादिराजमनु काव्यकृतस्ते वादिराजमनु भव्य-सहायः ॥

ये योगिनामपि न यान्ति गुणास्तवेश
　　वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः।
जाता तदेवमसमीक्षित-कारितेयं
　　जल्पन्ति वा निज-गिरा ननु पक्षिणोऽपि॥६॥
आस्तामचिन्त्य-महिमा जिन संस्तवस्ते
　　नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति।
तीव्रातपोपहत-पान्थ-जनान्निदाघे
　　प्रीणाति पद्म-सरसः सरसोऽनिलोऽपि॥७॥
हृद्वर्तिनि त्वयि विभो शिथिलीभवन्ति
　　जन्तोः क्षणेन निबिडा अपि कर्म-बन्धाः।
सद्यो भुजङ्गममया इव मध्य-भाग-
　　मभ्यागते वन-शिखण्डिनि चन्दनस्य॥८॥
मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र
　　रौद्रैरुपद्रव-शतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि।
गो-स्वामिनि स्फुरित-तेजसि दृष्टमात्रे
　　चौरैरिवाशु पशवः प्रपलायमानैः॥९॥
त्वं तारको जिन कथं भविनां त एव
　　त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः।
यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून-
　　मन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः॥१०॥
यस्मिन्हर-प्रभृतयोऽपि हत-प्रभावाः
　　सोऽपि त्वया रति-पतिः क्षपितः क्षणेन।
विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन

पीतं न किं तदपि दुर्धर-वाडवेन ॥११॥

स्वामिन्ननल्प-गरिमाणमपि प्रपन्ना-

स्त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधानाः ।

जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन

चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः ॥१२॥

क्रोधस्त्वया यदि विभो प्रथमं निरस्तो

ध्वस्तास्तदा बत कथं किल कर्म-चौराः ।

प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके

नील-द्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी ॥१३॥

त्वां योगिनो जिन सदा परमात्म-रूप-

मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुज-कोष-देशे ।

पूतस्य निर्मल-रुचेर्यदि वा किमन्य-

दक्षस्य सम्भव-पदं ननु कर्णिकायाः ॥१४॥

ध्यानाज्जिनेश भवतो भविनः क्षणेन

देहं विहाय परमात्म-दशां व्रजन्ति ।

तीव्रानलादुपल-भावमपास्य लोके

चामीकरत्वमचिरादिव धातु-भेदाः ॥१५॥

अन्तः सदैव जिन यस्य विभाव्यसे त्वं

भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम् ।

एतत्स्वरूपमथ मध्य-विवर्तिनो हि

यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः ॥१६॥

आत्मा मनीषिभिरयं त्वदभेद-बुद्ध्या

ध्यातो जिनेन्द्र भवतीह भवत्प्रभावः ।

पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानं
किं नाम नो विष-विकारमपाकरोति ॥१७॥

त्वामेव वीत-तमसं परवादिनोऽपि
नूनं विभो हरि-हरादि-धिया प्रपन्नाः ।
किं काच-कामलिभिरीश सितोऽपि शङ्खो
नो गृह्यते विविध-वर्ण-विपर्ययेण ॥१८॥

धर्मोपदेश-समये सविधानुभावाद्
आस्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः ।
अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि
किं वा विबोधमुपयाति न जीव-लोकः ॥१९॥

चित्रं विभो कथमवाङ्मुख-वृन्तमेव
विष्वक्पतत्यविरला सुर-पुष्प-वृष्टिः ।
त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि ॥२०॥

स्थाने गभीर-हृदयोदधि-सम्भवायाः
पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति ।
पीत्वा यतः परम-सम्मद-सङ्ग-भाजो
भव्या व्रजन्ति तरसाप्यजरामरत्वम् ॥२१॥

स्वामिन्सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो
मन्ये वदन्ति शुचयः सुर-चामरौघाः ।
येऽस्मै नतिं विदधते मुनि-पुङ्गवाय
ते नूनमूर्ध्व-गतयः खलु शुद्ध-भावाः ॥२२॥

श्यामं गभीर-गिरमुज्ज्वल-हेम-रत्न-

सिंहासनस्थमिह भव्य-शिखण्डिनस्त्वाम्।
आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चैः
चामीकराद्रि-शिरसीव नवाम्बुवाहम् ॥२३॥

उद्गच्छता तव शिति-द्युति-मण्डलेन
लुप्तच्छद-च्छविरशोक-तरुर्बभूव
सान्निध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग
नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि ॥२४॥

भो भोः प्रमादमवधूय भजध्वमेन-
मागत्य निर्वृति-पुरीं प्रति सार्थवाहम्।
एतन्निवेदयति देव जगत्त्रयाय
मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते ॥२५॥

उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ
तारान्वितो विधुरयं विहताधिकारः।
मुक्ता-कलाप-कलितोरु-सितातपत्र-
व्याजात्त्रिधा धृत-तनुर्ध्रुवमभ्युपेतः ॥२६॥

स्वेन प्रपूरित-जगत्त्रय-पिण्डितेन
कान्ति-प्रताप-यशसामिव संचयेन।
माणिक्य-हेम-रजत-प्रविनिर्मितेन
सालत्रयेण भगवन्नभितो विभासि ॥ २७ ॥

दिव्य-स्रजो जिन नमत्त्रिदशाधिपाना-
मुत्सृज्य रत्न-रचितानपि मौलि-बन्धान्।
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वापरत्र
त्वत्सङ्गमे सुमनसो न रमन्त एव ॥ २८ ॥

त्वं नाथ जन्म-जलधेर्विपराङ्मुखोऽपि
यत्तारयस्यसुमतो निज-पृष्ठ-लग्नान् ।
युक्तं हि पार्थिव-निपस्य सतस्तवैव
चित्रं विभो यदसि कर्म-विपाक-शून्यः ॥२९॥

विश्वेश्वरोऽपि जन-पालक दुर्गतस्त्वं
किं वाक्षर-प्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश ।
अज्ञानवत्यपि सदैव कथञ्चिदेव
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्व-विकास-हेतुः ॥३०॥

प्राग्भार-सम्भृत-नभांसि रजांसि रोषाद्
उत्थापितानि कमठेन शठेन यानि ।
छायापि तैस्तव न नाथ हता हताशो
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा ॥ ३१ ॥

यद्गर्जदूर्जित-घनौघमदभ्र-भीम-
भ्रश्यत्तडिन्मुसल-मासल-घोरधारम् ।
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तर-वारि दध्रे
तेनैव तस्य जिन दुस्तर-वारि कृत्यम् ॥३२॥

ध्वस्तोर्ध्व-केश-विकृताकृति-मर्त्य-मुण्ड-
प्रालम्बभृद्भयदवक्त्र-विनिर्यदग्निः ।
प्रेतव्रजः प्रति भवन्तमपीरितो यः
सोऽस्याभवत्प्रतिभवं भव-दुःख-हेतुः ॥ ३३ ॥

धन्यास्त एव भुवनाधिप ये त्रिसन्ध्य-
माराधयन्ति विधिवद्विधुतान्य-कृत्याः ।
भक्त्योल्लसत्पुलक-पक्ष्मल-देह-देशाः

पाद-द्वयं तव विभो भुवि जन्मभाजः ॥३४॥

अस्मिन्नपार-भव-वारि-निधौ मुनीश
मन्ये न मे श्रवण-गोचरतां गतोऽसि ।
आकर्णिते तु तव गोत्र-पवित्र-मन्त्रे
किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति ॥ ३५ ॥

जन्मान्तरेऽपि तव पाद-युगं न देव
मन्ये मया महितमीहित-दान-दक्षम् ।
तेनेह जन्मनि मुनीश पराभवानां
जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम् ॥ ३६ ॥

नूनं न मोह-तिमिरावृत-लोचनेन
पूर्वं विभो सकृदपि प्रविलोकितोऽसि ।
मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः
प्रोद्यत्प्रबन्ध-गतयः कथमन्यथैते ॥ ३७ ॥

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या ।
जातोऽस्मि तेन जन-बान्धव दुःखपात्रं
यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भाव-शून्याः ॥३८॥

त्वं नाथ दुःखि-जन-वत्सल हे शरण्य
कारुण्य-पुण्य-वसते वशिनां वरेण्य ।
भक्त्या नते मयि महेश दयां विधाय
दुःखाङ्कुरोद्दलन-तत्परतां विधेहि ॥३९॥

निःसङ्ख्य-सार-शरणं शरणं शरण्य-
मासाद्य सादित-रिपु प्रथितावदानम् ।

त्वत्पाद-पङ्कजमपि प्रणिधान-वन्ध्यो
वन्ध्योऽस्मि चेद्भुवन-पावन हा हतोऽस्मि ॥४०॥
देवेन्द्र-वन्द्य विदिताखिल-वस्तुसार
संसार-तारक विभो भुवनाधिनाथ ।
त्रायस्व देव करुणा-हृद मा पुनीहि
सीदन्तमद्य भयद-व्यसनाम्बु-राशेः ॥४१॥

यद्यस्ति नाथ भवदङ्घ्रि-सरोरुहाणां
भक्तेः फलं किमपि सन्तत-सञ्चितायाः ।
तन्मे त्वदेक-शरणस्य शरण्य भूयाः
स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि ॥४२॥
इत्थं समाहित-धियो विधिवज्जिनेन्द्र
सान्द्रोल्लसत्पुलक-कञ्चुकिताङ्गभागाः ।
त्वद्बिम्ब-निर्मल-मुखाम्बुज-बद्ध-लक्ष्या
ये संस्तवं तव विभो रचयन्ति भव्याः ॥४३॥

जन-नयन-'कुमुदचन्द्र'-प्रभास्वराः स्वर्ग-सम्पदो भुक्त्वा ।
ते विगलित-मल-निचया अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते ॥४४॥

स्वाध्याय

- स्वाध्याय आत्मशान्ति के लिये है, केवल ज्ञानार्जन के लिये नहीं। ज्ञानार्जन के लिये तो विद्याध्ययन है। स्वाध्याय तप है। इससे संवर और निर्जरा होती है।
- कल्याण के इच्छुक हो तो एक घण्टा नियम से स्वाध्याय में लगाओ।

—'वर्णी वाणी' से

विषापहारस्तोत्रम्

[श्रीधनञ्जय]

स्वात्म-स्थितः सर्व-गतः समस्त-व्यापार-वेदी विनिवृत्त-सङ्गः ।
प्रवृद्ध-कालोऽप्यजरो वरेण्यः पायादपायात्पुरुषः पुराणः ॥
परैरचिन्त्यं युग-भारमेकः स्तोतुं वहन्योगिभिरप्यशक्यः ।
स्तुत्योऽद्य मेऽसौ वृषभो न भानोः किमप्रवेशे विशति प्रदीपः॥
तत्याज शक्रः शकनाभिमानं नाहं त्यजामि स्तवनानुबन्धम् ।
स्वल्पेन बोधेन ततोऽधिकार्थं वातायनेनेव निरूपयामि ॥
त्वं विश्वदृश्वा सकलैरदृश्यो विद्वानशेषं निखिलैरवेद्यः ।
वक्तुं कियान्कीदृश इत्यशक्यः स्तुतिस्ततोऽशक्तिकथा तवास्तु ॥
व्यापीडितं बालमिवात्म-दोषैरुल्लाघतां लोकमवापिपस्त्वम् ।
हिताहितान्वेषणमान्द्यभाजः सर्वस्य जन्तोरसि बाल-वैद्यः ॥
दाता न हर्ता दिवसं विवस्वानद्यश्व इत्यच्युत दर्शिताशः ।
सव्याजमेवं गमयत्यशक्तः क्षणेन दत्सेऽभिमतं नताय ॥६॥
उपैति भक्त्या सुमुखः सुखानि त्वयि स्वभावाद्विमुखश्च दुःखम् ।
सदावदात-द्युतिरेकरूपस्तयोस्त्वमादर्श इवावभासि ॥७॥
अगाधताब्धेः स यतः पयोधिर्मेरोश्च तुङ्गा प्रकृतिः स यत्र ।
द्यावापृथिव्योः पृथुता तथैव व्याप त्वदीया भुवनान्तराणि ॥
तवानवस्था परमार्थ-तत्त्वं त्वया न गीतः पुनरागमश्च ।
दृष्टं विहाय त्वमदृष्टमैषीर्विरुद्ध-वृत्तोऽपि समञ्जसस्त्वम् ॥
स्मरः सुदग्धो भवतैव तस्मिन्नुद्धूलितात्मा यदि नाम शम्भुः ।
अशेत वृन्दोपहतोऽपि विष्णुः किं गृह्यते येन भवानजागः ॥

स नीरजाः स्यादपरोऽघवान्वा तद्दोषकीर्त्यैव न ते गुणित्वम् ।
स्वतोऽम्बुराशेर्महिमा न देव स्तोकापवादेन जलाशयस्य ॥
कर्मस्थितिं जन्तुरनेक-भूमिं नयत्यमु सा च परस्परस्य ।
त्वं नेतृ-भावं हि तयोर्भवाब्धौ जिनेन्द्र नौ-नाविकयोरिवाख्यः॥
सुखाय दुःखानि गुणाय दोषान्धर्माय पापानि समाचरन्ति ।
तैलाय बालाः सिकता-समूहं निपीडयन्ति स्फुटमत्वदीयाः ॥
विपापहारं मणिमौषधानि मन्त्रं समुद्दिश्य रसायनं च ।
भ्राम्यन्त्यहो न त्वमिति स्मरन्ति पर्याय-नामानि तवैव तानि ॥
चित्ते न किञ्चिन्कृतवानसि त्वं देवः कृतश्चेतसि येन सर्वम् ।
हस्ते कृतं तेन जगद्विचित्रं सुखेन जीवत्यपि चित्तबाह्यः ॥
त्रिकाल-तत्त्व त्वमवैस्त्रिलोकी-स्वामीति संख्या-नियतेरमीषाम् ।
बोधाधिपत्यं प्रति नाभविष्यंस्तेऽन्येऽपि चेद्व्याप्स्यदमूनपीदम्॥
नाकस्य पत्युः परिकम रम्यं नागम्यरूपस्य तवोपकारि ।
तस्यैव हेतुः स्वसुखस्य भानोरुद्बिभ्रतच्छत्रमिवादरेण ॥
क्वोपेक्षकस्त्वं क्व सुखोपदेशः स चेत्किमिच्छा-प्रतिकूल-वादः ।
क्वासौ क्व वा सर्वजगत्प्रियत्व तन्नो यथातथ्यमवेविचं ते ॥
तुङ्गात्फलं यत्तदकिञ्चनाच्च प्राप्यं समृद्धान्न धनेश्वरादेः ।
निरम्भसोऽप्युच्चतमादिवाद्रेर्नैकापि निर्याति धुनी पयोधेः ॥
त्रैलोक्य-सेवा-नियमाय दण्डं दध्रे यदिन्द्रो विनयेन तस्य ।
तत्प्रातिहार्यं भवतः कुतस्त्यं तत्कर्म-योगाद्यदि वा तवास्तु ॥
श्रिया परं पश्यति साधु निःस्वः श्रीमान्न कश्चित्कृपणं त्वदन्यः ।
यथा प्रकाश-स्थितमन्धकारस्थायीक्षतेऽसौ न तथा तमःस्थम्॥

स्वप्नादिनिःश्वास-निमेषभाजि प्रत्यक्षमात्मानुभवेऽपि मूढः ।
किं चाखिल-ज्ञेय-विवर्ति-बोधस्वरूपमध्यक्षमवैति लोकः ॥
तस्यात्मजस्तस्य पितेति देव त्वां येऽवगायन्ति कुलं प्रकाश्य ।
तेऽद्यापि नन्वाश्मनमित्यवश्यं पाणौ कृतं हेम पुनस्त्यजन्ति ॥

दत्तस्त्रिलोक्यां पटहोऽभिभूताः सुरासुरास्तस्य महान् स लाभः ।
मोहस्य मोह त्वयि को विरोद्धुर्मूलस्य नाशो बलवद्विरोधः ॥
मार्गस्त्वयैको ददृशे विमुक्तेश्चतुर्गतीनां गहनं परेण ।
सर्वं मया दृष्टमिति स्मयेन त्वं मा कदाचिद्भुजमालुलोक ॥

स्वर्भानुरर्कस्य हविर्भुजोऽम्भः कल्पान्तवातोऽम्बुनिधेर्विघातः ।
संसार-भोगस्य वियोग-भावो विपक्ष-पूर्वाभ्युदयास्त्वदन्ये ॥
अजानतस्त्वां नमतः फलं यत्तज्जानतोऽन्यं न तु देवतेति ।
हरिन्मणिं काचधिया दधानस्तं तस्य बुद्ध्या वहतो न रिक्तः ॥

प्रशस्त-वाचश्चतुराः कषायैर्दग्धस्य देव-व्यवहारमाहुः ।
गतस्य दीपस्य हि नन्दितत्वं दृष्टं कपालस्य च मङ्गलत्वम् ॥
नानार्थमेकार्थमदस्त्वदुक्तं हितं वचस्ते निशमय्य वक्तुः ।
निर्दोषतां के न विभावयन्ति ज्वरेण मुक्तः सुगमः स्वरेण ॥

न क्वापि वाञ्छा ववृते च वाक्ते काले क्वचित्कोऽपि तथा नियोगः ।
न पूरयाम्यम्बुधिमित्युदंशुः स्वयं हि शीतद्युतिरभ्युदेति ॥
गुणा गभीराः परमाः प्रसन्ना बहु-प्रकारा बहवस्तवेति ।
दृष्टोऽयमन्तः स्तवने न तेषां गुणो गुणानां किमतः परोऽस्ति ॥

स्तुत्या परं नाभिमत हि भक्त्या स्मृत्या प्रणत्या च ततो भजामि।
स्मरामि देवं प्रणमामि नित्य केनाप्युपायेन फल हि माध्यम् ॥
ततस्त्रिलोकी-नगराधिदेवं नित्यं पर ज्योतिरनन्त-शक्तिम् ।
अपुण्य-पापं पर-पुण्य-हेतु नमाम्यहं वन्द्यमवन्दितारम् ॥
अशब्दमस्पर्शमरूप-गन्धं त्वा नीरस तद्विपयावबोधम् ।
सर्वस्य मातारममेयमन्यैर्जिनेन्द्रमस्मार्यमनुस्मरामि ॥
अगाधमन्यैर्मनसाप्यलङ्घ्यं निष्किञ्चन प्रार्थितमर्थवद्भिः ।
विश्वस्य पार तमदृष्टपार पतिं जनाना शरणं व्रजामि ॥
त्रैलोक्य-दीक्षा-गुरवे नमस्ते यो वर्धमानोऽपि निजोन्नतोऽभूत् ।
प्राग्गण्डशैलः पुनरद्रि-कल्पः पश्चान्न मेरुः कुल-पर्वतोऽभूत् ॥
स्वयंप्रकाशस्य दिवा निशा वा न बाध्यता यस्य न बाधकत्वम् ।
न लाघवं गौरवमेकरूपं वन्दे विभुं कालकलामतीतम् ॥
इति स्तुतिं देव विधाय दैन्याद्वरं न याचे त्वमुपेक्षकोऽसि ।
छायातरुं संश्रयतः स्वतः स्यात्कश्छायया याचितयात्मलाभः ॥
अथास्ति दित्सा यदि वोपरोधस्त्वय्येव सक्तां दिश भक्ति-बुद्धिम्
करिष्यते देव तथा कृपां मे को वात्मपोष्ये सुमुखो न सूरिः ॥
वितरति विहिता यथाकथञ्चिज्जिन विनताय मनीषितानि भक्तिः
त्वयि नुति-विषया पुनर्विशेषाद्दिशति सुखानि यशो 'धनं जयं' च ॥

जिनचतुर्विंशतिका

[श्री भूपाल कवि]

श्रीलीलायतनं महो-कुल-गृहं कीर्ति-प्रमोदास्पदं
वाग्देवी-रति-केतनं जय-रमा-क्रीडा-निधानं महत् ।
स स्यात्सर्व-महोत्सवैक-भवनं यः प्रार्थितार्थ-प्रदं
प्रातः पश्यति कल्प-पादप-दल-च्छायं जिनांघ्रि-द्वयम् ॥

शान्तं वपुः श्रवण-हारि वचश्चरित्रं
सर्वोपकारि तव देव ततः श्रुतज्ञाः ।
संसार-मारव-महास्थल-रुन्द-सान्द्र-
च्छाया-महीरुह भवन्तमुपाश्रयन्ते ॥२॥

स्वामिन्नद्य विनिर्गतोऽस्मि जननी-गर्भान्ध-कूपोदरा-
दद्योद्घाटित-दृष्टिरस्मि फलवज्जन्मास्मि चाद्य स्फुटम् ।
त्वामद्राक्षमहं यदक्षय-पदानन्दाय लोकत्रयी-
नेत्रेन्दीवर-काननेन्दुममृत-स्यन्दि-प्रभा-चन्द्रिकम् ॥३॥

निःशेष-त्रिदशेन्द्र-शेखर-शिखा-रत्न-प्रदीपावली-
सान्द्रीभूत-मृगेन्द्र-विष्टर-तटी-माणिक्य-दीपावलिः ।
क्वेयं श्रीः क्व च निःस्पृहत्वमिदमित्यूहातिगस्त्वादृशः
सर्व-ज्ञान-दृशश्चरित्र-महिमा लोकेश लोकोत्तरः ॥४॥

राज्यं शासनकारि-नाकपति यत्त्यक्तं तृणावज्ञया
हेला-निर्दलित-त्रिलोक-महिमा यन्मोह-मल्लो जितः ।
लोकालोकमपि स्वबोध-मुकुरस्यान्तः कृतं
मैपाश्चर्य-परम्परा जिनवर

दानं ज्ञान-धनाय दत्तमसकृत्पात्राय सद्वृत्तये
चीर्णान्युग्र-तपांसि तेन सुचिरं पूजाश्च वह्वयः कृताः ।
शीलाना निचयः सहामलगुणैः सर्वः समासादितो
दृष्टस्त्वं जिन येन दृष्टि-सुभगः श्रद्धा-परेण क्षणम् ॥६॥
प्रज्ञा-पारमितः स एव भगवान्पारं स एव श्रुत-
स्कन्धाब्धेर्गुण-रत्न-भूषण इति श्लाघ्यः स एव ध्रुवम् ।
नीयन्ते जिन येन कर्ण-हृदयालङ्कारतां त्वद्गुणाः
संसाराहि-विषापहार-मणयस्त्रैलोक्य-चूडामणे ॥७॥
जयति दिविज-वृन्दान्दोलितैरिन्दुरोचिः
निचय-रुचिभिरुच्चैश्चामरैर्वीज्यमानः ।
जिनपतिरनुरज्यन्मुक्ति-साम्राज्य-लक्ष्मी-
युवति-नव-कटाक्ष-क्षेप-लीलां दधानैः ॥८॥
देवः श्वेतातपत्र-त्रय-चमरिरुहाशोक-भाश्चक्र-भाषा-
पुष्पौघासार-सिंहासन-सुरपटहैरष्टभिः प्रातिहार्यैः ।
साश्चर्यैर्भ्राजमानः सुर-मनुज-सभाम्भोजिनी-भानुमाली
पायान्नः पादपीठीकृत-सकल-जगत्पाल-मौलिर्जिनेन्द्रः ॥
नृत्यत्स्वर्दन्ति-दन्ताम्बुरुह-वन-नटन्नाक-नारी-निकायः
सद्यस्त्रैलोक्य-यात्रोत्सव-कर-निनदातोद्यमाद्यन्निलिम्पः ।
हस्ताम्भोजात-लीला-विनिहित सुमनोदाम-रम्यामर-स्त्री-
काम्यः कल्याण-पूजाविधिषु विजयते देव देवागमस्ते ॥
चक्षुष्मानहमेव देव भुवने नेत्रामृत-स्यन्दिनं
त्वद्वक्त्रेन्दुमतिप्रसाद-सुभगैस्तेजोभिरुद्भासितम् ।

येनालोकयता मयानति-चिराच्चनु कृतार्थीकृतं
दृष्टव्यावधि-वीक्षण-व्यतिकर-व्याजृम्भमाणोत्सवम् ॥

कन्तोः सकान्तमपि मल्लमवैति कश्चिन्-
मुग्धो मुकुन्दमरविन्दजमिन्दुमौलिम् ।
मोघीकृत-त्रिदश-योषिदपाङ्गपातः
तस्य त्वमेव विजयी जिनराज मल्लः ॥१२॥

किसलयितमनल्पं त्वद्विलोकाभिलाषात्
कुसुमितमतिसान्द्रं त्वत्समीप-प्रयाणात् ।
मम फलितममन्दं त्वन्मुखेन्दोरिदानीं
नयन-पथमवाप्तादेव पुण्यद्रुमेण ॥१३॥

त्रिभुवन-वन-पुष्प्यत्पुष्प-कोदण्ड-दर्प-
प्रसर-दव-नवाम्भो-मुक्ति-सूक्ति-प्रसूतिः ।
स जयति जिनराज-व्रात-जीमूत-संघः
शतमख-शिखि-नृत्यारम्भ-निर्वन्ध-बन्धुः ॥१४॥

भूपाल-स्वर्ग-पाल-प्रमुख-नर-सुर-श्रेणि-नेत्रालिमाला-
लीला-चैत्यस्य चैत्यालयमखिलजगत्कौमुदीन्दोर्जिनस्य ।
उत्तंसीभूत-सेवाञ्जलि-पुट-नलिनी-कुड्मलास्त्रिः परीत्य
श्रीपाद-च्छाययापस्थितभवदवथुः संश्रितोऽस्मीव मुक्तिम् ॥

देव त्वदंघ्रि-नख-मण्डल-दर्पणेऽस्मिन्
अर्घ्ये निसर्ग-रुचिरे चिर-दृष्ट-वक्त्रः ।

श्रीकीर्ति-कान्ति-धृति-सङ्गम-कारणानि
भव्यो न कानि लभते शुभ-मङ्गलानि ॥१६॥
जयति सुर-नरेन्द्र-श्रीसुधा-निर्झरिण्याः
कुलधरणि-धरोऽयं जैन-चैत्याभिरामः ।
प्रविपुल-फल-धर्मानोकहाग्र-प्रवाल-
प्रसर-शिखर-शुम्भत्केतनः श्रीनिकेतः ॥१७॥
विनमदमरकान्ता-कुन्तलाक्रान्त-कान्ति-
स्फुरित-नख-मयूख-द्योतिताशान्तरालः ।
दिविज-मनुज-राज-व्रात-पूज्य-क्रमाब्जो
जयति विजित-कर्माराति-जालो जिनेन्द्रः ॥१८॥
सुप्तोत्थितेन सुमुखेन सुमङ्गलाय
द्रष्टव्यमस्ति यदि मङ्गलमेव वस्तु ।
अन्येन किं तदिह नाथ तवैव वक्त्रं
त्रैलोक्य-मङ्गल-निकेतनमीक्षणीयम् ॥१९॥
त्वं धर्मोदय-तापसाश्रम-शुकस्त्वं काव्य-बन्ध-क्रम-
क्रीडानन्दन-कोकिलस्त्वमुचितः श्रीमल्लिका-षट्पदः ।
त्वं पुन्नाग-कथारविन्द-सरसी-हंसस्त्वमुत्तंसकैः
कैर्भूपाल न धार्यसे गुण-मणि-स्रङ्मालिभिर्मौलिभिः ॥
शिव-सुखमजर-श्री-सङ्गमं चाभिलष्य
स्वमभिनियमयन्ति क्लेश-पाशेन केचित् ।
वयमिह तु वचस्ते भूपतेर्भावयन्तः
तदुभयमपि शश्वल्लीलया निर्विशामः ॥२१॥

देवेन्द्रास्तव मज्जनानि विदधुर्देवाङ्गना मङ्गला-
न्यापेठुः शरदिन्दुनिर्मलयशो गन्धर्वदेवा जगुः ।
शेषाश्चापि यथानियोगमखिलाः सेवां सुराश्चक्रिरे
तत्किं देव वयं विदध्म इति नश्चित्तं तु दोलायते ॥
देव त्वज्जननाभिषेकसमये रोमाञ्च-सत्कञ्चुकैः
देवेन्द्रैर्यदनर्ति नर्तनविधौ लब्ध-प्रभावैः स्फुटम् ।
दिग्वाद्यान्नसुरसुन्दरीकुच-तट प्रान्तावनद्धोत्तम-
प्रेङ्खद्वल्लकि-नाद झंकृतमहो तत्केन संवर्ण्यते ॥२३॥
देव त्वत्प्रतिबिम्बमम्बुजदलस्मेरेक्षणं पश्यतां
यत्रास्माकमहो महोत्सवरसो दृष्टेरियान्वर्तते ।
साक्षात्तत्र भवन्तमीक्षितवतां कल्याण-काले तदा
देवानामनिमेषलोचनतया वृत्तः स किं वर्ण्यते ॥२४॥
दृष्टं धाम रसायनस्य महतां दृष्टं निधीनां पदं
दृष्टं सिद्धरसस्य सद्म सदनं दृष्टं च चिन्तामणेः ।
किं दृष्टैरथवानुषङ्गिक-फलैरेभिर्मयाद्य ध्रुवं
दृष्टं मुक्ति विवाह मङ्गल गृह दृष्टे जिन-श्री-गृहे ॥२५॥
दृष्टस्त्वं जिनराज चन्द्र विकसद्भूपेन्द्र नेत्रोत्पले
स्नातं त्वन्नुति-चन्द्रिकाम्भसि भवद्विद्वच्चकोरोत्सवे ।
नीतश्चाद्य निदाघजः क्लमभरः शान्तिं मया गम्यते
देव त्वद्गत चेतसैव भवतो भूयात्पुनर्दर्शनम् ॥२६॥

भावनाद्वात्रिंशतिका

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम् ।
माध्यस्थ्य-भावं विपरीतवृत्तौ सदा ममात्मा विदधातु देव ॥

शरीरतः कर्तुमनन्तशक्तिं विभिन्नमात्मानमपास्त-दोषम् ।
जिनेन्द्र कोषादिव खड्गयष्टिं तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः ॥

दुःखे सुखे वैरिणि बन्धु-वर्गे योगे वियोगे भवने वने वा ।
निराकृताशेष-ममत्व-बुद्धेः समं मनो मेऽस्तु सदापि नाथ ॥

मुनीश लीनाविव कीलिताविव
स्थिरौ निखाताविव बिम्बिताविव ।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा
तमोधुनानौ हृदि दीपकाविव ॥ ४ ॥

एकेन्द्रियाद्या यदि देव देहिनः प्रमादतः संचरता इतस्ततः ।
क्षता विभिन्ना मिलिता निपीडितास्तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा ॥

विमुक्ति-मार्ग-प्रतिकूल-वर्तिना मया कषायाक्ष-वशेन दुर्धिया ।
चारित्र-शुद्धेर्यदकारि लोपनं तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ॥

विनिन्दनालोचन-गर्हणैरहं मनो-वचः-काय-कषाय-निर्मितम् ।
निहन्मि पापं भव-दुःख-कारणं भिषग्विषं मन्त्र-गुणैरिवाखिलम् ॥

अतिक्रमं यद्विमतेर्व्यतिक्रमं जिनातिचारं सुचरित्र-कर्मणः ।
व्यधामनाचारमपि प्रमादतः प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये ॥

क्षतिं मनः-शुद्धि-विधेरतिक्रमं व्यतिक्रमं शील-वृतेर्विलंघनम् ।
प्रभोऽचितारं विषयेषु वर्तनं वदन्त्यनाचारमिहातिसक्तताम् ॥
यदर्थ-मात्रा-पदवाक्य-हीनं मया प्रमादाद्यदि किञ्चनोक्तम् ।
तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी सरस्वती केवलबोध-लब्धिम् ॥

बोधिः समाधिः परिणाम-शुद्धिः
स्वात्मोपलब्धिः शिव-सौख्य-सिद्धिः ।
चिन्तामणिं चिन्तित-वस्तु-दाने
त्वां वन्द्यमानस्य ममास्तु देवि ॥११॥

यः स्मर्यते सर्व-मुनीन्द्र-वृन्दैर्यः स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रैः ।
यो गीयते वेद-पुराण-शास्त्रैः स देव-देवो हृदये ममास्ताम् ॥

यो दर्शन-ज्ञान-सुख-स्वभावः समस्त-संसार-विकार-बाह्यः ।
समाधिगम्यः परमात्म-संज्ञः स देव-देवो हृदये ममास्ताम् ॥

निषूदते यो भव-दुख-जालं निरीक्षते यो जगदन्तरालम् ।
योऽन्तर्गतो योगि-निरीक्षणीयः स देव-देवो हृदये ममास्ताम् ॥

विमुक्ति-मार्ग-प्रतिपादको यो यो जन्म-मृत्यु-व्यसनाद्यतीतः ।
त्रिलोक-लोकी विकलोऽकलङ्कः स देव-देवो हृदये ममास्ताम् ॥

क्रोडीकृताशेष-शरीरि-वर्गा रागादयो यस्य न सन्ति दोषाः ।
निरिन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपायः स देव-देवो हृदये ममास्ताम् ॥

यो व्यापको विश्व-जनीनवृत्तेः सिद्धो विबुद्धो धुत-कर्म-बन्धः ।
ध्यातो धुनीते सकलं विकारं स देव-देवो हृदये ममास्ताम् ॥

न स्पृश्यते कर्म-कलङ्क-दोषैः यो ध्वान्त-संघैरिव तिग्म-रश्मिः ।
निरञ्जनं नित्यमनेकमेकं तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥

विभासते यत्र मरीचिमाली न विद्यमाने भुवनावभासि ।
स्वात्म-स्थितं बोधमय-प्रकाशं तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥

विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तम् ।
शुद्धं शिवं शान्तमनाद्यनन्तं तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥

येन क्षता मन्मथ-मान-मूर्च्छा-विषाद-निद्रा-भय-शोक-चिन्ताः ।
क्षयोऽनलेनेव तरु-प्रपञ्चस्तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥

न संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी विधानतो नो फलको विनिर्मितः
यतो निरस्ताक्ष-कषाय-विद्विषः सुधीभिरात्मैव सुनिर्मितो मतः ॥

न संस्तरो भद्र समाधि-साधनं न लोक-पूजा न च संघ-मेलनम् ।
यतस्ततोऽध्यात्म-रतो भवानिशं विमुच्य सर्वामपि बाह्य-वासनाम्

न सन्ति बाह्या मम केचनार्था भवामि तेषां न कदाचनाहम् ।
इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य बाह्यं स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र मुक्त्यै ॥

आत्मानमात्मन्यवलोक्यमानस्त्वं दर्शन-ज्ञानमयो विशुद्धः ।
एकाग्रचित्तः खलु यत्र तत्र स्थितोऽपि साधुर्लभते समाधिम् ॥

एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा विनिर्मलः साधिगम-स्वभावः
बहिर्भवाः सन्त्यपरे समस्ता न शाश्वताः कर्म-भवाः स्वकीयाः ॥

यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्द्धं तस्यास्ति किं पुत्र-कलत्र-मित्रैः ।
पृथक्कृते चर्मणि रोम-कूपाः कुतो हि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये ॥

संयोगतो दुःखमनेकभेदं यतोऽश्नुते जन्म-वने शरीरी।
ततस्त्रिधासौ परिवर्जनीयो यियासुना निर्वृतिमात्मनीनाम् ॥

सर्वं निराकृत्य विकल्प-जालं संसार-कान्तार-निपात-हेतुम्।
विविक्तमात्मानमवेक्ष्यमाणो निलीयसे त्वं परमात्म-तत्त्वे ॥

स्वयंकृतं कर्म यदात्मना पुरा फलं तदीयं लभते शुभाशुभम्।
परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं स्वयंकृतं कर्म निरर्थकं तदा ॥

निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो न कोऽपि कस्यापि ददाति किञ्चन
विचारयन्नेवमनन्यमानसः परो ददातीति विमुच्य शेमुषीम् ॥

यैः परमात्माऽमितगति-वन्द्यः सर्व-विविक्तो भृशमनवद्यः।
शश्वदधीतो मनसि लभन्ते मुक्ति-निकेतं विभव-वरं ते ॥

इति द्वात्रिंशतिवृत्तैः परमात्मानमीक्षते।
योऽनन्यगत-चेतस्को यात्यसौ पदमव्ययम् ॥

कायबल

- जिनका कायबल श्रेष्ठ है, वे ही मोक्ष पथ के पथिक बन सकते हैं। इस प्रकार जब मोक्षमार्ग में भी कायबल की श्रेष्ठता आवश्यक है, तब सांसारिक कार्य इसके बिना कैसे हो सकते हैं।
- प्राचीन महापुरुषों ने जो कठिन से कठिन आपत्तियाँ और उपसर्ग सहन किये, वे कायबल की श्रेष्ठता पर ही किये। अत शरीर को पुष्ट रखना आवश्यक है, किन्तु इसी के पोषण में सब समय न लगाया जावे। दूसरे की रक्षा स्वात्म रक्षा की ओर दृष्टि रख कर ही की जाती है, अपने आप को भूल कर नहीं।

—'वर्णी वाणी' से

श्रीजिनसहस्रनामस्तोत्रम्

[भगवज्जिनसेनाचार्य]

स्वयम्भुवे नमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि ।
स्वात्मनैव तथोद्भूतवृत्तयेऽचिन्त्यवृत्तये ॥ १ ॥
नमस्ते जगता पत्ये लक्ष्मीभर्त्रे नमोऽस्तु ते ।
विदांवर नमस्तुभ्यं नमस्ते वदतांवर ॥ २ ॥
कर्मशत्रुहणं देवमामनन्ति मनीषिणः ।
त्वामानमत्सुरेण्मौलि-भा-मालाभ्यर्चित-क्रमम् ॥३ ॥
ध्यान-दुर्घण-निर्भिन्न-घन-घाति-महातरुः ।
अनन्त–भव–सन्तान–जयादासीरनन्तजित् ॥ ४ ॥
त्रैलोक्य-निर्जयावाप्त-दुर्दर्प्पमतिदुर्जयम् ।
मृत्युराजं विजित्यासीज्जिन मृत्युंजयो भवान् ॥ ५ ॥
विधुताशेष-संसार-बन्धनो भव्य-बान्धवः ।
त्रिपुरारिस्त्वमीशासि जन्म-मृत्युजरान्तकृत् ॥ ६ ॥
त्रिकाल-विजयाशेष-तत्त्वभेदात् त्रिधोत्थितम् ।
केवलाख्य दधच्चक्षुस्त्रिनेत्रोऽसि त्वमीशिता ॥ ७ ॥
त्वामन्धकान्तकं प्राहुर्मोहान्धासुर-मर्दनात् ।
अर्द्धं ते नारयो यस्मादर्धनारीश्वरोऽस्यतः ॥ ८ ॥
शिवः शिव पदाध्यासाद् दुरितारि-हरो हरः ।
शङ्करः कृतशं लोके शम्भवस्त्वं भवन्सुखे ॥ ९ ॥
वृषभोऽसि जगज्ज्येष्ठ. पुरुः पुरु-गुणोदयैः ।
नाभेयो नाभि-सम्भूतेरिक्ष्वाकु-कुल-नन्दनः ॥ १० ॥
त्वमेकः पुरुषस्कंधस्त्वं द्वे लोकस्य लोचने ।
त्वं त्रिधा बुद्ध-सन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रिज्ञान धारकः ॥११॥

चतुःशरण-माङ्गल्यमूर्तिस्त्व चतुरस्रधीः ।
पञ्च-ब्रह्ममयो देव पावनस्त्व पुनीहि माम् ॥१२॥
स्वर्गावतरणे तुभ्यं सद्योजातात्मने नमः ।
जन्माभिषेक-वामाय वामदेव नमोऽस्तु ते ॥१३॥
सन्निष्क्रान्तावघोराय पर प्रशममीयुषे ।
केवलज्ञान-संसिद्धावीशानाय नमोऽस्तु ते ॥१४॥
पुरस्तत्पुरुषत्वेन विमुक्त-पद-भागिने ।
नमस्तत्पुरुषावस्थां भाविनीं तेऽद्य बिभ्रते ॥१५॥
ज्ञानावरणनिर्ह्रासान्नमस्तेऽनन्तचक्षुषे ।
दर्शनावरणोच्छेदान्नमस्ते विश्वदृश्वने ॥१६॥
नमो दर्शनमोहघ्ने क्षायिकामलदृष्टये ।
नमश्चारित्रमोहघ्ने विरागाय महौजसे ॥१७॥
नमस्तेऽनन्त-वीर्याय नमोऽनन्त-सुखात्मने ।
नमस्तेऽनन्त-लोकाय लोकालोकावलोकिने ॥१८॥
नमस्तेऽनन्त-दानाय नमस्तेऽनन्त-लब्धये ।
नमस्तेऽनन्त-भोगाय नमोऽनन्तोपभोगिने ॥१९॥
नमः परम-योगाय नमस्तुभ्यमयोनये ।
नमः परम-पूताय नमस्ते परमर्षये ॥२०॥
नमः परम-विद्याय नमः पर-मत-च्छिदे ।
नमः परम-तत्त्वाय नमस्ते परमात्मने ॥२१॥
नमः परमरूपाय नमः परम-तेजसे ।
नमः परम-मार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥२२॥
परमर्द्धिजुषे धाम्ने परम-ज्योतिषे नमः ।
नमः पारेतमःप्राप्तधाम्ने परतरात्मने ॥२३॥
नमः क्षीण-कलङ्काय क्षीण-बन्ध नमोऽस्तु ते ।

नमस्ते क्षीण-मोहाय क्षीण-दोषाय ते नमः ॥२४॥
नमः सुगतये तुभ्यं शोभनां गतिमीयुषे ।
नमस्तेऽतीन्द्रिय-ज्ञान-सुखायानिन्द्रियात्मने ॥२५॥
काय-बन्धननिर्मोक्षादकायाय नमोऽस्तु ते ।
नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामधियोगिने ॥२६॥
अवेदाय नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः ।
नमः परम-योगीन्द्र-वन्दिताङ्घ्रि-द्वयाय ते ॥२७॥
नमः परम-विज्ञान नमः परम-संयम ।
नमः परमदृग्दृष्ट-परमार्थाय ते नमः ॥२८॥
नमस्तुभ्यमलेश्याय शुक्ललेश्यांशक-स्पृशे ।
नमो भव्येतरावस्थाव्यतीताय विमोक्षणे ॥२९॥
सञ्ज्यसंज्ञिद्वयावस्थाव्यतिरिक्तामलात्मने ।
नमस्ते वीतसंज्ञाय नमः क्षायिकदृष्टये ॥३०॥
अनाहाराय तृप्ताय नमः परमभाजुषे ।
व्यतीताशेषदोषाय भवाब्धेः पारमीयुषे ॥ ३१ ॥
अजराय नमस्तुभ्यं नमस्तेऽतीतजन्मने ।
अमृत्यवे नमस्तुभ्यमचलायाक्षरात्मने ॥ ३२ ॥
अलमास्तां गुणस्तोत्रमनन्तास्तावका गुणाः ।
त्वां नामस्मृतिमात्रेण पर्युपासिसिषामहे ॥ ३३ ॥
एवं स्तुत्वा जिनं देवं भक्त्या परमया सुधीः
पठेदष्टोत्तरं नाम्नां सहस्रं पाप-शान्तये ॥ ३४ ॥

इति प्रस्तावना

प्रसिद्धाष्ट-सहस्रेद्धलक्षणं त्वां गिरां पतिम् ।
नाम्नामष्टसहस्रेण तोष्टुमोऽभीष्टसिद्धये ॥ १ ॥
श्रीमान्स्वयम्भूर्वृषभः शंभवः शंभुरात्मभूः ।
स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥ २ ॥

विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षर. ।
विश्वविद्विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनीश्वर ॥ ३ ॥
विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचन. ।
विश्वव्यापी विधिर्वेधा. शाश्वतो विश्वतोमुख· ॥४॥
विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वर· ।
विश्वदृक् विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वर· ॥ ५ ॥
जिनो जिष्णुरमेयात्मा विश्वरीशो जगत्पति· ।
अनन्तजिदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरबन्धनः ॥ ६ ॥
युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्ममयः शिवः ।
परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ॥ ७ ॥
स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः ।
मोहारिविजयी जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ॥ ८ ॥
प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगीश्वरार्चितः ।
ब्रह्मविद् ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वर· ॥ ९ ॥
शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः ।
सिद्धः सिद्धान्तविद् ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥१०॥
सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः ।
प्रभूष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ॥११॥
विभावसुरसम्भूष्णुः स्वयम्भूष्णुः पुरातनः ।
परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥१२॥

इति श्रीमदादिशतम् ॥ १ ॥

[प्रत्येक शतकके अन्तमे उदकचदनतदुल आदि श्लोक पढकर अर्घ चढाना चाहिये ।]

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासन· ।
पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥ १ ॥

श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाः शुचिः ।
तीर्थकृत्केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥ २ ॥
अनन्तदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयम्बुद्धः प्रजापतिः ।
मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥ ३ ॥
निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिरनामयः ।
अचलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥ ४ ॥
अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् ।
शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ॥ ५ ॥
वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः ।
वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभाङ्को वृषोद्भवः ॥ ६ ॥
हिरण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद् भूतभावनः ।
प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥ ७ ॥
हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोऽभवः ।
स्वयंप्रभः प्रभूतात्मा भूतनाथो जगत्पतिः ॥ ८ ॥
सर्वादिः सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ।
सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥ ९ ॥
सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुत् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः ।
विश्रुतः विश्वतः पादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ॥१०॥
सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
भूतभव्यभवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ॥ ११ ॥

इति दिव्यादिशतम् ॥ २ ॥ अर्घम् ।

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठधीः ।
स्थेष्ठो गरिष्ठो बंहिष्ठः श्रेष्ठोऽणिष्ठो गरिष्ठगीः ॥१॥
विश्वभृद्विश्वसृट् विश्वेट् विश्वसुग्विश्वनायकः
विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितान्तकः ॥ २ ॥

विभवो विभयो वीरो विशोको विजरो जरन् ।
विरागो विरतोऽसङ्गो विविक्तो वीतमत्सरः ॥ ३ ॥
विनयेजनताबन्धुर्विलीनाशेषकल्मषः ।
वियोगो योगविद्विद्वान्विधाता सुविधिः सुधीः ॥४॥
क्षान्तिभाक्पृथिवीमूर्तिः शान्तिभाक् सलिलात्मकः ।
वायुमूर्तिरसङ्गात्मा वह्निमूर्तिरधर्मधुक् ॥ ५ ॥
सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सुत्रामपूजितः ।
ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञाङ्गममृतं हविः ॥ ६ ॥
व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचलः ।
सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ॥ ७ ॥
मन्त्रविन्मन्त्रकृन्मन्त्री मन्त्रमूर्तिरनन्तगः ।
स्वतन्त्रस्तन्त्रकृत्स्वन्तः कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥८॥
कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृतक्रतुः ।
नित्यो मृत्युञ्जयो मृत्युरमृतात्माऽमृतोद्भवः ॥ ९ ॥
ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्मसम्भवः ।
महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेट् महाब्रह्मपदेश्वरः ॥१०॥
सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्मदमप्रभुः ।
प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुराणपुरुषोत्तमः ॥११॥

इति स्थविष्ठादिशतम् ॥ ३ ॥ अर्घम् ।

महाशोकध्वजोऽशोकः कः स्रष्टा पद्मविष्टरः ।
पद्मेशः पद्मसम्भूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ॥ १ ॥
पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः ।
स्तवनार्हो हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रियः ॥ २ ॥
गणाधिपो गणज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः ।
गुणाकरो गुणाम्भोधिर्गुणज्ञो गुणनायकः ॥ ३ ॥

गुणादरी गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्यगीर्गुणः।
शरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्यः पुण्यनायकः ॥ ४ ॥
अगण्यः पुण्यधीर्गुण्यः पुण्यकृत्पुण्यशासनः।
धर्मारामो गुणग्रामः पुण्यापुण्यनिरोधकः ॥ ५ ॥
पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीतकल्मषः।
निर्द्वन्द्वो निर्मदः शान्तो निर्मोहो निरुपद्रवः ॥ ६ ॥
निर्निमेषो निराहारो निष्क्रियो निरुपप्लवः।
निष्कलङ्को निरस्तैना निर्धूतांगो निरास्रवः ॥ ७ ॥
विशालो विपुलज्योतिरतुलोऽचिन्त्यवैभवः।
सुसंवृतः सुगुप्तात्मा सुवृत् सुनयतत्त्ववित् ॥ ८ ॥
एकविद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः।
धीशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतान्तकः ॥९॥
पिता पितामहः पाता पवित्रः पावनो गतिः।
त्राता भिषग्वरो वर्यो वरदः परमः पुमान् ॥१०॥
कविः पुराणपुरुषो वर्षीयान्वृषभः पुरुः।
प्रतिष्ठाप्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामहः ॥११॥

इति महाशोकध्वजादिशतम् ॥ ४ ॥ अर्घम् ।

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो लक्षण्यः शुभलक्षणः।
निरक्षः पुण्डरीकाक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥ १ ॥
सिद्धिदः सिद्धसङ्कल्पः सिद्धात्मा सिद्धसाधनः।
बुद्धबोध्यो महाबोधिर्वर्धमानो महर्द्धिकः ॥ २ ॥
वेदाङ्गो वेदविद्वेद्यो जातरूपो विदांवरः।
वेदवेद्यः स्वसंवेद्यो विवेदो वदतांवरः ॥ ३ ॥
अनादिनिधनोऽव्यक्तो व्यक्तवाग्व्यक्तशासनः।
युगादिकृद्युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ॥ ४ ॥

अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो महेन्द्रोऽतीन्द्रियार्थदृक्
अनिन्द्रियोऽहमिन्द्राच्यों महेन्द्रमहितो महान् ॥५॥
उद्भवः कारणं कर्ता पारगो भवतारकः ।
अग्राह्यो गहनं गुह्यं परार्घ्यः परमेश्वरः ॥ ६ ॥
अनन्तर्द्धिरमेयर्द्धिरचिन्त्यर्द्धिः समग्रधीः ।
प्राग्रयः प्राग्रहरोऽभ्यग्रः प्रत्यग्रोऽग्रयोऽग्रिमोऽग्रजः ॥७॥
महातपा महातेजा महोदर्को महोदयः ।
महायशा महाधामा महासत्त्वो महाधृतिः ॥ ८ ॥
महाधैर्यो महावीर्यो महासम्पन्महाबलः ।
महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ॥ ९ ॥
महामतिर्महानीतिर्महाक्षान्तिर्महोदयः ।
महाप्राज्ञो महाभागो महानन्दो महाकविः ॥१०॥
महामहा महाकीर्तिर्महाकान्तिर्महावपुः ।
महादानो महाज्ञानो महायोगो महागुणः ॥११॥
महामहपतिः प्राप्तमहाकल्याणपञ्चकः ।
महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीवृक्षादिशतम् ॥ ५ ॥ अर्घम् ।

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः ।
महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥१॥
महाव्रतपतिर्मह्यो महाकान्तिधरोऽधिपः ।
महामैत्री महामेयो महोपायो महोदयः ॥२॥
महाकारुण्यको मन्ता महामन्त्रो महायतिः ।
महानादो महाघोषो महेज्यो महसांपतिः ॥३॥
महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महिष्ठवाक् ।
महात्मा महसांधाम महर्षिर्महितोदयः ॥४॥

महाक्लेशाङ्कुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः ।
महापराक्रमोऽनन्तो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥५॥
महाभवाब्धिसन्तारिर्महामोहाद्रिसूदनः ।
महागुणाकरः क्षान्तो महायोगीश्वरः शमी ॥६॥
महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मा महाव्रतः ।
महाकर्मारिहाऽऽत्मज्ञो महादेवो महेशिता ॥७॥
सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः ।
असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ॥८॥
सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्यः श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः ।
दान्तात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥९॥
प्रधानमात्मा प्रकृतिः परमः परमोदयः ।
प्रक्षीणबन्धः कामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥१०॥
प्रणवः प्रणयः प्राणः प्राणदः प्रणतेश्वरः ।
प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोऽध्वर्युरध्वरः ॥११॥
आनन्दो नन्दनो नन्दो वन्द्योऽनिन्द्योऽभिनन्दनः ।
कामहा कामदः काम्यः कामधेनुररिञ्जयः ॥१२॥
इति महामुन्यादिशतम् ॥९ अर्घम् ।
असंस्कृतसुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतान्तकृत् ।
अन्तकृत्कान्तगुः कान्तश्चिन्तामणिरभीष्टदः ॥ १ ॥
अजितो जितकामारिरमितोऽमितशासनः ।
जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितान्तकः ॥२॥
जिनेन्द्रः परमानन्दो मुनीन्द्रो दुन्दुभिस्वनः ।
महेन्द्रवन्द्यो योगीन्द्रो यतीन्द्रो नाभिनन्दनः ॥३॥
नाभेयो नाभिजोऽजातः सुव्रतो मनुरुत्तमः ।
अभेद्योऽनत्ययोऽनाश्वानधिकोऽधिगुरुः सुधीः ॥४॥

सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सुकः ।
विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः ॥५॥
क्षेमी क्षेमङ्करोऽक्षय्यः क्षेमधर्मपतिः क्षमी ।
अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ॥६॥
सुकृती धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुराननः ।
श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥ ७ ॥
सत्यात्मा सत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः ।
सत्याशीः सत्यसन्धानः सत्यः सत्यपरायणः ॥८॥
स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान् दूरदर्शनः ।
अणोरणीयाननणुर्गुरुराद्यो गरीयसा ॥६॥
सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः ।
सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥१०॥
सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् ।
सुगुप्तो गुप्तिभृद् गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ॥११॥

इति असंस्कृतादिशतम् ॥७॥ अर्घम् ।

बृहद्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः ।
मनीषी धिषणो धीमाञ्छेमुषीशो गिरांपतिः ॥१॥
नैकरूपो नयोत्तुङ्गो नैकात्मा नैकधर्मकृत् ।
अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ॥२॥
ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः ।
पद्मगर्भो जगद्गर्भो हेमगर्भः सुदर्शनः ॥३॥
लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिन ईशिता ।
मनोहरो मनोज्ञाङ्गो धीरो गम्भीरशासनः ॥४॥
धर्मयूपो दयायागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः ।
धर्मचक्रायुधो देवः कर्महा धर्मघोषणः ॥५॥

अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः ।
सुरूपः सुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ॥६॥
सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः ।
अलेपो निष्कलङ्कात्मा वीतरागो गतस्पृहः ॥७॥
वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेन्द्रियः ।
प्रशान्तोऽनन्तधामर्षिर्मङ्गलं मलहानघः ॥८॥
अनीदृगुपमाभूतो दिष्टिर्दैवमगोचरः ।
अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानैकतत्त्वदृक् ॥९॥
अध्यात्मगम्यो गम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः ।
सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ॥१०॥
शङ्करः शंवदो दान्तो दमी क्षान्तिपरायणः ।
अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ॥११॥
त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मङ्गलोदयः ।
त्रिजगत्पतिपूज्याङ्घ्रिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ॥१२॥

इति बृहदादिशतम् ॥ ८ ॥ अथन ।

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः ।
सर्वलोकातिगः पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ॥१॥
पुराणः पुरुषः पूर्वः कृतपूर्वाङ्गविस्तरः ।
आदिदेवः पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ॥२॥
युगमुख्यो युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशकः ।
कल्याणवर्णः कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ॥३॥
कल्याणप्रकृतिर्दीप्तकल्याणात्मा विकल्मषः ।
विकलङ्कः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः ॥४॥
देवदेवो जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्विभुः ।
जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ॥५॥

चराचरगुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः ।
सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ॥६॥
आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः ।
सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ॥७॥
तपनीयनिभस्तुङ्गो बालार्काभोऽनलप्रभः ।
सन्ध्याभ्रबभ्रुर्हेमाभस्तप्तचामीकरच्छविः ॥ ८ ॥
निष्टप्तकनकच्छायः कनत्काञ्चनसन्निभः ।
हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शातकुम्भनिभप्रभः ॥ ९ ॥
द्युम्नाभो जातरूपाभस्तप्तजाम्बूनदद्युतिः ।
सुधौतकलधौतश्रीः प्रदीप्तो हाटकद्युतिः ॥ १० ॥
शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षरः क्षमः ।
शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः॥११॥
शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः ।
शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः कान्तिमान्कामितप्रदः॥१२॥
श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः ।
सुस्थिरः स्थावरः स्थाणुः प्रथीयान्प्रथितः पृथुः ॥१३॥

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम् ॥ ६ ॥ अर्हम् ।

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः ।
निष्किञ्चनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥ १ ॥
तेजोराशिरनन्तौजा ज्ञानाब्धिः शीलसागरः ।
तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोपहः ॥ २ ॥
जगच्चूडामणिर्दीप्तः सर्वविघ्नविनायकः ।
कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोकालोकप्रकाशकः ॥ ३ ॥
अनिद्रालुरतन्द्रालुर्जागरूकः प्रमामयः ।
लक्ष्मीपतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ॥ ४ ॥

मुमुक्षुर्बन्धमोक्षज्ञो जिताक्षो जितमन्मथः ।
प्रशान्तरसशैलूषो भव्यपेटकनायकः ॥ ५ ॥
मूलकर्ताऽखिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणम् ।
आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥६॥
प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विश्वभाववित् ।
सुतनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नयः ॥ ७ ॥
श्रीशः श्रीश्रितपादाब्जो वीतभीरभयङ्करः ।
उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो लोकवत्सलः ॥ ८ ॥
लोकोत्तरो लोकपतिर्लोकचक्षुरपारधीः ।
धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः शुद्धः सूनृतपूतवाक् ॥ ९ ॥
प्रज्ञापारमितः प्राज्ञो यतिर्नियमितेन्द्रियः ।
भदन्तो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षो वरप्रदः ॥ १० ॥
समुन्मूलितकर्मारिः कर्मकाष्ठाशुशुक्षणिः ।
कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्हेयादेयविचक्षणः ॥ ११ ॥
अनन्तशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः ।
त्रिनेत्रस्त्र्यम्बकस्त्र्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ॥१२॥
समन्तभद्रः शान्तारिर्धर्माचार्यो दयानिधिः ।
सूक्ष्मदर्शी जितानङ्गः कृपालुर्धर्मदेशकः ॥१३॥
शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः ।
धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्राज्यनायकः ॥१४॥

इति दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम् ॥ १० ॥ अर्घम् ।

धाम्नां पते तवामूनि नामान्यागमकोविदैः ।
समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥ १ ॥
गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः ।
स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्टफलं भजेत् ॥२॥

त्वमतोऽसि जगद्बन्धुः त्वमतोऽसि जगद्भिषक् ।
त्वमतोऽसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ॥३॥
त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयोगभाक् ।
त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यङ्गः स्वोत्थानन्तचतुष्टयः ॥४॥
त्वं पञ्चब्रह्मतत्त्वात्मा पञ्चकल्याणनायकः ।
षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं सप्तनयसंग्रहः ॥५॥
दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिकः ।
दशावतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ॥६॥
युष्मन्नामावलीदृब्धविलसत्स्तोत्रमालया ।
भवन्तं परिवस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ॥७॥
इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिकः ।
यः संपाठं पठत्येनं स स्यात्कल्याणभाजनम् ॥८॥
ततः सदेदं पुण्यार्थी पुमान्पठति पुण्यधीः ।
पौरुहूतीं श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुकः ॥९॥
स्तुत्वेति मघवा देवं चराचरजगद्गुरुम् ।
ततस्तीर्थविहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ॥१०॥
स्तुतिः पुण्यगुणोत्कीर्तिः स्तोता भव्यः प्रसन्नधीः ।
निष्ठितार्थो भवांस्तुत्यः फलं नैश्रेयसं सुखम् ॥११॥
यः स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुनः स्तोता स्वयं कस्यचित्
ध्येयो योगिजनस्य यश्च नितरां ध्याता स्वयं कस्यचित् ॥
यो नेतॄन् नयते नमस्कृतिमलं नन्तव्यपक्षेक्षणः
स श्रीमान् जगतां त्रयस्य च गुरुर्देवः पुरुः पावनः ॥१२॥
तं देवं त्रिदशाधिपार्चितपदं घातिक्षयानन्तरं-
प्रोत्थानन्तचतुष्टयं जिनमिमं भव्याब्जिनीनामिनम् ।
मानस्तम्भविलोकनानतजगन्मान्यं त्रिलोकीपतिं
प्राप्ताचिन्त्यबहिर्विभूतिमनघं भक्त्या प्रवन्दामहे ॥१३॥

[पुष्पांजलिं क्षिपामि ।]

महावीराष्टकस्तोत्रम्

[कविवर भागचन्द]

शिखरिणी

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः
समं भान्ति ध्रौव्य-व्यय-जनि-लसन्तोऽन्तरहिताः ।
जगत्साक्षी मार्ग-प्रकटन-परो भानुरिव यो
महावीरस्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥ १ ॥

अताम्रं यच्चक्षुः कमल-युगलं स्पन्द-रहितं
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥ २ ॥

नमन्नाकेन्द्राली-मुकुट-मणि-भा-जाल-जटिलं
लसत्पादाम्भोज-द्वयमिह यदीयं तनुभृताम् ।
भवज्ज्वाला-शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥ ३ ॥

यदर्चा-भावेन प्रमुदित-मना दर्दुर इह
क्षणादासीत्स्वर्गी गुण-गण-समृद्धः सुख-निधिः ।
लभन्ते सद्भक्ताः शिव-सुख-समाजं किमु तदा
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥ ४ ॥

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत-तनुर्ज्ञान-निवहो
विचित्रात्माप्येको नृपति-वर-सिद्धार्थ-तनयः ।
अजन्मापि श्रीमान् विगत-भव-रागोद्भुत-गतिः
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥ ५ ॥

मदीया वाग्गङ्गा विविध-नय-कल्लोल-विमला
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ।
इदानीमप्येषा बुध-जन-मरालैः परिचिता
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥ ६ ॥

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवन-जयी काम-सुभटः
कुमारावस्थायामपि निज-बलाद्येन विजितः ।
स्फुरन्नित्यानन्द-प्रशम-पद-राज्याय स जिनः
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥ ७ ॥

महामोहातङ्क-प्रशमन-पराकस्मिक-भिषक्
निरापेक्षो बन्धुर्विदित-महिमा मङ्गलकरः ।
शरण्यः साधूनां भव-भयभृतामुत्तमगुणो
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥ ८ ॥

महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या 'भागेन्दु'ना कृतम् ।
यः पठेच्छ्रणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ॥ ९ ॥

वचन बल

■ जिनमें वचन बल था उन्हीं के द्वारा आज तक मोक्ष-मार्ग की पद्धति का सुप्रकाश हो रहा है और उन्हीं की अकाट्य युक्तियों और तर्कों द्वारा बड़े-बड़े वादियों का गर्व दूर हुआ है ।

■ वचन बल की ही ताकत है कि एक वक्ता व गायक अपने भाषण या गायन से श्रोताओं को मुग्ध कर के अपनी ओर आकर्षित कर लेता है । जिसके वचन बल नहीं, वह मोक्षमार्ग को प्राप्त करने में अक्षम होता है ।

—'वर्णी वाणी' से

निर्वाणकांड [गाथा]

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्ज जिणणाहो ।
उज्जंते णेमि-जिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥१॥
वीसं तु जिण-वरिंदा अमरासुर-वंदिदा धुद-किलेसा ।
सम्मेदे गिरि-सिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥
वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे ।
आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥
णेमि-सामी पज्जुण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो ।
बाहत्तरि-कोडीओ उज्जंते सत्त-सया वंदे ॥
राम-सुआ विण्णि जणा लाड णरिंदाण पंच कोडीओ ।
पावाए गिरि-सिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥
पंडु-सुआ तिण्णि जणा दविड-णरिंदाण अट्ठ कोडीओ ।
सत्तुंजय-गिरिसिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥
सत्ते य बलभद्दा जदुव-णरिंदाण अट्ठ कोडीओ ।
गजपंथे गिरि-सिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥
राम-हणू सुग्गीवो गवय गवक्खो य णील महणीलो ।
णवणवदी कोडीओ तुंगीगिरि-णिव्वुदे वंदे ॥
अंगाणंगकुमारा विक्खा-पंचद्ध-कोडि-रिसिसहिया ।
सुवण्णगिरि-मत्थयत्थे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥
दहमुह-रायस्स सुआ कोडी-पंचद्ध-मुणिवरे सहिया ।
रेवा-उहयम्मि तीरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥
रेवा-णइए तीरे पच्छिम-भायम्मि सिद्धवर-कूडे ।
दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठय-कोडि-णिव्वुदे वंदे ॥

वडवाणी-वर-णयरे दक्खिण-भायम्मि चूलगिरि-सिहरे ।
इंदजिय-कुंभयण्णो णिव्वाण गया णमो तेसिं ।।
पावागिरि-वर-सिहरे सुवण्णभद्दाइ-मुणिवरा चउरो ।
चलणा-णई-तडग्गे णिव्वाण गया णमो तेसिं ।।
फलहोडी-वर-गामे पच्छिम-भायम्मि दोणगिरि-सिहरे ।
गुरुदत्ताइ-मुणिंदा णिव्वाण गया णमो तेसिं ।।
णायकुमार-मुणिंदो वालि महावालि चेव अज्झेया ।
अट्ठावय-गिरि-सिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ।।
अचलपुर-वर-णयरे ईसाणभाए मेढगिरि-सिहरे ।
आहुट्ठय-कोडीओ णिव्वाण गया णमो तेसिं ।।
वंसत्थल-वण-णियरे पच्छिम-भायम्मि कुंथुगिरि-सिहरे ।
कुल-देसभूसण-मुणी णिव्वाण गया णमो तेसिं ।।
जसरह-रायस्स सुआ पंचसया कलिंग-देसम्मि ।
कोडिसिलाए कोडि-मुणी णिव्वाण गया णमो तेसिं ।।
पासस्स समवसरणे गुरुदत्त-वरदत्त-पंच-रिसिपमुहा ।
रिरिंसदे गिरिसिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं ।।
जे जिणु जित्थु तत्था जे दु गया णिव्वुदिं परमं ।
ते वंदामि य णिच्चं तिरयण-सुद्धो णमंसामि ।।
सेसाणं तु रिसीणं णिव्वाणं जम्मि जम्मि ठाणम्मि ।
ते हं वंदे सव्वे दुक्खक्खय-कारणट्ठाए ।।

भक्तामरस्तोत्र [भाषा]

[हेमराज]

आदिपुरुष आदीश जिन, आदि सुविधि करतार ।
धरम-धुरंधर परमगुरु, नमो आदि अवतार ॥

सुर-नत-मुकुट रतन-छवि करैं, अंतर पाप-तिमिर सब हरैं ।
जिनपद वंदों मन वच काय, भव-जल-पतित उधरन-सहाय ॥

श्रुत-पारग इंद्रादिक देव, जाकी थुति कीनी कर सेव ।
शब्द मनोहर अरथ विशाल, तिस प्रभुकी वरनों गुन-माल ॥

विबुध-वंद्य-पद मैं मति-हीन, हो निलज्ज थुति-मनसा कीन ।
जल-प्रतिबिंब बुद्ध को गहै, शशि-मंडल बालक ही चहै ॥

गुन-समुद्र तुम गुन अविकार, कहत न सुर-गुरु पावैं पार ।
प्रलय-पवन-उद्धत जल-जंतु, जलधि तिरै को भुज बलवंतु ॥

सो मैं शक्ति-हीन थुति करूं, भक्ति-भाव-वश कछु नहिं डरूं ।
ज्यों मृगि निज-सुत पालन हेत, मृगपति सन्मुख जाय अचेत ॥

मैं शठ सुधी हँसनको धाम, मुझ तव भक्ति बुलावै राम ।
ज्यो पिक अंब-कली-परभाव, मधु-ऋतु मधुर करै आराव ॥

तुम जस जंपत जन छिनमाहिं, जनम जनमके पाप नशाहिं ।
ज्यों रवि उगै फटै ततकाल, अलिवत नील निशा-तम-जाल ॥

तव प्रभावतैं कहूँ विचार, होसी यह थुति जन-मन-हार ।
ज्यों जल-कमल पत्रपै परै, मुक्ताफलकी दुति विस्तरै ॥

तुम गुन-महिमा हत-दुख-दोष, सो तो दूर रहो सुख-पोष ।
पाप-विनाशक है तुम नाम, कमल-विकाशी ज्यों रवि-धाम ॥

नहिं अचंभ जो होहिं तुरंत, तुमसे तुम गुण वरणत संत ।
जो अधनीको आप समान, करै न सो निंदित धनवान ॥
इकटक जन तुमको अविलोय, अवरविषैं रति करै न सोय ।
को करि क्षीर-जलधि जल पान, खार नीर पीवै मतिमान ॥
प्रभु तुम वीतराग गुन लीन, जिन परमानु देह तुम कीन ।
हैं तितने ही ते परमानु, यातैं तुम सम रूप न आनु ॥
कहँ तुम मुख अनुपम अविकार, सुर-नर-नाग-नयन-मनहार ।
कहां चंद्र-मंडल सकलंक, दिनमें ढाक-पत्र सम रंक ॥
पूरन-चंद्र-ज्योति छविवंत, तुम गुन तीन जगत लंघंत ।
एक नाथ त्रिभुवन आधार, तिन विचरत को करै निवार ॥
जो सुर-तिय विभ्रम आरम्भ, मन न डिग्यो तुम तौ न अचंभ ।
अचल चलावै प्रलय समीर, मेरु-शिखर डगमगै न धीर ॥
धूमरहित बाती गत नेह, परकाशै त्रिभुवन-घर एह ।
बात-गम्य नाहीं परचंड, अपर दीप तुम बलो अखंड ॥
छिपहु न लुपहु राहुकी छांहि, जग-परकाशक हो छिनमांहि ।
घन अनवर्त दाह विनिवार, रवितैं अधिक धरो गुणसार ॥
सदा उदित विदलित मनमोह, विघटित मेह राहु अविरोह ।
तुम मुख-कमल अपूरब चंद, जगत-विकाशी जोति अमंद ॥
निश-दिन शशि रविको नहिं काम, तुम मुख-चंद हरै तम-धाम ।
जो स्वभावतैं उपजै नाज, सजल मेघ तो कौनहु काज ॥
जो सुबोध सोहै तुममाहिं, हरि नर आदिकमें सो नाहिं ॥
जो द्युति महा-रतन में होय, कांच-खंड पावै नहिं सोय ॥

नाराच छंद

सराग देव देख मैं भला विशेष मानिया ।
स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया ॥

कछू न तोहिं देखके जहाँ तुही विशेखिया।
मनोग चित्त-चोर और भूल हूँ न पेखिया॥
अनेक पुत्रवंतिनी नितंबिनी सपूत हैं।
न तो समान पुत्र और माततै प्रसूत हैं॥
दिशा धरंत तारिका अनेक कोटिको गिनै।
दिनेश तेजवंत एक पूर्व ही दिशा जनै॥
पुरान हो पुमान हो पुनीत पुन्यवान हो।
कहैं मुनीश अंधकार-नाशको सुभान हो॥
महंत तोहि जानके न होय वश्य कालके।
न और तोहि मोखपंथ देय तोहि टालके॥
अनंत नित्य चित्तकी अगम्य रम्य आदि हो।
असंख्य सर्वव्यापि विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो॥
महेश कामकेतु योग ईश योग ज्ञान हो।
अनेक एक ज्ञानरूप शुद्ध संतमान हो॥
तुही जिनेश बुद्ध है सुबुद्धिके प्रमानतैं।
तुही जिनेश शंकरो जगत्त्रये विधानतैं॥
तुही विधात है सही सुमोखपंथ धारतैं।
नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थके विचारतैं॥
नमों करूं जिनेश तोहि आपदा निवार हो।
नमो करूं सु भूरि भूमि-लोकके सिंगार हो॥
नमों करूं भवाब्धि-नीर-राशि-शोष-हेतु हो।
नमो करूं महेश तोहि मोखपंथ देतु हो॥

चौपाई

तुम जिन पूरन गुन-गन भरे, दोष गर्वकरि तुम परिहरे ।
और देव-गण आश्रय पाय, स्वप्न न देखे तुम फिर आय ॥
तरु अशोक-तर किरन उदार, तुम तन शोभित हैं अविकार ।
मेघ निकट ज्यों तेज फुरत, दिनकर दिपै तिमिर निहनत ॥
सिंहासन मनि-किरन-विचित्र, तापर कंचन-वरन पवित्र ।
तुम तन शोभित किरन-विथार, ज्यों उदयाचल रवि तम-हार ॥
कुंद-पुहुप-सित-चमर ढुरंत, कनक-वरन तुम तन शोभंत ।
ज्यों सुमेरु-तट निर्मल कांति, झरना झरै नीर उमगांति ॥
ऊँचे रहैं सूर दुति लोप, तीन छत्र तुम दिपै अगोप ।
तीन लोककी प्रभुता कहैं, मोती-झालरसों छवि लहैं ॥
दुंदुभि-शब्द गहर गंभीर, चहुँदिशि होय तुम्हारे धीर ।
त्रिभुवन-जन शिव-संगम करै, मानूं जय जय रव उच्चरै ॥
मंद पवन गंधोदक इष्ट, विविध कल्पतरु पुहप-सुवृष्ट ।
देव करैं विकसित दल सार, मानों द्विज-पकति अवतार ॥
तुम तन-भामंडल जिनचंद, सब दुतिवंत करत है मंद ।
कोटि शंख रवि तेज छिपाय, शशि निर्मल निशि करे अछाय ॥
स्वर्ग-मोख-मारग-संकेत, परम-धरम उपदेशन हेत ।
दिव्य वचन तुम खिरैं अगाध, सब भाषागर्भित हित साध ॥

दोहा

विकसित-सुवरन-कमल-दुति, नख-दुति मिलि चमकाहिं ।
तुम पद पदवी जहँ धरो, तहँ सुर कमल रचाहि ॥
ऐसी महिमा तुम विषै, और धरै नहिं कोय ।
सूरजमें जो जोत है, नहिं तारा-गण होय ॥

पट्पद

मद-अवलिप्त-कपोल-मूल अलि-कुल झंकारैं।
तिन सुन शब्द प्रचंड क्रोध उद्धत अति धारैं ॥
काल-वरन विकराल, कालवत सनमुख आवै।
ऐरावत सो प्रबल सकल जन भय उपजावै ॥
देखि गयंद न भय करैं तुम पद-महिमा छीन।
विपतिरहित संपतिसहित वरतै भक्त अदीन ॥
अति मद-मत्त-गयंद कुंभथल नखन विदारै।
मोती रक्त समेत डारि भूतल सिंगारै ॥
बांकी दाढ विशाल वदनमें रसना लोलै।
भीम भयानक रूप देखि जन थरहर डोलै ॥
ऐसे मृगपति पगतलैं जो नर आयो होय।
शरण गये तुम चरणकी बाधा करै न सोय ॥
प्रलय-पवनकर उठी आग जो तास पटंतर।
वमै फुलिंग शिखा उतंग पर जलैं निरंतर ॥
जगत समस्त निगल्ल भस्मकर हैगी मानों।
तडतडाट दव-अनल जोर चहुंदिशा उठानो ॥
सो इक छिनमें उपशमें नाम-नीर तुम लेत।
होय सरोवर परिनमैं विकसित कमल समेत ॥
कोकिल-कंठ-समान श्याम-तन क्रोध जलंता।
रक्त-नयन फुंकार मार विष-कण उगलंता ॥
फणको ऊंचो करै वेग ही सन्मुख धाया।
तब जन होय निशंक देख फणिपतिको आया ॥
जो चांपै निज पगतलै व्यापै विष न लगार।

नाग-दमनि तुम नामकी है जिनके आधार ॥
जिस रनमाहिं भयानक रव कर रहे तुरंगम ।
घनसे गज गरजाहिं मत्त मानों गिरि जंगम ॥
अति कोलाहलमाहिं बात जहँ नाहिं सुनीजै ।
राजनको परचंड देख बल धीरज छीजै ॥
नाथ तिहारे नामतैं सो छिनमाहिं पलाय ।
ज्यों दिनकर परकाशतैं अंधकार विनशाय ॥
मारै जहा गयंद कुंभ हथियार विदारै ।
उमगै रुधिर प्रवाह वेग जलसम विस्तारै ॥
होय तिरन असमर्थ महाजोधा बल पूरे ।
तिस रनमें जिन तोर भक्त जे हैं नर सूरे ॥
दुर्जय अरिकुल जीतके जय पावैं निकलंक ।
तुम पद-पंकज मन बसै ते नर सदा निशंक ॥
नक्र चक्र मगरादि मच्छकरि भय उपजावै ।
जामैं बडवा अग्नि दाहतैं नीर जलावै ॥
पार न पावै जास थाह नहिं लहिये जाकी ।
गरजै अतिगंभीर लहरिकी गिनति न ताकी ॥
सुखसों तिरैं समुद्रको जे तुम गुन सुमराहिं ।
लोलक-लोलनके शिखर पार यान ले जाहिं ॥
महा जलोदर रोग, भार पीड़ित नर जे हैं ।
वात पित्त कफ कुष्ट आदि जो रोग गहै हैं ॥
सोचत रहैं उदास नाहिं जीवनकी आशा ।
अति घिनावनी देह धरैं दुर्गंधि-निवासा ॥
तुम पद-पंकज-धूलको जो लावैं निज-अंग ।

ते नीरोग शरीर लहि छिनमें होय अनंग ॥
पांव कंठतें जकर बांध सांकल अति भारी।
गाढ़ी बेड़ी पैरमांहि जिन जांघ विदारी ॥
भूख प्यास चिंता शरीर दुख जे विललाने।
सरन नाहि जिन कोय भूपके बंदीखाने ॥
तुम सुमरत स्वयमेव ही बंधन सब खुल जाहि।
छनमें ते संपति लहैं चिंता भय विनसाहिं ॥
महामत्त गजराज और मृगराज दवानल।
फणपति रण परचंड नीर-निधि रोग महाबल ॥
बंधन ये भय आठ डरपकर मानों नाशै।
तुम सुमरत छिनमाहिं अभय थानक परकाशै ॥
इस अपार संसारमें शरन नाहिं प्रभु कोय।
यातैं तुम पद-भक्तको भक्ति सहाई होय ॥
यह गुनमाल विशाल नाथ तुम गुनन सँवारी।
विविध-वर्णमय-पुहुप गूँथ मैं भक्ति विथारी ॥
जे नर पहिरे कंठ भावना मनमें भावै।
'मानतुंग' ते निजाधीन शिव-लछमी पावै ॥
भाषा भक्तामर कियो 'हेमराज' हित हेत।
जे नर पढ़ै सुभावसों ते पावै शिव-खेत ॥

वर्णी-वाणी की डायरी से

■ मन की शुद्धि बिना काय शुद्धि का कोई महत्व नहीं।

कल्याणमन्दिर स्तोत्र भाषा

दोहा—परमज्योति परमात्मा, परमज्ञान परवीन ।
बन्दू परमानन्दमय, घटघट अन्तर लीन ॥ १ ॥

निर्भय करन परम परधान, भवसमुद्र जल तारण यान ।
शिवमंदिर अघहरण अनिन्द, बंदहुँ पासचरण अरविन्द ॥
कमठमान भञ्जन वरवीर, गरिमा सागर गुण गम्भीर ।
सुरगुरु पार लहैं नहिं जास, मैं अजान जपहूं जस तास ॥
प्रभुस्वरूप अति अगम अथाह, क्यों हमसेती होय निवाह ।
ज्यों दिन अन्ध उलूको पोत, कहि न सकै रवि-किरण उदोत
मोहहीन जानै मनमाहिं, तोहु न तुम गुण वरणे जाहिं ।
प्रलय पयोधि करै जल बौन, प्रगटहिं रतन गिनै तिहिं कौन॥
तुम असंख्य निर्मल गुणखान, मैं मतिहीन कहूं निज बान ।
ज्यों बालक निज बांह पसार, सागर परमित कहै विचार ॥
जे जोगीन्द्र करहिं तपखेद, तऊ न जानहिं तुम गुणभेद ।
भक्तिभाव मुझ मन अभिलाष, ज्यों पंछी बोलैं निजभाष ॥
तुमजस महिमा अगम अपार, नाम एक त्रिभुवन आधार ।
आवै पवन पद्मसर होय, ग्रीषमतपत निवारै सोय ॥
तुम आवत भविजन घटमाहिं, कर्म निबंध शिथिल ह्वै जाहिं।

ज्यों चन्दनतरु बोलहि मोर, डरहिं भुजंग लगे चहुँओर ॥
तुम निरखत जन दीन दयाल, संकटतैं छूटैं तत्काल ।
ज्यों पशु घेर लेहिं निशि चोर, ते तज भागहिं देखत भोर ॥
तू भविजन तारक किमि होहि, ते चित धार तिरहिं ले तोहि ।
यह ऐसे कर जान स्वभाव, तिरहिं मसक ज्यों गर्भित वाव ॥
जिहं सब देव किये वश वाम, तैं छिनमें जीत्यो सो काम ।
ज्यों जल करै अगनिकुल हान, बड़वानल पावै सो पान ॥
तुम अनन्त गरवागुण लिये, क्योंकर भक्ति धरौं निज हिये ।
है लघुरूप तिरहिं संसार, यह प्रभु महिमा अगम अपार ।
क्रोध निवार कियो मन शांत, कर्मसुभट जीते किहि भांत ।
यह पटतर देखहु संसार, नील विरछ ज्यों दहै तुषार ॥
मुनिजन हिये कमल निज टोहि, सिद्ध रूप सम ध्यावहिं तोहि
कमलकरणिका बिन नहिं और, कमल बीज उपजनकी ठौर ॥
जब तुव ध्यान धरैं मुनि कोय, तब विदेह परमातम होय ।
जैसे धातु शिलातनु त्याग, कनकस्वरूप धवै जब आग ॥
जाके मन तुम करहु निवास, विनशि जाय क्यों विग्रह तास ।
ज्यों महन्त बिच आवै कोय, विग्रहमूल निवारै सोय ॥
करहिं विबुध जे आतमध्यान, तुम प्रभावतैं होय निदान ।

जैसे नीर सुधा अनुमान, पीवत विषविकार की हान ॥
तुम भगवंत विमल गुण लीन, समलरूप मानहिं मति हीन।
ज्यों पीलिया रोग दृग गहै, वर्ण विवर्ण शंखसों कहै ॥
दोहा—निकट रहत उपदेश सुन तरुवर भयो अशोक।
ज्यों रवि ऊगत जीव सब, प्रगट होत भुविलोक ॥
सुमनवृष्टि ज्यों सुर करहिं, हेठ बीठमुख सोहि।
त्यों तुम सेवत सुमनजन बन्ध अधोमुख होहिं ॥
उपजी तुम होय उदधितैं, वाणी सुधा समान।
जिहं पीवत भविजन लहहि, अजर अमरपद् थान।
कहहिं सार तिहुँ लोक को, ये सुर चामर दोय।
भावसहित जो जिन नमैं, तिहुँगति ऊरध होय ॥
सिंघासन गिरिमेरुसम, प्रभु धुनि गरजत घोर।
श्याम सु तनु घनरूप लखि, नाचत भविजन मोर ॥
छविहत होत अशोक दल, तुम भामण्डल देख।
वीतराग के निकट रह, रहत न राग विशेष ॥
सीख कहै तिहुँ लोक को, ये सुरदुन्दुभिनाद।
शिवपथसारथिवाहजिन, भजहु तजहु परमाद ॥
तीन छत्र त्रिभुवन उदित, मुक्तागण छविदेत।
त्रिविधरूप धर मनहु शशि, सेवत नखत समेत ॥

पद्धडी छन्द ।

प्रभु तुम शरीर दुति रतन जेम, परतापपुञ्ज जिम शुद्ध हेम ।
अतिधवल सुजस रूपा समान, तिनके गढ तीन विराजमान ॥
सेवहिं सुरेन्द्र कर नमत भाल, तिन शीश मुकुट तज देहिं भाल ।
तुम चरणलगत लहलहैं प्रीति, नहिं रमहि और जन सुमन रीति ॥
प्रभु भोगविमुख तन गरमदाह, जन पार करत भवजल निवाह ।
ज्यों माटी कलश सुपक्व होय, ले भार अधोमुख तिरहि तोय ॥
तुम महाराज निरधन निराश, तज विभव-विभव सब जग प्रकाश ।
अक्षर स्वभाव सुलिखै न कोय, महिमा भगवन्त अनन्त सोय ॥
कर कोप कमठ निज वैर देख, तिन करी धूलि वर्षा विशेष ।
प्रभु तुम छाया नहि भई हीन, सो भयो पापि लंपट मलीन ॥
गरजन्त घोर घन अन्धकार, चमकन्त विज्जु जल मुसलधार ।
वरषन्त कमठ धर ध्यान रुद्र, दुस्तर करन्त निज भव समुद्र ॥

वास्तु छन्द ।

मेघमाली मेघमाली आप बल फोरि ।
भेजे तुरत पिशाचगण, नाथ पास उपसर्ग कारण ।
अग्नि जाल झलकन्त मुख, धुनि करत जिमि मत्तवारण ॥
कालरूप विकराल तन, मुण्डमाल हित कण्ठ ।

चौपाई ।

जे तुम चरणकमल तिहुँकाल, सेवहिं तज माया जजाल ।
भाव भगतिमन हरष अपार, धन्य-धन्य जग तिन अवतार ॥
भवसागर में फिरत अजान, मैं तुव सुजस सुन्यो नहिं कान ।
जो प्रभु नाम मन्त्र मन धरै, तासों विपति भुजगम डरै ॥

मनवांछित फल जिनपदमाहिं, मैं पूरब भव पूजे नाहिं।
मायामगन फिर्‌यो अज्ञान, करहि रंकजन मुझ अपमान॥
मोहतिमिर छायो दृग मोहि, जन्मान्तर देख्यो नहिं तोहि।
तौ दुर्जन मुझ संगति गहैं, मरमछेद के कुवचन कहैं॥
सुन्यो कान जस पूजे पाय, नैनन देख्यो रूप अघाय।
भक्तिहेतु न भयो चित्त चाव, दुःखदायक किरिया बिन भाव॥
महाराज शरणागत पाल, पतित उधारण दीनदयाल।
सुमिरण करहुँ नाय निज शीश, मुझ दुःख दूर करहु जगदीश॥
कर्म निकन्दन महिमा सार, अशरणशरण सुजस विस्तार।
नहिं सेये प्रभु तुमरे पाय, तो मुझ जन्म अकारथ जाय॥
सुरगणवन्दित दयानिधान, जगतारण जगपति अनजान।
दुःख सागरतैं मोहि निकासि, निर्भयथान देहु सुखरासि॥
मैं तुम चरणकमल गुणगाय, बहुविधि भक्ति करी मनलाय।
जनम-जनम प्रभु पाऊं तोहि, यह सेवाफल दीजै मोहि॥

बेसरी छन्द।

इह विधि श्रीभगवन्त, सुजस जे भविजन भाषहिं।
ते जिन पुण्य भण्डार, संचि चिरपाप प्रणाशहिं॥
रोम-रोम हुलसन्ति, अंग प्रभु गुणमन ध्यावहिं।
स्वर्ग सम्पदा भुञ्ज वेग पञ्चमगति पावहिं॥
यह कल्याणमन्दिर कियो, कुमुदचन्द्र की बुद्धि।
भाषा कहत 'बनारसी' कारण समकित शुद्धि॥४४॥

एकीभाव स्तोत्र भाषा

दोहा—वादिराज मुनिराजके, चरणकमल चितलाय।
भाषा एकीभाव की, करू स्वपरसुखदाय ॥१॥

चाल—"अहो जगत गुरुदेव सुनियो अर्ज हमारी"

जो अति एकीभाव भयो मानो अनिवारी।
सो मुझ कर्म प्रबन्ध करत भव भव दुःख भारी ॥
ताहि तिहारी भक्ति जगतरवि जो निरवारै।
तो अब और कलेश कौन सो नाहिं विदारै ॥ १ ॥

तुम जिन जोतिस्वरूप दुरित अंधियारि निवारी।
सो गणेश गुरु कहैं तत्व विद्याधन धारी ॥
मेरे चितघर माहिं बसौ तेजोमय यावत।
पापतिमिर अवकाश तहां सो क्योंकरि पावत ॥ २ ॥

आनन्द आँसूवदन धोय तुमसौं चित सानै।
गद्गद सुरसौं सुयश मन्त्र पढ़ि पूजा ठानै ॥
ताके बहुविधि व्याधि व्याल चिरकाल निवासी।
भाजैं थानक छोड़ देह बांबइ के वासी ॥ ३ ॥

दिविसे आवनहार भये भविभाग उदयबल।
पहले ही सुर आय कनकमय कीय महीतल ॥
मनगृह ध्यान दुवार आय निवसो जगनामी।
जो सुवरण तन करो कौन यह अचरज स्वामी ॥ ४ ॥

प्रभु सब जग के बिना हेतु बांधव उपकारी।
निरावरण सर्वज्ञ शक्ति जिनराज तिहारी॥
भक्ति रचित ममचित्त सेज नित वास करोगे।
मेरे दुःख सन्ताप देख किम धीर धरोगे॥ ५॥
भववनमें चिरकाल भ्रम्यो कछु कहिय न जाई।
तुम थुति कथा पियूषवापिका भागन पाई॥
शशि तुषार घन सार हार शीतल नहिं जा सम।
करत न्हौन तामाहिं क्यों न भवताप बुझै मम॥ ६॥
श्रीविहार परिवाह होत शुचि रूप सकल जग।
कमलकनक आभाव सुरभि श्रीवास धरत पग॥
मेरो मन सर्वंग परस प्रभु को सुख पावै।
अब सो कौन कल्याण जो न दिन दिन ढिग आवै॥ ७॥
भवतज सुखपद बसे काममद सुभट संहारे।
जो तुमको निरखन्त सदा प्रियदास तिहारे॥
तुम वचनामृतपान भक्ति अंजुलिसों पीवै।
तिन्हें भयानक क्रूररोगरिपु कैसे छीवै॥ ८॥
मानथम्भ पाषाण आन पाषाण पटन्तर।
ऐसे और अनेक रतन दीखें जग अन्तर॥
देखत दृष्टिप्रमाण नाममद तुरत मिटावै।
जो तुम निकट न होय शक्ति यह क्योंकर पावै॥ ९॥

प्रभुतन पर्वतपरस पवन उर में निवहै है।
तासों ततछिन सकल रोगरज बाहिर ह्वै है॥
जाके ध्यानाहूत बसो उर अम्बुज माहीं।
कौन जगत उपकार करन समरथ सो नाहीं॥ १०॥
जनम-जनम के दुःख सहे सब ते तुम जानो।
याद किये मुझ हिये लगैं आयुध से मानो॥
तुम दयाल जगपाल स्वामि मैं शरण गही है।
जो कछु करनो होय करो परमाण वही है॥ ११॥
मरन समय तुम नाम मन्त्र जीवकतैं पायो।
पापाचारी श्वान प्राण तज अमर कहायो॥
जो मणिमाला लेय जपै तुम नाम निरन्तर।
इन्द्र सम्पदा लहै कौन संशय इस अन्तर॥१२॥
जो नर निर्मल ज्ञान मान शुचि चारित साधै।
अनवधि सुखकी सार भक्ति कूची नहिं लाधै॥
सो शिववांछक पुरुष मोक्षपट केम उघारै।
मोह मुहर दिढ करी मोक्ष मन्दिर के द्वारे॥१३॥
शिवपुर केरो पंथ पापतमसों अति छायो।
दुःखसरूप बहु कूप खाड सों विकट बतायो॥
स्वामी सुख सों तहां कौन जन मारग लागैं।
प्रभु प्रवचनमणिदीप जोन के आगैं आगैं॥१४॥

कर्मपटल भूमाहिं दबी आतमनिधि भारी।
देखत अतिसुख होय विमुख जन नाहिं उघारी॥
तुम सेवक ततकाल ताहि निहचै कर धारै।
थुति कुदालसों खोद बन्द भू कठिन विदारै॥१५॥
स्याद्वादगिरि उपज मोक्ष सागर लौं धाई।
तुम चरणांबुज परस भक्ति गंगा सुखदाई॥
मो चित निर्मल थयो न्होन रुचिपूरव तामैं।
अब वह हो न मलीन कौन जिन संशय यामैं॥१६॥
तुम शिवसुखमय प्रगट प्रभु चिंतन तेरो।
मैं भगवान समान भाव यों वरतै मेरो॥
यद्यपि झूठ है तदपि तृप्ति निश्चल उपजावै।
तुव प्रसाद सकलंक जीव वांछित फल पावै॥१७॥
वचन जलधि तुम देव सकल त्रिभुवन में व्यापै।
भंग तरंगिनि विकथवादमल मलिन उथापै॥
मनसुमेरुसों मथै ताहि जे सम्यकज्ञानी।
परमामृत सों तृपत होहिं ते चिरलौं प्रानी॥१८॥
जो कुदेव छवि हीन वसन भूषण अभिलाखै।
बैरी सों भयभीत होय सो आयुध राखै॥
तुम सुन्दर सर्वंग शत्रु समरथ नहिं कोई।
भूषण वसन गदादि ग्रहण काहे को होई॥१९॥

सुरपति सेवा करै कहा प्रभु प्रभुता तेरी।
सो सलाघना लहै मिटै जगसों जगफेरी॥
तुम भवजलधि जिहाज तोहि शिवकन्त उचरिये।
तुही जगत-जनपाल नाथ थुति की थुति करिये॥२०॥
वचन जाल जडरूप आप चिन्मूरति सांई।
तातैं थुति आलाप नाहिं पहुँचै तुम तांई॥
तो भी निष्फल नाहिं भक्तिरस भीने वायक।
सन्तनको सुरतरु समान वांछित वर दायक॥२१॥
कोप कभी नहिं करो प्रीति कबहू नहिं धारों।
अति उदास बेचाह चित्त जिनराज तिहारो॥
तदपि आन जग बहै बैर तुम निकट न लहिये।
यह प्रभुता जग तिलक कहाँ तुम बिन सरदहिये॥२२॥
सुरतिय गावैं सुजस सर्वगति ज्ञान स्वरूपी।
जो तुमको थिर होहिं नमैं भवि आनन्दरूपी॥
ताहि छेमपुर चलनवाट बाकी नहिं हो है।
श्रुतके सुमरन माहिं सो न कबहूँ नर मोहै॥२३॥
अतुल चतुष्टयरूप तुमैं जो चित में धारै।
आदरसों तिहुँकाल माहिं जग थुति विस्तारै॥
सो सुकृत शिवपंथ भक्ति रचना कर पूरै।
पञ्चकल्याणक ऋद्धि पाय निहचै दुःख चूरै॥२४॥

अहो जगतपति पूज्य अवधिज्ञानी मुनि हारे।
तुम गुणकीर्तन माहिं कौन हम मन्द विचारे॥
थुति छलसों तुम विषै देव आदर विस्तारे।
शिवसुख पूरणहार कलपतरु यही हमारे॥२५॥
वादिराज मुनितैं अनु, वैय्याकरणी सारे।
वादिराज मुनितैं अनु तार्किक विद्यावारे॥
वादिराज मुनितैं अनु हैं काव्यन के ज्ञाता।
वादिराज मुनितैं अनु है भविजन के त्राता॥२६॥
दोहा—मूल अर्थ बहुविधि कुसुम, भाषा सूत्र मंझार।
भक्तिमाल 'भूधर' करी करो कण्ठ सुखकार॥

श्री नेमिनाथ के पूर्वभव—छप्पय

पहले भव वन भील, दुतिय अभिकेतु सेठघर।
तीजै सुर सौधर्म, चौथ चिंतागति नभचर॥
पंचम चौथे स्वर्ग, छठैं अपराजित राजा।
अच्युतेन्द्र सातवैं अमरकुलतिलक विराजा॥
सुप्रतिष्टराय आठम नवैं जन्म जयन्त विमान धर।
फिर भये नेमिहरि वंशशशि ये दशभव सुधिकरहु नर॥

विषापहार स्तोत्र भाषा

दोहा—नमो नाभिनन्दन बली, तत्त्वप्रकाशनहार।
तुर्यकाल की आदि में, भये प्रथम अवतार॥

रोला छन्द

निज आतम में लीन ज्ञानकरि व्यापत सारे।
जानत सब व्यापार संग नहिं कछू तिहारे॥
बहुत काल हो पुनि जरा न देह तिहारी।
ऐसे पुरुष पुरान करहु रक्षा जु हमारी॥ १॥
परकरिकैं जु अचिन्त्य भार जग को अतिभारो।
सो एकाकी भयो वृषभ कीनों निसतारो॥
करि न सके जोगीन्द्र स्तवन मैं करिहों ताको।
भानु प्रकाश न करै दीप तम हरे गुफा को॥ २॥
स्तवन करनको गर्व तज्यो शक्री बहु ज्ञानी।
मैं नहिं तजों कदापि स्वल्पज्ञानी शुभध्यानी॥
अधिक अर्थको कहूँ यथा विधि बैठि झरोके॥
जालान्तर धरि अक्ष भूमिधर को जु विलोकै॥ ३॥
सकल जगतकों देखत अर सबके तुम ज्ञायक।
तुमकों देखत नाहिं नाहि जानत सुखदायक॥
हो किसाक तुम नाथ और कितनाक बखानै।
तातें थुति नहि बनै अशक्ति भये सयानै॥ ४॥

बालकवत निजदोष थकी इहलोक दु:खी अति।
रोगरहित तुम कियो कृपाकरि देव भुवनपति॥
हित अनहितकी समझि मांहि है मन्दमती हम।
सब प्राणिन के हेत नाथ तुम बालवैद सम॥ ५॥

दाता हरता नाहिं भानु सबको बहकावत।
आजकालके छलकरि नित प्रति दिवस गुमावत॥
हे अच्युत जो भक्त नमैं तुम चरण कमलको।
छिनक एकमें आप देत मनवांछित फलको॥ ६॥

तुमसों सन्मुख रहै भक्तिसौं सो सुख पावै।
जो सुभावतैं विमुख आपतैं दु:खहि बढ़ावै॥
सदा नाथ अवदात एक द्युति रूप गुसांई।
इन दोन्यों के हेत स्वच्छ दरपणवत झांई॥ ७॥

है अगाध जलनिधि समुदजल है जितनो ही।
मेरु तुङ्गसुभाव शिखरलौं उच्च भन्यो ही॥
वसुधा अर सुरलोक एहु इस भांति सई है।
तेरी प्रभुता देव! भुवनिकूं लंघि गई है॥ ८॥

है अनवस्था मं परम सो तत्त्व तुमारे।
कह्यो न आवागमन प्रभू मतमांहिं तिहारे॥
दृष्ट पदारथ छांडि आप इच्छति अदृष्टकौं।
विरुध वृद्धि तव नाथ समंजस होय सृष्टकौं॥ ९॥

कामदेव को किया भस्म जगत्राता थे ही।
लीनी भस्म लपेट नाम शम्भू निजदेही॥
सूतो होय अचेत विष्णु वनिताकरि हारयो।
तुमकौं काम न गहै आप घट सदा उजारयो॥१०॥
पापवान वा पुण्यवान सो देव बतावै।
तिनके औगुण कहै नाहिं तू गुणी कहावै॥
निज सुभावतैं अम्बुराशि निज महिमा पावै।
स्तोक सरोवर कहे कहा उपमा बढ़ि जावै॥ ११॥
कर्मन की थिति जन्तु अनेक करै दुःख कारी।
सो थिति बहु परकार करै जीवन की ख्वारी॥
भवसमुद्र के मांहि देव दोन्यों के साखी।
नाविक नाव समान आप वाणी में भाखी॥ १२॥
सुखकौं तो दुःख कहै गुणनकूं दोष विचारै।
धर्मकरन के हेत पाप हिरदै बिच धारै॥
तेल निकासन काज धूलिकौं पेलै घानी।
तेरे मतसों वाह्य इसे जे जीव अज्ञानी॥ १३॥
विष मोचै ततकाल रोगकौं हरै ततच्छन।
मणि औषधी रसांण मन्त्र जो होय सुलच्छन॥
ए सब तेरे नाम सुबुद्धी यों मन धरिहैं।
भ्रमत अपर जन वृथा नहीं तुम सुमिरन करिहैं॥१४॥

किंचित भी चितमाहिं आप कछु करो न स्वामी।
जे राखैं चितमाहिं आपको शुभ परिणामी॥
हस्तामलवत लखैं जगत की परिणति जेती।
तेरे चित के बाह्य तोउ जीवैं सुखसेती॥ १५॥
तीनलोक तिरकालमाहिं तुम जानत सारी।
स्वामी इनकी संख्या थी तितनीहिं निहारी॥
जो लोकादिक हुते अनन्ते साहिब मेरा।
तेऽपि झलकते आनि ज्ञान का ओर न तेरा॥१६॥
है अगम्य तवरूप करै सुरपति प्रभु सेवा।
ना कछु तुम उपकार हेत देवन के देवा॥
भक्ति तिहारी नाथ इन्द्र के तोषित मन को।
ज्यों रवि सन्मुख छत्र करै छाया निज तन को॥१७॥
वीतरागता कहां - कहां उपदेश सुखाकर।
सो इच्छा प्रतिकूल वचन किम होय जिनेसर॥
प्रतिकूली भी वचन जगतकूं प्यारे अतिही।
हम कछु जानी नाहिं तिहारी सत्यासतिही॥१८॥
उच्च प्रकृति तुम नाथ संग किंचित न धरनतैं।
जो प्रापति तुम थकी नाहि सो धनेसुरनतैं॥
उच्च प्रकृति जल बिना भूमिधर धुनी प्रकाशै।
जलधि नीरतैं भयो नदी ना एक निकासै॥१९॥

तीनलोक के जीव करो जिनवर की सेवा।
नियम थकी करदन्ड धर्यो देवन के देवा॥
प्रातिहार्य तौ वनै इन्द्र के वनै न तेरे।
अथवा तेरे वनै तिहारे निमित्त परेरे॥ २०॥
तेरे सेवक नाहिं इसे जे पुरुषहीन धन।
धनवानों की ओर लखत वे नाहिं लखतपन॥
जैसैं तमथिति किये लखत परकास थितीकूं।
तैसैं सूझत नाहिं तमथिति मन्दमतीकूं॥२१॥
निज वृध स्वासोच्छास प्रगट लोचन टमकारा।
तिनको वेदत नाहिं लोकजन मूढ विचारा॥
सकल ज्ञेय ज्ञायक जु अमूरति ज्ञान सुलच्छन।
सो किमि जान्यो जाय देव रूप विचच्छन॥२२॥
नाभिराय के पुत्र पिता प्रभु भरततने हैं।
कुलप्रकाशिकैं नाथ तिहारो स्तवन भनैं हैं॥
ते लघु धी असमान गुणनकौं नाहिं भजै हैं।
सुवरण आयो हाथि जानि पाषाण तजै हैं॥२३॥
सुरासुरन को जीति मोहने ढोल बजाया।
तीनलोक में किये सकल वशि यों गरभाया।
तुम अनन्त बलवन्त नाहिं ढिग आवन पाया।
करि विरोध तुम थकी मूलतैं नाश कराया॥२४॥

एक मुक्ति का मार्ग देव तुमने परकास्या।
गहन चतुरगतिमार्ग अन्य देवनकूं भास्या॥
हम सब देखन हार, इसी विधि भाव सुमिरिकैं।
भुज न विलोको नाथ कदाचित गर्भ जु धरिकैं ॥२५॥
केतु विपक्षी अर्कतनो फुनि अग्नितनो जल।
अम्बुनिधि अरि प्रलय कालको पवन महावल॥
जगतमांहिं जे भोग वियोग विपक्षी है निति।
तेरो उदयो है विपक्षते रहित जगत्पति ॥२६॥
जाने विन हू नवत आपको शुभ फल पावै।
नमत अन्य को देव जानि सो हाथ न आवै॥
हरित मणीकूं कांच, कांचकूं मणी रटत हैं।
ताकी वुधि में भूल, मूल मणि को न घटत हैं ॥२७॥
जे विवहारी जीव वचन मैं कुशल सयाने।
ते कषायकरि दग्ध नरनकों देव वखानैं॥
ज्यों दीपक वुझि जाय ताहि कह 'नन्दि' भयो है।
भग्न घड़े को कहें कलश ए मंगल गयो है ॥२८॥
स्यादवाद संयुक्त अर्थ का प्रगट वखानत।
हितकारी तुम वचन श्रवणकरि को नहिं जानत॥
दोषरहित ए देव शिरोमणि वक्ता जगगुर।
जो ज्वरसेती मुक्त भयो सो कहत सरल सुर ॥२९॥

विन वांछा ए वचन आपके खिरें कदाचित
है नियोग एकोपि जगत को करन सहज हित।
करे न वांछा इसो चन्द्रमा पूरो जलनिधि
सीतरश्मिकूं पाय उदधि जल बढ़े स्वयं सिधि
तेरे गुण गम्भीर परम पावन जगमाई
वहु प्रकार प्रभु है अनन्त कछु पार न पाई॥
तिन गुणान को अन्त एक याही विधि दीसे।
ते गुण तुझ ही मांहि और में नाहिं जगीसे।
केवल थुति ही नाहिं भक्तिपूर्वक हम ध्यावत।
सुमरण प्रणमन तथा भजनकर तुम गुण गावत॥
चिंतवन पूजन ध्यान नमनकरि नित आराधें।
को उपावकरि देव सिद्धि फल को हम साधें।
त्रैलोकी नगराधि देव नित ज्ञान प्रकाशी।
परम ज्योति परमातम शक्ति अनन्ती भासी॥
पुण्य पापतै रहित पुण्य के कारण स्वामी।
नमो नमों जगवन्द्य अवन्द्यक नाथ अकामी।
रस सपरस अर गन्ध रूप नहि शब्द तिहारे।
इनके विषय विचित्र भेद सब जाननहारे॥
सब जीवन प्रतिपाल अन्य करि है अगम्यगत।
[illegible]मरण गोचर नाहि करो जिन तेरो सुमिरन॥

तुम अगाध जिनदेव चित्त के गोचर नाहीं।
निःकिंचन भी प्रभू धनेश्वर जाचत सांई॥
भये विश्व के पार दृष्टिसों पार न पावै।
जिनपति एम तिहारि जगजन शरणै आवै॥३५॥
नमों नमौं जिनदेव जगतगुरु शिक्षादायक।
निज गुण सेती भई उन्नति महिमा लायक॥
पाहनखण्ड पहार पछै ज्यो होत और गिर।
त्यों कुलपर्वत नाहिं सनातन दीर्घ भूमिधर॥३६॥
स्वयं प्रकाशी देव रैन दिनकूं नहिं बाधित।
दिवस रात्रि भी छतैं आपकी प्रभा प्रकाशित॥
लाघव गौरव नाहिं एकसो रूप तिहारो।
कालकलातैं रहित प्रभूसूँ नमन हमारो॥३७॥
इहविधि बहु परकार देव तव भक्ति करी हम।
जाचूं वर न कदापि दीन है रागसहित तव॥
छाया बैठत सहज वृक्ष के नीचे ह्वै है।
फिर छाया को जाचत यामें प्रापति ह्वै है॥३८॥
जो कुछ इच्छा होय देन की तौ उपगारी।
द्यो बुधि ऐसी करूँ प्रीतिसौं भक्ति तिहारी॥
करो कृपा जिनदेव हमारे परि ह्वै तोषित।
सनमुख अपनो जानि कौन पण्डित नहिं पोषित॥३९॥

यथा कथंचित भक्ति रचे विनयीजन केई।
तिनकूं श्रीजिनदेव मनोवांछित फल देही॥
फुनि विशेष जो नमत सन्तजन तुमको ध्यावै।
सो सुख जस 'धन-जय' प्रापति ह्वै शिवपद पावै॥४०॥
श्रावक माणिकचन्द सुबुद्धी अर्थ बताया।
सो कवि 'शान्तिदास' सुगमकरि छन्द बनाया॥
फिर फिरिकै ऋषि रूपचन्द ने करी प्रेरणा।
भाषा स्तोत्र 'विषापहार' की पढ़ो भविजना॥४१॥

सुख

- हम ही अपनी शान्ति में बाधक हैं। जितने भी पदार्थ संसार में हैं उन में से एक भी पदार्थ शान्त स्वभाव का बाधक नहीं वर्त्तन में रक्खी हुई मदिरा अथवा डिब्बे में रक्खा हुआ पान पुरुषों में विकृति का कारण नहीं। पदार्थ हमें बलात् विकारी नहीं बनाता, हम स्वयं मिथ्या विकल्पों से इष्टानिष्ट कल्पना कर सुखी और दुःखी होते हैं। कोई भी पदार्थ न तो सुख देता है और न दुःख देता है, इसलिये जहाँ तक बने आभ्यन्तर परिणामों की विशुद्धि पर सदैव ध्यान रखना चाहिए।
- सुखी होने का सर्वोत्तम उपाय तो यह है कि पर पदार्थों में स्वत्व को त्याग दो।

— 'वर्णी वाणी' से

पाश्र्वनाथ स्तोत्र (भूधरकृत)

दोहा—कर जिन पूजा अष्ट विधि, भाव भक्ति जिन भाय।
अब सुरेश परमेश थुति, करौं शीश निज नाय।

चौपाई

प्रभु इस जग समरथ ना कोय, जासों तुम यश वर्णन होय।
चार ज्ञानधारी मुनि थकैं, हमसे मन्द कहा कर सकैं॥

यह उर जानत निश्चय कीन, जिन महिमा वर्णन हम कीन।
पर तुम भक्ति थकी वाचाल, तिस वश होय कहूं गुण माल॥

जय तीर्थङ्कर त्रिभुवन धनी, जय चन्द्रोपम चूडामणी।
जय जय परम धाम दातार, कर्मकुलाचल चूरणहार॥
जय शिवकामिनि कन्त महन्त, अतुल अनन्त चतुष्टय वन्त।
जय जय आशभरण बड़ भाग, तप लक्ष्मी के सुभग सुहाग॥
जय जय धर्मध्वजाधर धीर, स्वर्ग मोक्ष दाता वरवीर।
जय रत्नत्रय रत्नकरण्ड, जय जिन तारण तरण तरण्ड॥
जय जय समवशरण श्रृङ्गार, जय संशय वन दहन तुषार।
जय जय निर्विकार निर्दोष, जय अनन्त गुण माणिक कोष॥
जय जय ब्रह्मचर्यदल साज, काम सुभट विजयी भटराज।
जय जय मोहमहातरु करी, जय जय मदकुञ्जर केहरी।
क्रोधमहानल-मेघ प्रचण्ड, मान मोह धर दामिन दण्ड।
माया-बेल-धनञ्जय दाह, लोभ सलिल शोषण-दिननाह॥
तुम गुणसागर अगम अपार, ज्ञान जहाज न पहुँचे पार।
तट ही तट पर डोले सोय, कारण सिद्ध यहा ही होय॥
तुमरी कीर्तिवेल बहु बढ़ी, यत्न विना जगमण्डप चढी।
अवर कुदेव सुयस निज चहैं, प्रभु अपने थल ही यश लहैं॥

जगति जीव घूमै विन ज्ञान, कीना मोह महाविष पान ।
तुम सेवा विषनाशक जरी, तिहुँ मुनिजन मिल निश्चय करी॥
जन्म-जरा मिथ्या-मत मूल, जन्म मरण लागे तिहँ फूल ।
सो कबहूँ विन भक्त कुठार, कटै नहीं दुःख फल दातार ॥
कल्प सरोवर चित्रा बेल, काम पोरवा नवनिधि मेल ।
चिन्तामणि पारस पाषान, पुण्य पदारथ और महान ॥
ये सव एक जन्म-संयोग, किंचित सुखदातार नियोग ।
त्रिभुवननाथ तुम्हारी सेव, जन्म-जन्म सुखदायक देव ॥
तुम जग बांधव तुम जगतात, अशरणशरण विरद विख्यात ।
तुम सब जीवनके रखवाल, तुम दाता तुम परम दयाल ॥
तुम पुनीत तुम पुरुष प्रमान, तुम समदर्शी तुम सब जान ।
जय मुनि-यज्ञ-पुरुष परमेश, तुम ब्रह्मा तुम विष्णु महेश ॥
तुम जगभर्त्ता तुम जगजान, स्वामि स्वयम्भू तुम अमलान ।
तुम बिन तीनकाल तिहुँ लोय, नाहो शरण जीवका होय ॥
यातैं अब करुणानिधि नाथ, तुम सन्मुख हम जोडैं हाथ ।
जबलों निकट होय निर्वान, जग निवास छूटै दुःखदान ॥
तबलौं तुम चरणांवुज वास, हम उर होय यही अर दास ।
और न कछु वांछा भगवान, है दयालु दीजै वरदान ॥

दोहा—इहिविधि इन्द्रादिक अमर, कर बहु भक्ति विधान ।
निज कोठे बैठे सकल, प्रभु सन्मुख सुख मान ॥
जीति कर्मरिपु जे भये, केवल लब्धि निवास ।
सो श्री पार्श्व प्रभु सदा, करो विघ्नघन नाश ॥

निर्वाणकाण्ड भाषा

दोहा- वीतराग वंदौ सदा, भावसहित सिरनाय।
कहूँ कांड निर्वाणकी, भाषा सुगम बनाय ॥

चौपाई

अष्टापद आदीश्वर स्वामि, वासुपूज्य चंपापुरि नामि ॥
नेमिनाथ स्वामी गिरनार, वंदो भाव-भगति उर धार ॥
चरम तीर्थंकर चरम-शरीर, पावापुरि स्वामी महावीर।
शिखरसमेद जिनेसुर बीस, भावसहित वंदौं निश-दीस ॥
वरदत्तराय रु इंद मुनिंद, सायरदत्त आदि गुणवृंद।
नगर तारवर मुनि उठकोडि, वंदौं भावसहित कर जोड़ि ॥
श्रीगिरनार शिखर विख्यात, कोडि बहत्तर अरु सौ सात।
संबु प्रद्युम्न कुमर द्वै भाय, अनिरुध आदि नमूं तसु पाय ॥
रामचंद्रके सुत द्वै वीर, लाटनरिंद आदि गुणधीर।
पांच कोटि मुनि मुक्ति मझार, पावागिरि वंदौ निरधार ॥
पांडव तीन द्रविड-राजान, आठ कोडि मुनि मुकति पयान।
श्रीशत्रुंजयगिरिके शीस, भावसहित वंदौ निश-दीस ॥
जे बलभद्र मुकतिमें गये, आठ कोडि मुनि औरहु भये।
श्रीगजपंथ शिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूं तिहुं काल ॥
राम हणू सुग्रीव सुडील, गव गवाख्य नील महानील।
कोटि निन्याणव मुक्ति पयान, तुंगीगिरि वंदौ धरि ध्यान ॥
नंग अनंग कुमार सुजान, पाँच कोडि अरु अर्ध प्रमान।
मुक्ति गये सोनागिरि-शीश, ते वंदौं त्रिभुवनपति ईस ॥
रावणके सुत आदिकुमार, मुक्ति गये रेवा-तट सार।

कोटि पंच अरु लाख पचास, ते वंदौ धरि परम हुलास ॥
रेवानदी सिद्धवर कूट, पश्चिम दिशा देह जहँ छूट ।
द्वै चक्री दश कामकुमार, ऊठकोडि वंदौ भव पार ॥
वडवानी वडनयर सुचंग, दक्षिण दिशि गिरि चूल उतंग ।
इंद्रजीत अरु कुंभ जु कर्ण, ते वंदौ भव-सायर-तर्ण ॥
सुवरणभद्र आदि मुनि चार, पावागिरि-वर-शिखरमँझार ।
चेलना-नदी-तीरके पास, मुक्ति गये वंदौ नित तास ॥
फलहोडी वड़गाम अनूप, पश्चिम दिशा द्रोणगिरि रूप ।
गुरुदत्तादि मुनीसुर जहाँ, मुक्ति गये वंदौ नित तहाँ ॥
बाल महाबाल मुनि दोय, नागकुमार मिले त्रय होय ।
श्रीअष्टापद मुक्ति मँझार, ते वंदौ नित सुरत सँभार ॥
अचलापुरकी दिश ईसान, तहाँ मेंढ़गिरि नाम प्रधान ।
साढे तीन कोडि मुनिराय, तिनके चरण नमूं चित लाय ॥
वंसस्थल वनके ढिग होय, पश्चिम दिशा कुंथुगिरि सोय ।
कुलभूषण दिशिभूषण नाम, तिनके चरणनि करूं प्रणाम ॥
जसरथ राजाके सुत कहे, देश कलिंग पाँचसौ लहे ।
कोटिशिला मुनि कोटि प्रमान, वंदन करूँ जोर जुग पान ॥
समवसरण श्रीपार्श्व-जिनंद, रेसिंदीगिरि नयनानंद ।
वरदत्तादि पंच ऋषिराज, ते बंदौ नित धरम-जिहाज ॥
मथुरापुर पवित्र उद्यान जम्बू स्वामी जी निरवान ।
चरम केवली पचमकाल, ते वदो नित दीन दयाल ॥

तीन लोकके तीरथ जहाँ, नित प्रति वंदन कीजै तहाँ ।
मन-वच-कायसहित सिर नाय, वंदन करहि भविक गुण गाय ॥
संवत सतरहसौ इकताल, आश्विन सुदि दशमी सुविशाल ।
'भैया' वंदन करहि त्रिकाल, जय निर्वाणकाड गुणमाल ॥

आलोचनापाठ

वंदों पांचों परम-गुरु, चौवीसों जिनराज।
करूं शुद्ध आलोचना, शुद्धिकरनके काज ॥१॥

सखी छन्द

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी।
तिनकी अब निर्वृत्ति काज, तुम सरन लही जिनराज ॥
इक बे ते चउ इंद्री वा, मनरहित सहित जे जीवा।
तिनकी नहिं करुणा धारी, निरदइ ह्वै घात विचारी ॥
समरंभ समारंभ आरंभ, मन वच तन कीने प्रारंभ।
कृत कारित मोदन करिकैं, क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं ॥
शत आठ जु इमि भेदनतैं, अघ कीने परछेदनतैं।
तिनकी कहुं कोलों कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी ॥
विपरीत एकांत विनयके, संशय अज्ञान कुनयके।
वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहिं जाय कहीने ॥
कुगुरुनकी सेवा कीनी, केवल अदयाकरि भीनी।
याविधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुंगति मधि दोष उपायो ॥
हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, परवनितासों दृग जोरी।
आरंभ परिग्रह भीनो, पन पाप जु या विधि कीनो ॥
सपरस रसना घ्राननको, चखु कान विषय-सेवनको।
बहु करम किये मनमाने, कछु न्याय अन्याय न जाने ॥
फल पंच उदंबर खाये, मधु मांस मद्य चित चाये।
नहिं अष्ट मूलगुण धारी, सेये कुविसन दुखकारी ॥
दुइवीस अभख जिन गाये, सो भी निश दिन भुंजाये।
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों करि उदर भरायो ॥
अनंतानु जु बंधी जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो।
संज्वलन चौकड़ी गुनिये, सब भेद जु षोडश मुनिये ॥
परिहास अरति रति शोग, भय ग्लानि त्रिवेद संयोग।

पनवीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम ॥
निद्रावश शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई ।
फिर जागि विषय-वन धायो, नानाविध विष-फल खायो ॥
कियेऽहार निहार विहारा, इनमें नहिं जतन विचारा ।
विन देखी धरी उठाई, विन शोधी वस्तु जु खाई ॥
तब ही परमाद सतायो, बहुविधि विकलप उपजायो ।
कछु सुधि बुधि नाहिं रही है, मिथ्या मति छाय गयी है ॥
मरजादा तुम ढिंग लीनी, ताहूमें दोष जु कीनी ।
भिन भिन अब कैसैं कहिये, तुम ज्ञानविषैं सब पइये ॥
हा हा ! मैं दुठ अपराधी, त्रस-जीवन-राशि विराधी ।
थावरकी जतन न कीनी, उरमें करुना नहिं लीनी ॥
पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जागां चिनाई ।
पुनि विन गाल्यो जल ढोल्यो, पंखातैं पवन विलोल्यो ॥
हा हा ! मैं अदयाचारी, बहु हरितकाय जु विदारी ।
तामधि जीवनके खंदा, हम खाये धरि आनंदा ॥
हा हा ! परमाद बसाई, विन देखे अगनि जलाई ।
तामध्य जीव जे आये, ते हू परलोक सिधाये ॥
बींध्यो अन राति पिसायो, ईंधन विन सोध जलायो ।
झाड़ू ले जागां बुहारी, चिंउटी आदिक जीव विदारी ॥
जल छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी ।
नहिं जल-थानक पहुँचाई, किरिया विन पाप उपाई ॥
जल मल मोरिन गिरवायो, कृमि-कुल बहु घात करायो ।
नदियन बिच चीर धुवाये, कोसनके जीव मराये ॥
अन्नादिक शोध कराई, तामैं जु जीव निसराई ।

तिनका नहिं जतन कराया, गलियारे धूप डराया ॥
पुनि द्रव्य कमावन काजे, बहु आरंभ हिंसा साजे ।
किये अघ तिसनावश भारी, करुना नहिं रंच विचारी ॥
इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवंता ।
संतति चिरकाल उपाई, वानी तैं कहिय न जाई ॥
ताको जु उदय अब आयो, नानाविध मोहि सतायो ।
फल भुंजत जिय दुख पावै, वचतैं कैसें करि गावै ॥
तुम जानत केवलज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानी ।
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारन विरद सही है ॥
जो गांवपती इक होवै, सो भी दुखिया दुख खोवै ।
तुम तीन भुवनके स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी ॥
द्रौपदिको चीर बढ़ायो, सीताप्रति कमल रचायो ।
अंजनसे किये अकामी, दुख मेटो अंतरजामी ॥
मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपनो विरद सम्हारो ।
सब दोषरहित करि स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी ॥
इंद्रादिक पदवी नहिं चाहूँ, विषयनिमें नाहिं लुभाऊँ ।
रागादिक दोष हरीजे, परमातम निज-पद दीजे ॥

दोहा

दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दीज्यो मोय ।
सब जीवनके सुख बढ़ै, आनँद मंगल होय ॥
अनुभव माणिक पारखी, 'जौहरि' आप जिनन्द ।
यही वर मोहि दीजिये, चरन शरन आनन्द ॥

सामायिक पाठ भाषा

प्रथम प्रतिक्रमण कर्म

काल अनन्त भ्रम्यो जग में सहिये दुःख भारी।
जन्म मरण नित किये पाप को है अधिकारी ॥
कोटि भवान्तर मांहि मिलन दुर्लभ सामायिक।
धन्य आज मैं भयो जोग मिलियो सुखदायिक ॥ १ ॥
हे सर्वज्ञ जिनेश! किये जे पाप जु मैं अब।
ते सब मनवचकाय योग की गुप्ति बिना लभ ॥
आप समीप हजूर मांहि मैं खड़ो-खड़ो सब।
दोष कहूँ सो सुनो करो नठ दुःख देहि जब ॥ २ ॥
क्रोध मान मद लोभ मोह मायावशि प्रानी।
दुःख सहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी ॥
बिना प्रयोजन एकेन्द्रिय बितिचउपंचेन्द्रिय।
आप प्रसादहिं मिटै दोष जो लग्यो मोहि जिय ॥ ३ ॥
आपस में इकठौर थाप करि जे दुःख दीने।
पेलि दिए पगतलै दावि करि प्राण हरीने ॥
आप जगतके जीव जिते तिन सबके नायक।
अरज करूँ मैं सुनो दोष मेटो दुःखदायक ॥ ४ ॥
अञ्जन आदिक चोर महा घनघोर पाप मय।
तिनके जे अपराध भये ते क्षमा-क्षमा किय ॥
मेरे जे अब दोष भये ते क्षमहु दयानिधि।

यह पडिकोणो कियो आदि षट्कर्म मांहि विधि ॥ ५ ॥

इसके आदि वा अन्त में आलोचना पाठ बोल कर फिर द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म का पाठ करना चाहिये।

द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म

जो प्रमादवशि होय विराधे जीव घनेरे।
तिनको जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे॥
सो सब झूठो होउ जगतपति के परसादै।
जा प्रसाद तैं मिलै सर्व सुख दुःख न लाधै ॥ ६ ॥
मैं पापी निर्लज्ज दया करि हीन महाशठ।
किये पाप अघ ढेर पापमति होय चित्त दुठ॥
निन्दूं हूं मैं वार-बार निज जिय को गरहूं।
सब विधि धर्म उपाय पाय फिर पाप न करहूं ॥ ७ ॥
दुर्लभ है नर-जन्म तथा श्रावक कुल भारी।
सतसंगति संयोग धर्म जिन श्रद्धा धारी॥
जिन वचनामृत धार समावर्ते जिनवानी।
तोहू जीव संघारे धिक धिक धिक हम जानी ॥ ८ ॥
इन्द्रिय लंपट होय खोय निज ज्ञान जमा सब।
अज्ञानी जिमि करै तिसी विधि हिंसक ह्वै अब॥
गमना गमन करन्तो जीव विराधे भोले।
ते सब दोष किये निन्दूं अब मन वच तोले ॥ ९ ॥
आलोचन विधि थकी दोष लागे जु घनेरे।
ते सब दोष विनाश होउ तुम तैं जिन मेरे॥
वार-बार इस भांति मोह मद दोष कुटिलता।

ईर्षादिकतैं भये निंदिये जे भयभीता ॥१०॥

तृतीय सामायिक भाव-कर्म

सब जीवन में मेरे समता भाव जग्यो है।
सब जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो है॥
आर्त्त रौद्र द्वय ध्यान छांड़ि करिहूं सामायिक।
संजम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायिक ॥११॥
पृथिवी जल अरु अग्नि वायु चउकाय वनस्पति।
पंचहि थावर मांहि तथा त्रस जीव बसैं जिति॥
बे इन्द्रिय तिय चउ पंचेन्द्रिय मांहि जीव सब।
तिनतैं क्षमा कराऊँ मुझ पर क्षमा करो अब ॥१२॥
इस अवसर में मेरे सब सम कञ्चन अरु तृण।
महल मसान समान शत्रु अरु मित्रहिं समगण॥
जामन मरण समान जानि हम समता कीनी।
सामायिक का काल जितै यह भाव नवीनी ॥१३॥
मेरो है इक आतम तामैं ममत जु कीनो।
और सबै मम भिन्न जानि समता रस भीनो॥
मात पिता सुत बन्धु मित्र तिय आदि सबै यह।
मोतैं न्यारे जानि जथारथ रूप कर्यो गह ॥१४॥
मैं अनादि जगजाल मांहि फँसि रूप न जाण्यो।
एकेन्द्रिय दे आदि जन्तु को प्राण हराण्यो॥
ते सब जीव समूह सुनो मेरी यह अरजी।
भव-भव को अपराध छिमा कीज्यो कर मरजी ॥१५॥

नमौं ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीति कर्मको ।
सम्भव भवदुःखहरण करण अभिनन्दन शर्मको ॥
सुमति सुमति दातार तार भवसिंधु पार कर ।
पद्मप्रभ पद्माभ भानि भवभीति प्रीति धर ॥१६॥
श्रीसुपार्श्व कृतपाश नाश भव जास शुद्ध कर ।
श्रीचन्द्रप्रभ चन्द्रकान्ति सम देह कान्तिधर ॥
पुष्पदन्त दमि दोषकोश भविपोष रोषहर ।
शीतल शीतल करण हरण भवताप दोषकर ॥१७॥
श्रेय रूप जिन श्रेय ध्येय नित सेय भव्यजन ।
वासुपूज्य शतपूज्य वासवादिक भवभयहन ॥
विमल विमलमति देय अन्तगत है अनन्तजिन ।
धर्म-शर्म शिवकरण शान्तिजिन शान्तिविधायिन ॥१८॥
कुंथु कुंथुमुख जीवपाल अरनाथ जालहर ।
मल्लि मल्लसम मोहमल्लमारण प्रचार धर ॥
मुनिसुव्रत व्रतकरण नमत सुरसंघहि नमिजिन ।
नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरत मांहि ज्ञानधन ॥१९॥
पार्श्वनाथ जिन पार्श्व उपलसम मोक्ष रमापति ।
वर्द्धमान जिन नमूं वमूं भवदुःख कर्मकृत ॥
या विधि मैं जिन संघ रूप चउबीस संख्यधर ।
स्तवूं नमूं हूँ बार-बार बंदूं शिव सुखकर ॥२०॥

पचम वन्दना-कर्म

वंदूं मैं जिनवीर धीर महावीर सुसनमति।
वर्द्धमान अतिवीर वंदि हूं मनवचतन कृत॥
त्रिशला तनुज महेश धीश विद्यापति वंदूं।
वंदौं नित प्रति कनकरूप तनु पापनिकन्दूं॥२१॥
सिद्धारथ नृपनन्द द्वन्द दुःख दोष मिटावन।
दुरितदवानल ज्वलित ज्वाल जगजीव उधारन॥
कुण्डलपुर करि जन्म जगत जिय आनंद कारन।
वर्ष बहत्तर आयु पाय सबही दुःख टारन॥२२॥
सप्तहस्त तनु तुङ्ग भगकृत जन्म मरण भय।
बालब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय॥
दे उपदेश उधारि तारि भवसिंध जीवघन।
आप बसे शिवमांहि ताहि वंदौं मन वच तन॥२३॥
जाके वन्दनथकी दोष दुःख दूरहि जावै।
जाके बन्दनथकी मुक्ति तिय सन्मुख आवै॥
जाके बन्दनथकी वंद्य होवैं सुरगनके।
ऐसे वीर जिनेश वंदि हूँ क्रमयुग तिनके॥२४॥
सामायिक षट्कर्ममांहि वन्दन यह पञ्चम।
बन्दौं वीर जिनेन्द्र इन्द्रशत वंद्य वंद्य मम॥
जन्ममरणभय हरो करो अघशान्ति शान्तिमय।
मैं अघकोष सुपोष दोषको दोष विनाशय॥२५॥
कायोत्सर्ग विधान करूँ अन्तिम सुखदाई।

काय त्यजन मय होय काय सबको दुःखदाई ॥
पूरब दक्षिण नमूँ दिशा पश्चिम उत्तर मैं ।
जिनगृह वन्दन करूँ हरूँ भवतापतिमिर मैं ॥२६॥
शिरोनती मैं करूँ नमूँ मस्तक कर धरिकैं ।
आवर्तादिक क्रिया करूँ मन वच मद हरिकैं ॥
तीनलोक जिनभवन मांहि जिन हैं जु अकृत्रिम ।
कृत्रिम हैं द्वय अर्द्ध द्वीप नाहीं वन्दौं जिम ॥२७॥
आठकोडि परि छप्पन लाख जु सहस सत्याणूं ।
च्यारि शतक पर असीएक जिनमन्दिर जाणूं ॥
व्यन्तर ज्योतिष मांहिं संख्य रहिते जिनमन्दिर ।
ते सब वन्दन करूँ हरहुँ मम पाप संघकर ॥२८॥
सामायिक सम नाहिं और कोऊ वैर मिटायक ।
सामायिक सम नाहिं और कोऊ मैत्रीदायक ॥
श्रावक अणुव्रत आदि अन्त सप्तम गुणथानक ।
यह आवश्यक किये होय निश्चय दुःखहानक ॥२९॥
जे भवि आतमकाज-करण उद्यम के धारी ।
ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी ॥
राग रोष मदमोहक्रोध लोभादिक जे सब ।
बुध 'महाचन्द्र' विलाय जाय तातैं कीज्यो अब ॥३०॥

इति सामायिक पाठ समाप्त ।

पं० भूधरकृत स्तुति

पुलकन्त नयन चकोर पक्षी, हँसत उर इन्दीवरो।
दुर्बुद्धि चकवी विलख विछुड़ी, निविड़ मिथ्यातम हरो॥
आनन्द अम्बुज उमगि उछर्यो, अखिल आतम निरदले।
जिन वदन पूरणचन्द्र निरखत, सकल मनवांछित फले॥
मम आज आतम भयो पावन, आज विघन विनाशिया।
संसार सागर नीर निवट्यो, अखिल तत्व प्रकाशिया॥
अब भई कमला किंकरी, मम उभय भव निर्मल ठये।
दुःख जर्यो दुर्गति वास निवर्यो, आज नव मंगल भये॥
मन हरण मूरति हेरि प्रभु की, कौन उपमा लाइये।
मम सकल तनके रोम हुलसे, हर्ष और न पाइये॥
कल्याण काल प्रत्यक्ष प्रभुको, लखे जो सुर नर घने।
तिह समयकी आनन्द महिमा, कहत क्यों मुखसों बने॥
भर नयन निरखे नाथ तुमको, और वांछा ना रही।
मम सब मनोरथ भये पूरण, रंक मानो निधि लही॥
अब होऊ भव-भव भक्ति तुम्हरी, कृपा ऐसी कीजिये।
कर जोर 'भूधरदास' विनवै, यही वर मोहि दीजिये॥

तव विलंव नहि कियो—स्तुति

दोहा—जासु धर्म परभावसों, संकट कटत अनन्त।
मंगल मूरति देव सो, जैवन्तो अरहन्त॥

हे करुणानिधि सुजन को, कष्ट विषैं लखि लेत।
तजि विलंव दुःख नष्ट किय, अब विलंब किह हेत॥

तव विलंव नहिं कियो, दियो नमिको रजता चल।
तव विलंव नहिं कियो, मेघवाहन लङ्का थल॥
तव विलंव नहिं कियो, सेठ सुत दारिद भंजे।
तव विलंव नहिं कियो, नागजुग सुरपद रंजे॥
इमि चूर भूरि दुःख भक्तके, सुख पूरे शिवतिय वरन।
प्रभु मोर दुःख नाशनविषै, अब विलंव कारण कवन॥

तव विलंव नहि कियो, सिया पावक जल कीन्हौं।
तव विलंव नहिं कियो, चन्दना शृङ्खल छीन्हौं॥
तव विलंव नहिं कियो, चीर द्रौपदी को वाढ्यो।
तव विलंव नहिं कियो, सुलोचना गंगा काढ़्यो॥ इमि

तव विलंव नहि कियो, सांप कियो कुसुम सुमाला।
तव विलंव नहिं कियो, उर्मिला सुरथ निकाला॥
तव विलंव नहिं कियो, शीलवल फाटक खुल्ले।
तव विलंव नहिं कियो, अञ्जना वन मन फुल्ले॥ इमि

तव विलंव नहिं कियो, सेठ सिंहासन दीन्हौं।
तव विलंव नहिं कियो, सिंधु श्रीपाल कढ़ीन्हौं॥

तब विलंब नहिं कियो, प्रतिज्ञा वज्रकर्ण पल ।
तब विलंब नहिं कियो, सुधन्ना काढ़ि वापि थल ॥ इमि०
तब विलंब नहिं कियो, कंस भय त्रिजग उबारे ।
तब विलंब नहिं कियो, कृष्णसुत शिला उधारे ॥
तब विलंब नहिं कियो, खड्ग मुनिराज बचायो ।
तब विलंब नहिं कियो, नीर मातंग उचायो ॥ इमि०
तब विलंब नहिं कियो, सेठसुत निर विष कीन्हों ।
तब विलंब नहिं कियो, मानतुंग बंध हरीन्हों ॥
तब विलंब नहि कियो, वादिमुनि कोढ़ मिटायो ।
तब विलंब नहिं कियो, कुमुद निज पास कटायो ॥ इमि०
तब विलंब नहिं कियो, अञ्जना चोर उबार्यो ।
तब विलंब नहिं कियो, पूरवा भील सुधार्यो ॥
तब विलंब नहिं कियो, गृद्ध पक्षी सुन्दर तन ।
तब विलंब नहिं कियो, भेक दिय सुर अद्भुत तन॥इमि०
इहविधि दुःख निरवार, सारसुख प्रापति कीन्हों ।
अपनो दास निहारि, भक्तवत्सल गुण चीन्हों ॥
अब विलंब किहिं हेत, कृपा कर इहां लगाई ।
कहा सुनो अरदास नाहिं, त्रिभुवन के राई ॥
जनवृन्द सु मनवचतन अबै, गही नाथ तुम पदशरन ।
सुधि ले दयाल मम हाल पै, कर मंगल मंगलकरन॥इमि०

स्तुति

[कविवर दौलतरामजी]

दोहा

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्द-रस-लीन ।
सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरि-रज-रहस-विहीन ।।१।।

जय वीतराग विज्ञान-पूर, जय मोह-तिमिरको हरन सूर ।
जय ज्ञान अनंतानंत धार, दृग-सुख-वीरज-मण्डित अपार ।।
जय परम शांत मुद्रा समेत, भवि-जनको निज अनुभूति हेत ।
भवि-भागनवश जोगे वशाय, तुम धुनि ह्वै सुनि विभ्रम नशाय ।।
तुम गुण चिंतत निज-पर-विवेक, प्रगटै विघटै आपद अनेक ।
तुम जग-भूषण दूषण-वियुक्त, सब महिमायुक्त विकल्प-मुक्त ।।
अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप, परमातम परम पावन अनूप ।
शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन, स्वाभाविक परिणतिमय अछीन
अष्टादश दोष विमुक्त धीर, स्व चतुष्टयमय राजत गभीर ।
मुनि गणधरादि सेवत महंत, नव केवल-लब्धि-रमा धरंत ।।
तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जाहिं जैहैं सदीव ।
भव-सागरमें दुख छार वारि, तारनको अवर न आप टारि ।।
यह लखि निज दुख-गद-हरण-काज, तुम ही निमित्त कारण इलाज
जाने तातैं मैं शरण आय, उचरौं निज दुख जो चिर लहाय ।।
मैं भ्रम्यो अपनपो विसरि आप, अपनाये विधि-फल-पुण्य-पाप
निजको परको करता पिछान, परमें अनिष्टता इष्ट ठान ।।

आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्यों मृग मृग-तृष्णा जानि वारि
तन-परणतिमें आपो चितार, कबहूं न अनुभवो स्व-पदसार ॥
तुमको बिन जाने जो क्लेश, पाये सो तुम जानत जिनेश ।
पशु-नारक-नर-सुर-गति-मझार, भव धर धर मर्यो अनंत बार॥
अब काललब्धि बलतैं दयाल, तुम दर्शन पाय भयो खुशाल।
मन शांत भयो मिटि सकल द्वन्द्व, चाख्यो स्वातमरस दुखनिकंद ॥
तातैं अब ऐसी करहु नाथ, बिछुरै न कभी तुअ चरण साथ ।
तुम गुणगणको नहिं छेव देव, जग तारन को तुम विरद एव ॥
आतमके अहित विषय कषाय, इनमें मेरी परिणति न जाय ।
मैं रहूँ आपमें आप लीन, सो करो होउँ ज्यों निजाधीन ॥
मेरे न चाह कछु और ईश, रत्नत्रय-निधि दीजै मुनीश ।
मुझ कारजके कारन सु आप, शिव करहु हरहु मम मोह-ताप ॥
शशि शांतिकरन तप हरन हेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत।
पीवत पियूष ज्यों रोग जाय, त्यों तुम अनुभवतैं भव नशाय॥
त्रिभुवन तिहुँकाल मंझार कोय, नहि तुम बिन निज सुखदाय होय
मो उर यह निश्चय भयो आज, दुखजलधि उतारन तुम जिहाज॥

दोहा –

तुम गुणगण-मणिगणपती, गणत न पावहिं पार ।
'दौल' स्वल्प-मति किमि कहै, नमूं त्रियोग संभार ॥

दुःखहरण स्तुति

श्रीपति जिनवर करुणा यतनं, दुःखहरण तुम्हारा बाना है।
मत मेरी बार अबार करो, मोहि देहु विमल कल्याना है ॥ टेक॥
त्रैकालिक वस्तु प्रत्यक्ष लखो, तुमसों कछु बात न छाना है।
मेरे उर आरत जो वरतै, निहचै सब सो तुम जाना है ॥
अवलोक विथा मत मौन गहो, नहीं मेरा कहीं ठिकाना है।
हो राजिवलोचन सोचविमोचन, मैं तुमसों हित ठाना है ॥ श्री०
सब ग्रन्थनि में निरग्रन्थनि ने, निरधार यही गणधार कही।
जिननायक ही सब लायक हैं, सुखदायक क्षायक ज्ञानमही ॥
यह बात हमारे कान परी, तब आन तुमारी शरण गही।
क्यों मेरी बार विलंब करो, जिननाथ सुनो यह बात सही ॥ श्री०
काहू को भोग मनोग करो, काहू को स्वर्ग विमाना है।
काहू को नाग नरेशपति, काहू को ऋद्धि निधाना है ॥
अब मो पर क्यों न कृपा करते, यह क्या अन्धेर जमाना है।
इनसाफ करो मत देर करो, सुखवृन्द भजो भगवाना है ॥ श्री०
खल कर्म मुझे हैरान किया, तब तुम सों आन पुकारा है।
तुम ही समरथ नहीं न्याय करो, तब बन्देका क्या चारा है ॥
खल घातक पालक बालक का, नृप नीति यही जगसारा है।
तुम नीतिनिपुण त्रैलोकपती, तुमही लगि दौर हमारा है ॥ श्री०
जबसे तुमसे पहिचान भई, तबसे तुमही को माना है।
तुमरे ही शासन का स्वामी, हमको सच्चा सरधाना है ॥
जिनको तुमरी शरणागत है, तिनसों जमराज डराना है।
यह सुजस तुम्हारे सांचे का, सब गावत वेद पुराना है ॥ श्री०

जिसने तुमसे दिलदर्द कहा, तिसका तुमने दुःख हाना है।
अघ छोटा मोटा नाशि तुरत, सुख दिया तिन्हें मनमाना है॥
पावकसों शीतल नीर किया, और चीर बढ़ा असमाना है।
भोजन था जिसके पास नहीं, सो किया कुवेर समाना है॥ श्री०
चिंतामण पारस कल्पतरु, सुखदायक ये परधाना है।
तव दासन के सब दास यही, हमरे मन में ठहराना है॥
तुम भक्तन को सुरइन्द्रपदी, फिर चक्रवर्तिपद पाना है।
क्या बात कहौं विस्तार बढ़े, वे पावैं मुक्ति ठिकाना है॥ श्री०
गति चार चौरासी लाख विषैं, चिन्मूरत मेरा भटका है।
हो दीनबन्धु करुणा-निधान, अबलौं न मिटा वह खटका है॥
जब जोग मिला शिव साधनका, तब विघन कर्मने हटका है।
अब विघन हमारे दूर करो, सुख देहु निराकुल घटका है॥ श्री०
गजग्राहग्रसित उद्धार लिया, ज्यों अंजन तस्कर तारा है।
ज्यों सागर गोपदरूप किया, मैना का संकट टारा है॥
ज्यों शूलीतें सिंहासन, और वेडी को काट विडारा है।
त्यों मेरा संकट दूर करो, प्रभु मोकूं आस तुम्हारा है॥ श्री०
ज्यों फाटक टेकत पाय खुला, और सांप सुमन कर डारा है।
ज्यों खड्ग कुसुमका माल किया, बालकका जहर उतारा है॥
ज्यों सेठ विपति चकचूरपूर, घर लक्ष्मी सुख विस्तारा है।
त्यों मेरा संकट दूर करो, प्रभु मोकू आस तुम्हारा है॥ श्री०
यद्यपि तुमरे रागादि नहीं, यह सत्य सर्वथा जाना है।
चिन्मूरति आप अनन्तगुणी, नित शुद्ध दशा शिव थाना है॥
तदपि भक्तन की पीर हरो, सुख देत तिन्हें जु सुहाना है।

यह शक्ति अचिन्त्य तुम्हारी का, क्या पावे पार सयाना है ॥ श्री०
दुःखखन्दन श्री सुखनन्दन का, तुमरा प्रण परम प्रमाणा है।
वरदान दया जस कीरत का, तिहुँ लोक धुजा फहराना है ॥
कमलाधरजी! कमलाकरजी, करिये कमला अमलाना है।
अब मेरी विथा अवलोकि रमापति, रंच न बार लगाना है ॥ श्री०
हो दीनानाथ अनाथ हितू, जन दीन अनाथ पुकारी है।
उदयागत कर्मविपाक हलाहल, मोह विथा विस्तारी है ॥
ज्यों आप और भवि जीवनकी, ततकाल विथा निरवारी है।
त्यों 'वृन्दावन' यह अर्ज करै, प्रभु आज हमारी बारी है ॥ श्री ९

दौलत पद

अपनी सुधि भूल आप, आप दुख उपायौ,
ज्यौं शुक नभचाल विसरि नलिनी लटकायौ। अपनी०
चेतन अविरुद्ध शुद्ध दरशबोधमय विशुद्ध,
तजि जड़-रसफरस रूप, पुद्गल अपनायौ ॥ अपनी०
इन्द्रिय सुख-दुख में नित्त, पाग रागरुखमें चित्त,
दायक भवविपतिवृन्द, बन्धको बढ़ायौ। अपनी०
चाहदाह दाहे, त्यागौ न ताह चाहे,
समता-सुधा न गाहे जिन, निकट जो बतायौ। अपनी०
मानुषभव सुकुल पाय, जिनवरशासन लहाय
'दौल' निजस्वभाव भज अनादि जो न ध्यायौ। अपनी०

समाधिमरण भाषा

गौतम स्वामी बन्दौं नामी मरण समाधि भला है।
मैं कब पाऊँ निशिदिन ध्याऊँ गाऊँ वचन कला है॥
देव धर्म गुरु प्रीति महा दृढ़ सप्त व्यसन नहिं जाने।
त्यागि बाइस अभक्ष संयमी बारह व्रत नित ठाने॥ १॥
चक्की उखरी चूलि बुहारी पानी त्रस न विराधै।
बनिज करै पर द्रव्य हरै नहिं छहों करम इमि साधै॥
पूजा शास्त्र गुरुन की सेवा संयम तप चहुँ दानी।
पर उपकारी अल्प अहारी सामायक विधि ज्ञानी॥ २॥
जाप जपै तिहुँ योग धरै दृढ़ तनकी ममता टारै।
अन्त समय वैराग्य सम्हारै ध्यान समाधि विचारै॥
आग लगै अरु नाव डूबै जब धर्म विघन जब आवै।
चार प्रकार आहार त्यागि के मन्त्र सु मनमें ध्यावै॥ ३॥
रोग असाध्य जहां बहु देखै कारण और निहारै।
बात बड़ी है जो बनि आवै भार भवनको टारै॥
जो न बनै तो घरमें रह करि सबसों होय निराला।
मात पिता सुत त्रियको सौंपै निज परिग्रह इहिकाला॥४॥
कुछ चैत्यालय कुछ श्रावकजन कुछ दुःखिया धन देई।
क्षमा क्षमा सबहीं सों कहिके मनकी शल्य हनेई॥
शत्रुन सों मिल निज कर जोरै मैं बहु करिहै बुराई।

तुमसे प्रीतमको दुःख दीने ते सब छमियो भाई ॥ ५ ॥

धन धरती जो मुखसों मांगै सो सब दे सन्तोषै ।
छहों कायके प्राणी ऊपर करुणा भाव विशेषै ॥
ऊँच नीच घर बैठ जगह इक कुछ भोजन कुछ पय लै ।
दूधाहारी क्रम क्रम तजिके छाछ आहार गहे लै ॥ ६ ॥

छाछ त्यागिके पानी राखै पानी तजि संथारा ।
भूमि मांहि थिर आसन मांडै साधर्मी ढिग प्यारा ॥
जब तुम जानो यह न जपै है तब जिनवाणी पढ़िये ।
यों कहि मौन लियौ सन्यासी पंच परम पद गहिये ॥ ७ ॥

चौ आराधन मनमें ध्यावै बारह भावन भावै ।
दशलक्षण मुनि धर्म विचारै रत्नत्रय मन ल्यावै ॥
पैंतीस सोलह षट् पन चारों दुइ इक वरण विचारै ।
काया तेरी दुःख की ढेरी ज्ञानमयी तूं सारे ॥ ८ ॥

अजर अमर निज गुणसौं पूरे परमानन्द सु भावै ।
आनन्द कन्द चिदानन्द साहब तीन जगपति ध्यावै ॥
क्षुधा तृषादिक होय परीषह सहै भावसम राखै ।
अतीचार पांचों सब त्यागे ज्ञान सुधारस चाखै ॥९॥

हाड़ मांस सब सूख जाय जब धर्मलीन तन त्यागै ।
अद्भुत पुण्य उपाय स्वर्ग में सेज उठै ज्यों जागै ॥
तहँतै आवै शिव पद पावै विलसै सुक्ख अनन्तो ।
'द्यानत' यह गति होय हमारी जैन-धर्म जयवन्तो ॥१०॥

वैराग्य भावना

दोहा—बीज राख फल भोगवै, ज्यों किसान जगमांहिं।
त्यों चक्री नृप सुख करै, धर्म विसारै नाहिं॥

योगीरासा छन्द।

इह विधि राज करै नरनायक, भोगै पुण्य विशालो।
सुखसागर में रमत निरन्तर, जात न जान्यो कालो॥
एक दिवस शुभ कर्म संजोगे, क्षेमंकर मुनि वन्दे।
देखे श्रीगुरु के पदपङ्कज, लोचन अलि आनन्दे॥
तीन प्रदक्षिणा दे शिर नायो, करि पूजा थुति कीनी।
साधु समीप विनय करि बैठ्यो, चरणनमें दिठि दीनी॥
गुरु उपदेश्यो धर्म-शिरोमणि, सुन राजा वैरागे।
राजरमा वनितादिक जे रस, ते रस बेरस लागे॥
मुनि सूरज कथनी किरणावलि, लगत भरम बुधि भागी।
भवतन भोगस्वरूप विचारो, परम धरम अनुरागी॥
इह संसार महावन भीतर, भ्रमते ओर न आवै।
जामन मरण जरा दौं दाझै, जीव महा दुःख पावै॥
कबहूं जाय नरक थिति भुंजै, छेदन भेदन भारी।
कबहूँ पशु परजाय धरै तहँ, वध बन्धन भयकारी॥
सुरगति में परसम्पति देखे, राग उदय दुःख होई।
मानुष योनि अनेक विपतिमय, सर्व सुखी नहिं कोई॥
कोई इष्ट वियोगी विलखै, कोई अनिष्ट संयोगी।
कोई दीन दरिद्री विगुचे, कोई तन के रोगी॥
किसही घर कलिहारी नारी कै वैरी सम भाई।

किसही के दुःख बाहिर दीसै, किसही उर दुचिताई ॥
कोई पुत्र बिना नित झूरै, होय मरै तब रोवै ।
खोटी संततिसों दुःख उपजै, क्यों प्राणी सुख सोवै ॥
पुण्य उदय जिनके तिनके भी, नाहिं सदा सुखसाता ।
यह जगवास जथारथ देखे, सब दीखै दुःखदाता ॥
जो संसार विषै सुख होतो. तीर्थंकर क्यों त्यागै ।
काहे को शिव साधन करते, संजम सों अनुरागै ॥
देह अपावन अथिर घिनावन, यामें सार न कोई ।
सागर के जलसों शुचि कीजै, तो भी शुद्ध न होई ॥
सात कुधातु भरी मल मूरति, चाम लपेटी सोहै ।
अन्तर देखत या सम जगमें, और अपावन को है ॥
नवमलद्वार स्रवै निशिवासर, नाम लिये घिन आवै ।
व्याधि उपाधि अनेक जहाँ तहँ, कौन सुधी सुख पावै ॥
पोषत तो दुःख दोष करै अति, सोषत सुख उपजावै ।
दुर्जन देह स्वभाव बराबर, मूरख प्रीति बढ़ावै ॥
राचनजोग स्वरूप न याको, विरचन जोग सही है ।
यह तन पाय महा तप कीजै, यामें सार यही है ॥
भोग बुरे भव रोग बढ़ावै, बैरी है जग जीके ।
बेरस होय विपाक समय अति, सेवत लागै नीके ॥
वज्र अग्नि विषसे विषधरसे. ये अधिके दुःखदाई ।
धर्मरतन के चोर चपल अति, दुर्गति पंथ सहाई ॥
मोह उदय यह जीव अज्ञानी, भोग भले कर जानै ।
ज्यों कोई जन खाय धतूरा, सो सब कञ्चन मानै ॥

ज्यों-ज्यो भोग संयोग मनोहर, मनवांछित जन पावै।
तृष्णा नागिन त्यों त्यों डंकै, लहर जहर की आवै॥
मैं चक्रीपद पाय निरन्तर, भोगे भोग घनेरे।
तौ भी तनक भये नहिं पूरण, भोग मनोरथ मेरे॥
राज समाज महा अघकारण, वैर बढ़ावन हारा।
वेश्यासम लछमी अति चञ्चल, याका कौन पत्यारा॥
मोह महारिपु वैर विचार्यो, जगजिय सङ्कट डारे।
घर कारागृह वनिता वेड़ी, परिजन जन रखवारे॥
सम्यक्दर्शन ज्ञानचरण तप, ये जिय के हितकारी।
येही सार असार और सब, यह चक्री चितधारी॥
छोड़े चौदह रत्न नवोंनिधि अरु छोड़े संग साथी॥
कोड़ि अठारह घोड़े छोड़े, चौरासी लख हाथी॥
सहस छियानवे रानी छोडी, अरु छोडा घर बारा।
सकल अवस्था ऐसे त्यागी, ज्यो जल बीच बतासा॥
इत्यादिक सम्पति बहुतेरी, जीरणतृण सम त्यागी।
नीति विचार नियोगी सुतको, राज दियो बड़भागी॥
होय निःशल्य अनेक नृपति संग, भूषणवसन उतारे।
श्रीगुरु चरण धरी जिन मुद्रा, पंच महाव्रत धारे॥
धनि यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम, धनि यह धीरज धारी।
ऐसी सम्पति छोड़ बसे वन, तिनपद धोक हमारी॥
दोहा—परिग्रह पोट उतार सब, लीनों चारित पंथ।
निज स्वभावमें थिर भये, बज्रनाभि निरग्रन्थ॥

मेरी भावना

जिसने राग दोष कामादिक जीते सब जग जान लिया ।
सब जीवोंको मोक्षमार्गका निस्पृह हो उपदेश दिया ॥
बुद्ध वीर जिन हरि हर ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो ।
भक्ति-भावसे प्रेरित हो यह चित्त उसीमें लीन रहो ॥
विषयोंकी आशा नहिं जिनके साम्य-भाव धन रखते हैं ।
निज-परके हित-साधनमें जो निश-दिन तत्पर रहते हैं ॥
स्वार्थ-त्यागकी कठिन तपस्या विना खेद जो करते हैं ।
ऐसे ज्ञानी साधु जगतके दुख-समूहको हरते हैं ॥
रहे सदा सत्संग उन्हींका ध्यान उन्हींका नित्य रहै ।
उनहीं जैसी चर्यामें यह चित्त सदा अनुरक्त रहै ॥
नहीं सताऊँ किसी जीवको झूठ कभी नहिं कहा करूँ ।
परधन-वनितापर न लुभाऊँ, संतोषामृत पिया करूँ ॥
अहंकारका भाव न रक्खूं नहीं किसीपर क्रोध करूँ ।
देख दूसरोंकी बढतीको कभी न ईर्षा-भाव धरूँ ॥
रहे भावना ऐसी मेरी सरल-सत्य-व्यवहार करूँ ।
बनै जहां तक इस जीवनमें औरौंका उपकार करूँ ॥
मैत्रीभाव जगतमें मेरा सब जीवोंसे नित्य रहे ।
दीन-दुखी जीवोंपर मेरे उरसे करुणा-स्रोत बहे ॥
दुर्जन-क्रूर-कुमार्गरतों पर क्षोभ नहीं मुझको आवै ।
साम्यभाव रक्खूं मै उनपर, ऐसी परिणति हो जावै ॥
गुणी जनोंको देख हृदयमें मेरे प्रेम उमड आवै ।
बनै जहांतक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावै ॥

होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं द्रोह न मेरे उर आवे।
गुण-ग्रहणका भाव रहे नित दृष्टि न दोषोंपर जावे॥
कोई बुरा कहो या अच्छा लक्ष्मी आवे या जावे।
लाखों वर्षों तक जीऊँ या मृत्यु आज ही आ जावे॥
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे।
तो भी न्याय-मार्गसे मेरा कभी न पद डिगने पावे॥
होकर सुखमें मग्न न फूले दुखमें कभी न घबरावे।
पर्वत-नदी श्मशान भयानक अटवीसे नहिं भय खावे॥
रहे अडोल-अकंप निरंतर यह मन दृढ़तर बन जावे।
इष्टवियोग-अनिष्टयोगमें सहन-शीलता दिखलावे॥
सुखी रहें सब जीव जगतके कोई कभी न घबरावे।
बैर-पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावे॥
घर-घर चर्चा रहे धर्मकी दुष्कृत दुष्कर हो जावें।
ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना मनुज-जन्म-फल सब पावें॥
ईति भीति व्यापै नहि जगमें वृष्टि समयपर हुआ करै।
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजाका किया करै॥
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले प्रजा शांतिसे जिया करै।
परम अहिंसा-धर्म जगतमें फैल सर्व-हित किया करै॥
फैले प्रेम परस्पर जगमें मोह दूर ही रहा करै।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहिं कोई मुखसे कहा करै॥
बनकर सब 'युगवीर' हृदयसे देशोन्नति रत रहा करैं।
वस्तु-स्वरूप-विचार खुशीसे सब दुख-संकट सहा करैं॥

भजन

श्रीसिद्धचक्रकापाठकरोदिनआठ,ठाटसेप्राणी,फलपायोमैनारानी॥ टेक

मैना सुन्दरि एक नारी थी, कोढ़ी पति लखि दुःखियारी थी।
नहिं पडै चैन दिन रैन व्यथित अकुलानी, फल पायो मैना रानी॥
जो पति का कष्ट मिटाऊंगी, तो उभय लोक सुख पाऊँगी।
नहिं अजागलस्तनवत निष्फल जिन्दगानी, फल पायो मैना रानी॥
इक दिवस गई जिन मन्दिर मे, दर्शन करि अति हर्षी उर मे।
फिर लखे साधु निर्ग्रन्थ दिगम्बर ज्ञानी, फल पायो मैना रानी॥
वैठी मुनि को कर नमस्कार, निज निन्दा करती बार-बार।
भरि अश्रु नयन कहि मुनिसो दुःखद कहानी, फल पायो मैना रानी॥
बोले मुनि पुत्री धैर्य धरो, श्री सिद्धचक्र का पाठ करो।
नहिं रहे कुष्ट की तन मे नाम निशानी, फल पायो मैना रानी॥
सुनि साधु वचन हर्षी मैना, नहिं होय झूठ मुनि के वैना।
करिके श्रद्धा श्री सिद्धचक्र की ठानी, फल पायो मैना रानी॥
जब पर्व अठाई आया है, उत्सवयुक्त पाठ कराया है।
सबके तन छिड़का यन्त्र न्हवन का पानी, फल पायो मैना रानी॥
गन्धोदक छिड़कत वसु दिन मे, नहिं रहा कुष्ट किंचित तन मे।
भई सात शतक की काया स्वर्ण समानी, फल पायो मैना रानी॥
भव भोगि-भोगि योगेश भये, श्रीपाल कर्म हनि मोक्ष गये।
दूजे भव मैना पावै शिव रजधानी, फल पायो मैना रानी॥
जो पाठ करे मन वच तन से, वे छूटि जाय भव बन्धन से।
'मक्खन' मत करो विकल्प कहा जिनवानी, फल पायो मैना रानी॥

आराधना पाठ

मै देव नित अरहन्त चाहूं, सिद्ध का सुमिरण करौ।
मै सूर गुरु मुनि तीन पद, मैं साधुपद हिरदय धरौ॥
मैं धर्म करुणामयी चाहूँ, जहा हिंसा रञ्च ना।
मैं शास्त्र ज्ञान विराग चाहूं, जासु मे परपञ्च ना॥ १॥

चौबीस श्रीजिनदेव चाहूं, और देव न मन वसै।
जिन बीस क्षेत्र विदेह चाहूं, वन्दिते पातिक नसै॥
गिरिनार शिखर सम्मेद चाहूं, चम्पापुरी पावापुरी।
कैलाश श्रीजिन-धाम चाहूँ, भजत भाजे भ्रम जुरी॥ २॥

नवतत्व का सरधान चाहूं, और तत्व न मन धरौ।
षट् द्रव्य गुण परिजाय चाहूं, ठीक तासो भय हरौ॥
पूजा परम जिनराज चाहूं, और देव नही सदा।
तिहुँकाल की मैं जाप चाहूं, पाप नहि लागे कदा॥ ३॥

सम्यक्त दरशन ज्ञान चारित, सदा चाहूं, भावसो।
दशलक्षणी मैं धर्म चाहूं, महा हर्ष उछावसो॥
सोलह जु कारण दुःख निवारण, सदा चाहूं प्रीतिसो।
मै चित्त अठाई पर्व चाहूं, महा मङ्गल रीतिसो॥ ४॥

मै वेद चारो सदा चाहूं, आदि अन्त निवाहसो।
पाए धरम के चार चाहूं, अधिक चित्त उछाहसो॥
मैं दान चारो सदा चाहूं, भुवन वशि लाहो लहूं।
आराधना मैं चारि चाहूं, अन्त मे जेई गहूं॥ ५॥

भावना बारह सदा भाऊँ, भाव निर्मल होत है।
मैं व्रत जु बारह सदा चाहूँ, त्याग भाव उद्योत है॥
प्रतिमा दिगम्बर सदा चाहूँ, ध्यान आसन सोहना।
वसुकर्म तैं मैं छुटा चाहूँ, शिव लहूँ जहं मोहना॥ ६॥
मैं साधुजन को संग चाहूँ, प्रीति तिनही सौं करों।
मैं पर्व के उपवास चाहूँ, सब आरम्भे परिहरौं॥
इस दुःखद पंचमकाल माहीं, कुल श्रावक मैं लहो।
अरु महाव्रत धरि सकौं नाहीं, निबल तन मैंने गहो॥ ७॥
आराधना उत्तम सदा चाहूँ, सुनो जिनरायजी।
तुम कृपानाथ अनाथ 'द्यानत', दया करना नाथजी॥
वसुकर्म नाश विकाश ज्ञान, प्रकाश मोको कीजिये।
करि सुगति गमन समाधिमरण, सुभक्ति चरणन दीजिए॥ ८॥

मरण भय

मरण क्या है? दश प्राणों का वियोग हो जाना ही तो मरण है। पाँच इन्द्रिय, तीन बल, एक आयु और एक श्वासोच्छ्वास इनका वियोग होते ही मरण होता है। परन्तु यह अनाद्यनन्त, नित्योद्योत और ज्ञानस्वरूपी अपने को चिन्तवन करता है। एक चेतना ही उसका प्राण है। तीन काल में उसका वियोग नहीं होता। अतः चेतनामयी ज्ञानात्मा के ध्यान से उसे मरण का भी भय नहीं होता। इस प्रकार सात भयों में से वह किसी प्रकार भय नहीं करता। अतः सम्यग्दृष्टि पूर्णतया निर्भय है।

—'वर्णी वाणी' से

अठाईरासा

प्राणी वरत अठाई जे करै, ते पावें भव पार ॥ प्राणी०
जम्बूद्वीप सुहावनो, लख योजन विस्तार ।
भरतक्षेत्र दक्षिण दिशा, पोदनपुर हित सार ॥ प्राणी०
विद्यापति विद्या धरी, सोमा रानी राय ।
समकित श्रावक व्रत धरै, धर्म सुने अधिकाय ॥ प्राणी०
चारण मुनि तहा, पारणे आये राजा गेह ।
सोमा राणी आहार दे, पुण्य बढ़ो अति नेह ॥ प्राणी०
तिस समय नभ मे देवता, चले जात विमान ।
जय जय शब्द भयो, घनो मुनिवर पूछो ज्ञान ॥ प्राणी०
मुनिवर बोले राय सुनि, नन्दीश्वर सुर जात ।
जे नर करहि स्वभाव सो, ते होवे शिवकन्त ॥ प्राणी०
यही वचन रानी सुने, मन मे भयो आनन्द ।
नन्दीश्वर पूजा करै, ध्यावै आदि जिनेन्द्र ॥ प्राणी०
कार्तिक फाल्गुन षाढ़ मे, पालौ मन वच देह ।
बसु दिन बसु पूजा करै, तीन भवान्तर लेह ॥ प्राणी०
विद्यापति सुनि चालियौ, रच्यो विमान अनूप ।
रानी वरजै राय को, तुम तो मानुष भूप ॥ प्राणी०

मानुषोत्तर लघत नहीं, मानुष जाती जात ।
जिनवाणी निश्चय सही, तीन भुवन विख्यात ॥ प्राणी०

सो विद्यापति ना रहो, चलो नन्दीश्वर द्वीप ।
मानुषोत्तर गिरिसो मिलो, जायो न जाय महीप ॥ प्राणी०

मानुषोत्तर से भेंटते, परो धरणि सिर भार ।
विद्यापति भव छूटियो, देव भयो सुरसार ॥ प्राणी०

द्वीप नन्दीश्वर छिनक मे, पूजा वसु विधि ठान ।
करी सुमन वच काय से, माला पहनी आन ॥ प्राणी०

विद्यापति को रूप धरि, परखन रानी बात ।
आनन्द सो घर आइयो, नन्दीश्वर करि जात ॥ प्राणी०

रानी बोले रायसों, यह तो कबहुं न होय ।
जिनवाणी मिथ्या नहीं, निश्चय मन में सोय ॥ प्राणी०

नन्दीश्वर जयमाल को, राय दिखाई आणि ।
अब सांचो मोहि जानियो, पूजा करी बहुमान ॥ पाणी०

रानी फिर तासों कहै, यह भव परसैं नाहिं ।
पश्चिम सूरज ऊगई, हो विष अमृत माहि ॥ प्राणी०

चन्द अङ्गारा जो भरे, निशा कमल उपजन्त ।
रवि अन्धेरा जो करे, वालू घी निकलन्त ॥ प्राणी०

पुनि रानी सो नृप कहे, बावन भवन जिनाल।
तेरह चोका बन्दि कर, पूज करी तत्काल ॥ प्राणी० ॥
जयमाला तहाँ मो मिली, आयो हूँ तुम पास।
अब तू मिथ्या मत कहे, पूज करी तज आस ॥ प्राणी० ॥
पूरब दक्षिण वन्दि कर, पश्चिम उत्तर जान।
मिथ्या भाषौ हूँ नही, मोहि जिनवर की आन ॥ प्राणी० ॥
सुन राजा तैं सच कही, जिनवाणी शुभसार।
ढाई दीप न लघई, मानुष गिरि विस्तार ॥ प्राणी० ॥
विद्यापति से सुर भयो, रूप धारि यह सोय।
रानी को तब स्तुति करी, निश्चय समकित तोय ॥ प्राणी० ॥
देव कहे रानो सुनो, मानुषोत्तर गिरि जाय।
तहँ तै चय मैं सुर भयो, पूजि नन्दीश्वर आय ॥ प्राणी० ॥
एक भवान्तर मो रहो, जिन शासन परमाण।
मिथ्याती माने नहीं, श्रावक निश्चय आण ॥ प्राणी० ॥
सुरचय तहाँ हथनापुरी, राज कियो भरपूर।
परिग्रह तज संयम लियो, कर्म महागिरि चूर ॥ प्राणी० ॥
केवलज्ञान उपाय कर, मोक्ष गयो मुनिराय।
शाश्वत सुख विलसे सदा, जामन मरण मिटाय ॥ प्राणी० ॥
अब रानो की सुन कथा, संयम लीनो सार।
तप करके वह सुर भई, विलसे सुख विस्तार ॥ प्राणी० ॥

गजपुर नगरी अवतरी, राज करै बहु भाय।
सोलह कारण भाइयो, धर्म सुनो अधिकाय ॥ प्राणी० ॥
मुनि संघाटक आइयो, माली सार जनाय।
राजा वन्दे भावसो, पुण्य बढ़ौ अधिकाय ॥ प्राणी० ॥
राजा मन वैरागियो, संयम लीनो सार।
आठ सहस नृप साथ ले, यह ससार असार ॥ प्राणी० ॥
केवलज्ञान उपाय के, दोय सहस निर्वाण।
दोय सहस सुख स्वर्ग के, भोगे भोग सुथान ॥ प्राणी० ॥
चार सहस भूलोक मे भोगे बहु ससार।
काल पाय शिव जायेंगे, उत्तम धर्म विचार ॥ प्राणी० ॥
याही मानुष लोक में, तीन जनम परमाण।
लोकालोक सुजान ही, सिद्धारथ कुल ठाण ॥ प्राणी० ॥
भव समुद्र के तरण को, बावन नौका जान।
जे जिय करे स्वभावसो, जिनवर साच बखान ॥ प्राणी० ॥
मन वच काया जे पढे, ते पावे भव पार।
विनय कीर्ति सुख सो भणे, जनम सफल ससार ॥
प्राणी बरत अठाई जे करे, ते पावें भव पार ॥ प्राणी० ॥



बारहभावना मंगतरायकृत

दोहा—वन्दू श्री अरहन्तपद, वीतराग विज्ञान।
वरणूँ बारह भावना, जगजीवनहित जान॥ १॥

छन्द—कहाँ गये चक्री जिन जीता, भरतखण्ड सारा।
कहाँ गये वह रामरु लछमन, जिन रावन मारा॥
कहाँ कृष्ण रुक्मिणि सतभामा, अरु संपति सगरी।
कहाँ गये वह रङ्गमहल अरु, सुवरन की नगरी॥ २॥

नहीं रहे वह लोभी, कौरव जूझ मरे रन में।
गये राज तज पांडव वन को, अगनि लगी तन में॥
मोहनींद से उठ रे चेतन, तुझे जगावन को।
हो दयाल उपदेश करैं गुरु, बारह भावन को॥ ३॥

१ अथिर भावना।

सूरज चाँद छिपै निकलै ऋतु, फिर-फिर कर आवै।
प्यारी आयू ऐसी बीतै, पता नहीं पावै॥
पर्वत पतित नदी सरिता, जल बहकर नहीं हटता।
स्वास चलत यों घटै काठ ज्यों, आरेसों कटता॥ ४॥

ओसबूंद ज्यों गलै धूप में, वा अंजुलि पानी।
छिन-छिन यौवन छीन होत है, क्या समझै प्रानी॥
इन्द्रजाल आकाश नगर सम, जगसंपति सारी।
अथिर रूप संसार विचारो, सब नर अरु नारी॥ ५॥

२ अशरण भावना।

कालसिंह ने मृगचेतन को, घेरा भव वन मे।
नहीं बचावनहारा कोई, यों समझो मन मे॥
मन्त्र यन्त्र सेना धन संपति, राज पाट छूटै।
वश नहिं चलता काल लुटेरा, काय नगरि लूटै॥ ६॥
चक्ररतन हलधरसा भाई, काम नहीं आया।
एक तीर के लगत कृष्ण की, विनश गई काया॥
देव धर्म गुरु शरण जगत में, और नहीं कोई।
भ्रम से फिरै भटकता चेतन, यूँही उमर खोई॥ ७॥

३ संसार भावना।

जनम मरन अरु जरा रोग से, सदा दुःखी रहता।
द्रव्य क्षेत्र अरु कालभाव भव, परिवर्तन सहता॥
छेदन भेदन नरक पशुगति, बध बन्धन सहना।
राग उदय से दुःख सुरगति में, कहां सुखी रहना॥ ८॥
भोगि पुण्यफल हो इकइन्द्री, क्या इसमें लाली।
कुतवाली दिन चार वही फिर, खुरपा अरु जाली॥
मानुप जन्म अनेक विपतिमय, कहीं न सुख देखा।
पञ्चमगति सुख मिलै शुभाशुभ को, मेटो लेखा॥ ९॥

४ एकत्व भावना।

जन्मै मरै अकेला चेतन, सुख दुःख का भोगी।
और किसीका क्या इक दिन यह, देह जुदी होगी॥

कमला चलत न पैंड जाय, मरघट तक परिवारा।
अपने-अपने सुख को रोवैं, पिता पुत्र दारा॥ १०॥

ज्यों मेले में पथीजन, मिलि नेह फिरै धरते।
ज्यों तरुवर पै रैन बसेरा, पंछी आ करते॥
कोस कोई दो कोस कोई, उड फिर थक-थक हारै।
जाय अकेला हंस संग में, कोई न पर मारै॥ ११॥

५ भिन्न (अन्यत्व) भावना।

मोहरूप मृगतृष्णा जग में, मिथ्या जल चमकै।
मृग चेतन नित भ्रम में उठ-उठ, दौड़ैं थक-थककै॥
जल नहिं पावै प्राण गमावे, भटक-भटक मरता।
वस्तु पराई मानै अपनी, भेद नहीं करता॥ १२॥

तू चेतन अरु देह अचेतन, यह जड तू ज्ञानी।
मिले अनादि यतनतैं बिछुडै, ज्यों पय अरु पानी॥
रूप तुम्हारा सबसों न्यारा, भेद ज्ञान करना।
जौलों पौरुष थकैं न तौलों, उद्यमसों चरना॥ १३॥

६ अशुचि भावना।

तू नित पोखै यह सूखे ज्यों, धोवै त्यों मैली।
निश दिन करै उपाय देह का, रोगदशा फैली॥
मात-पिता रज वीरज मिल कर, बनी देह तेरी।
मास हाड़ नश लहू राधकी, प्रगट व्याधि घेरी॥ १४॥

काना पौंडा पड़ा हाथ, यह, चूसै तौ रोवै।
फलै अनन्त जु धर्म ध्यान की, भूमिविषै बोव॥
केसर चन्दन पुष्प सुगन्धित, वस्तु देख सारी।
देह परसते होय अपावन, निशदिन मल जारी॥ १५॥

७ आस्रव भावना।

ज्यों सरजल आवत मोरी त्यों, आस्रव कर्मन को।
दर्वित जीव प्रदेश गहै जब, पुद्गल भरमन को॥
भावित आस्रव भाव शुभाशुभ, निशदिन चेतन को।
पाप पुण्य के दोनों करता, कारण बन्धन को॥ १६॥
पँन मिथ्यात योग पन्द्रह, द्वादश अविरत जानो।
पंचरु बीस कषाय मिले सब, सत्तावन मानो॥
मोहभाव की ममता टारै, पर परणत खोते।
करै मोक्ष का यतन निरास्रव, ज्ञानी जन होते॥ १७॥

८ संवर भावना।

ज्यों मोरी में डाट लगावै, तब जल रुक जाता।
त्यों आस्रव को रोकै संवर, क्यों नहिं मन लाता॥
पञ्च महाव्रत समिति गुप्तिकर, वचन काय मन को।
दश विध धर्म परीषह बाइस, बारह भावन को॥ १८॥
यह सब भाव सतावन मिलकर, आस्रव को खोते।
सुपन दशा से जागो चेतन, कहां पड़े सोते॥
भाव शुभाशुभ रहित, शुद्ध भावन संवर पावै।
डाट लगत यह नाव पड़ी, मझधार पार जावै॥ १९॥

९ निर्जरा भावना।

ज्यों सरवर जल रुका सूखता, तपन पड़ै भारी।
संवर रोकै कर्म निर्जरा, ह्वै सोखनहारी॥
उदय भोग सविपाक समय, पक जाय आम डाली।
दूजी है अविपाक पकावै, पालविषै माली॥ २०॥
पहली सबके होय नहीं, कुछ सरै काम तेरा।
दूजी करै जु उद्यम करके, मिटै जगत फेरा॥
संवर सहित करो तप प्रानी, मिलै मुकत रानी।
इस दुलहिन की यही सहेली, जानै सब ज्ञानी॥ २१॥

१० लोक भावना।

लोक अलोक आकाश माहिं थिर, निराधार जानो।
पुरुषरूप कर कटी भये षट्, द्रव्यनसो मानों॥
इसका कोइ न करता हरता, अमिट अनादी है।
जीवरु पुद्गल नाचै यामें, कर्म उपाधी है॥ २२॥
पाप पुन्यसों जीव जगत में, नित सुख दुःख भरता।
अपनी करनी आप भरै शिर, औरन के धरता॥
मोहकर्म को नाश मेटकर, सब जग की आसा।
निज पद मे थिर होय, लोक के, शीश करो बासा॥ २३॥

११ बोधिदुर्लभ भावना।

दुर्लभ है निगोद से थावर, अरु त्रसगति प्रानी।
नरकाया को सुरपति तरसै, सो दुर्लभ प्रानी॥

उत्तम देश सुसंगति दुर्लभ, श्रावककुल पाना।
दुर्लभ सम्यक दुर्लभ संयम, पञ्चम गुण ठाना॥ २४॥
दुर्लभ रत्नत्रय आराधन दीक्षा का धरना।
दुर्लभ मुनिवर को व्रत पालन, शुद्ध भाव करना॥
दुर्लभ से दुर्लभ है चेतन, बोधिज्ञान पावै।
पाकर केवलज्ञान नहीं फिर, इस भव में आवै॥ २५॥

१२ धर्म भावना।

षट दरशन अरु बौद्ध व नास्तिक ने, जग को लूटा।
मूसा ईसा और मुहम्मद का, मजहब झूठा॥
हो सुछन्द सब पाप करैं सिर, करता के लावैं।
कोई छिनक कोई करता से, जग में भटकावैं॥ २६॥
वीतराग सर्वज्ञ दोष बिन, श्रीजिन की वानी।
सप्त तत्त्व का वर्णन जामें, सबको सुखदानी॥
इनका चिंतवन बार-बार कर, श्रद्धा उर धरना।
'भगत' इसी जतनतैं इकदिन, भवसागर तरना॥ २७॥

॥ इति सुनपत नगर निवासी भगतरायजीकृत बारह भावना समाप्त॥

वर्णी-वाणी की डायरी से

■ मन की शुद्धि बिना काय शुद्धि का कोई महत्त्व नहीं।

■ जो मनुष्य अपने मनुष्यपने की दुर्लभता की ओर देखता है, वही संसार से पार होने का उपाय अपने आप खोज लेता है।

तत्वार्थसूत्र पूजा

षट् द्रव्य को जामें कह्यो जिनराज-वाक्य प्रमाण सों।
किय तत्त्व सातों का कथन जिन-आप्त-आगम मान सों॥
तत्वार्थ-सूत्रहि शास्त्र सो पूजो भविक मन धारि के।
लहि ज्ञान तत्त्व विचार भवि शिव जा भवोदधि पार के॥

दोहा—जामें षट् द्रव्यहिं कह्यो, कह्यो तत्त्व पुनि सात।
सो दश सूत्रहि थापि के, जजैं कर्म कटि जात॥

ॐ ह्रीं [illegible]।
ॐ ह्रीं [illegible]।
ॐ ह्रीं [illegible]

सुरसरी कर नीर सुलाय के, करि सुप्रासुक कुम्भ भराय के।
जजन सूत्रहिं शास्त्रहिको करो, लहि सुतत्त्व-ज्ञानहि शिववरो।

ॐ ह्रीं [illegible]

मलयदारु पवित्र मंगायके, घसि कपूरवरेण मिलायके। ज०

ॐ ह्रीं [illegible]

सुनवशालिसुगंधितलायके, खंड विवर्जित थाल भरायके। ज०

ॐ ह्रीं [illegible]।

सुमन वेल चमेलिहिकेवरा, जिनसुगंधदशोंदिश विस्तरा। ज०

ॐ ह्रीं [illegible]।

वर सुहाल सुफेनि हिं मोदका, रसगुला रसपूरित ओदका। ज०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवद्वादशांगसारभूताय श्रीतत्वार्थसूत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य०।

घृत कपूर मणीकर दीयरा, करि उद्योत हरौ तम हीयरा। ज०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवद्वादशांगसारभूताय श्रीतत्वार्थसूत्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं०

बहु सुगंधित धूप दशांगहीं, धरि हुताशन धूम उठावहीं। ज०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवद्वादशांगसारभूताय श्रीतत्वार्थसूत्राय अष्टकर्मदहनाय धूप०।

क्रमुकदाख बदामअनारला, नरंगनीबूहिं आमहिं श्रीफला। ज०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवद्वादशांगसारभूताय श्रीतत्वार्थसूत्राय मोक्षफलप्राप्तये फल०।

जल सुचंदन आदिक द्रव्य ले, अरघके भरि थालहिं ले भले। ज०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवद्वादशांगसारभूताय श्रीतत्वार्थसूत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं०।

सवैया

विमल विमल वाणी, श्री जिनवर बखानी।
सुन भये तत्वज्ञानी ध्यान-आतम पाया है॥
सुरपति मनमानी, सुरगण सुखदानी।
सुभव्य उर आना, मिथ्यात्व हटाया है॥
समझहिं सब नीके, जीव समवशरण के।
निज-निज भाषा मांहि, अतिशय दिखानी है॥
निरअक्षर अक्षर के, अक्षरन सों शब्द के।
शब्द सों पद बने, जिन जु बखानी है॥

पादाकुलक छन्द—

संसार मोह में मोह तरा, प्रगटी जिनवाणी मोह हरा।
उद्धरत हो तम नाश करा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणि वरा॥
अति मानसरोवर झील खरा, करुणारस पूरित नीर भरा।
दश-धर्म वहे शुभ हंस तरा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणि वरा॥
कल्पद्रुम के सम ज्ञानतरा, रत्नत्रय के शुभ पुष्प वरा।
गुण तत्त्व पदार्थन पात्र करा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणि वरा॥
वसुकर्म महारिपु दुष्ट खरा, तसु उपजी फैली वेली वरा।
तसु नाशन वाहि कुठार करा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणि वरा॥
मद मायर लोभऽरु क्रोध धरा, ए कषाय महादुःखदाय तरा।
तिन नाशि भवोदधि पार करा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणि वरा॥
वर षोडश कारण भाव धरा, षट् कायन रक्षण नियम करा।
मद आठहु मदि के गर्द करा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणि वरा॥
जिनवाणि न जाने त्रिजगत फिरा, जड़ चेतन भाव न भिन्न वरा।
नहिं पायो आतम बोध वरा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणि वरा॥
शुभ-कर्म उद्योत कियो हियरा, जिनवाणिहि ज्ञान जग्यो जियरा।
भवभर मणहर शिव मार्ग धरा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणि वरा॥
सुत कन्हैयालाल परणाम करा, भगवानदास जिहि नाम धरा।
जिनवाणि वसो नित तिहि हियरा, प्रणमामि सूत्र जिनवाणि वरा॥

घत्ता ।

जिनवाणी माता सब सुख दाता.भवभ्रमहर मुक्तिकरा।
शुभ सूत्रहिं शास्त्रहिं,वारहि वारहि दासजोरिकरनमनकरा

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवस्याद्वादनयगर्भिताय श्रीतत्त्वार्थसूत्राय अर्घ्यं निर्वपामीति० ।

जे पूजें ध्यावें भक्ति बढ़ावै जिनवाणी सेती ।
ते पावहिं धन धान्य सम्पदा पुत्र पौत्र जेती ॥
निरोग शरीर लहैं कीरति जग हरै भ्रमण फेरी ।
अनुक्रम सेती लहैं मोक्षथल तहं के होय वसेरी ॥

इति श्रीतत्त्वार्थसूत्र पूजा समाप्त ।

श्रीऋषभदेवके पूर्वभव

कवित्त मनहर ।

आदि जयवर्मा दूजे महानलभूप तीजे,
सुरगईशान ललितांग देव थयो है ।
चौथे वज्रजंघ एह पांचवें जुगल देह
सम्यक ले दूजे देवलोक फिर गयो है ॥
सातवें सुबुद्धिराय आठवें अच्युतइन्द्र,
नवमे नरेन्द्र वज्रनाभ नाम भयो है ।
दशें अहमिन्द्र जान ग्यारवें ऋषभ-भान,
नाभिनंद-भूधरके, शीस जन्म लयो है ॥ ८२ ॥

सुगन्ध दशमी व्रत कथा

भादों सुदी दशमी के दिन सुगन्धित धूप से सुखने के बाद स्त्री-पुरुषों को सुयोग्य वक्ता द्वारा सुगन्ध दशमी व्रत कथा का श्रवण करना चाहिये।

चौपाई।

पञ्च परम गुरु वन्दन करूं, ताकर मम अघ बन्धन हरूं।
सार सुगन्ध दशैं व्रत कथा, भाषत हूं भाषी जिन यथा ॥ १ ॥
अरु गुरु शारद के परसादि, कहस्यूं भेद सार पूजादि।
जे भवि इह व्रत करिहैं सही, तिन स्वर्गादिक पदवी लही ॥ २ ॥
सन्मति जिन गौतम मुनिराय, तिनके पद नमि श्रेणिक राय।
करत भयो इम थुति सुखकार, बिन कारण जग बन्धु करार ॥ ३ ॥
भव्य कमल प्रतिबोधन सूर्य, मुक्ति पन्थ निरवाहन धूर्य।
श्रुतिवारिधि को पोत समान, इन्द्रादिक तुम सेवक जान ॥ ४ ॥
व्रत सुगन्ध दशमी इह सार, कीन्हूं किनि किमि विधि विस्तार।
अरु याको फल कैसो होय, मोकू उपदेशो मुनि सोय ॥ ५ ॥
गौतम बोले सुन भूपाल, पुण्य कथा यह व्रत की माल।
भूप प्रश्न तुम उत्तम कस्यो, मैं भापू जो जिन उच्चस्यो ॥ ६ ॥
सुनत मात्र व्रत को विस्तार, पाप अनन्त हरै तत्काल।
जे कर्ता क्रमतैं शिव जाय, और कहा कहिये अधिकाय ॥ ७ ॥

दोहा—जम्बू द्वीप विषै यहां, भरत क्षेत्र सु जान।
वहां देश काशी लसै, पुर वाराणसी मान ॥ ८ ॥

चौपाई।

पद्मनाभ जाको भूपाल, कीन्हूं वसुमद को परिहार।
सप्त व्यसन तजि गुण उपजाय, ऐसे राज करे सुखदाय ॥ ९ ॥

श्रीमती ताकै पर नारि, निज पतिकूं अति ही सुखकारि ।
एक समय वन क्रीड़ा हेत, जात हतो निज सैन्य समेत ॥ १० ॥
निज पुरमें से जब ही गयो, तब मन माहीं आनन्द लयो ।
तबही एक मुनीश्वर सार, मास वास करिके भवतार ॥ ११ ॥
असन काजि आते मुनि जोय, राणीसौं भाखे नृप सोय ।
तुम जावो द्यो भोजन सार, कीजो मुनिकी भक्ति अपार ॥ १२ ॥
इम सुणि राणी मन इम भयो, भोगों में मुनि अन्तर करयो ।
दुःखदायी पापी मुनि आय, मेरे सुख इन दियो गमाय ॥ १३ ॥
मनहीं में दुःखी अति घणी, आज्ञा मान नहीं पति तणी ।
जाय दियो भोजन तत्काल, जाणै और सुनो भूपाल ॥ १४ ॥
मुनि भूपतिके ही घर गयो, राणी असन महानिन्द्य दयो ।
कटुतूंबी को जु अहार, दियो मुनीश्वरकूं दुःखकार ॥ १५ ॥
भोजन करि चाले मुनिराय, मारग माहिं गहल अति आय ।
पड़े भूमि पर तब मुनिराज, किये श्रावकों देखि इलाज ॥ १६ ॥
नेड़े एक जिनालय सार, तहां ले गये करि उपचार ।
फेरि नरेन्द्र गेहे वन फरो, राणी खोटो भोजन दयो ॥ १७ ॥
जाने मुनी महा दुःख पाय, शून्य हो गये हैं अधिकाय ।
धिर-धिरके हैं ताको अति घणू, दुष्ट स्वभाव अधिक जा तणू ॥ १८ ॥
तबही वनसौं आयो राय, सुणी बात राजा दुःख पाय ।
रानीसों खोटे वच कहे, वस्त्राभरण खोसि करि लये ॥ १९ ॥
काढ़ि दई घर बाहरि जबै, दुःखी भई अति ही सो तबै ।
क्षुधातुर है आरत कियो, प्राण छोरि महिषी तन लियो ॥ २० ॥

याकी मात भैंस मर गई, तब ये अति दुर्बलता लई।
एक समय कर्दम मधि जाय, मग्न भई नाना दुःख पाय ॥ २१ ॥
तहां थकी देख्यो मुनि कोय, सींग हलाये क्रोधित होय।
तबही पंक विषैं गडि गई, प्राण छोरि खरणी उपजई ॥ २२ ॥
भई पाँगुरी पिछले पाय, तबही एक मुनीश्वर आय।
पूरब वैर सु मन मे ठयो, तहां कलुप परिणाम जु भयो ॥ २३ ॥

दोहा—कियो क्रोध मन में घणू, दई दुलाती जाय।
प्राण छोरि निज पापतैं, लई सूकरी काय ॥ २४ ॥
स्वानादिक के दुःखतैं, भूखी प्यासी होय।
मरिकर चण्डाली सुता, उपजी निन्दित सोय ॥ २५ ॥

चौपाई—गर्भ आवतां विनस्यो तात, उपजता तन त्यागो मात।
पालै सुजन मरै फुनि सोय. अरु आवत तन में बदबोय ॥
इक योजनलों आवै बांस, ताहि थकी आवै नहिं स्वांस।
पञ्च अभख फल खावो करै, ऐसी विधि वन में सो फिरै ॥
यहां एक मुनि शिष्य जु देख, राग द्वेष तजि शुद्ध विशेष।
ता वन में आये गुण भरे, लघु मुनि गुरुसों प्रश्न जु करै ॥
बासनिन्द्य आवे अधिकाय, स्वामी कारण मोहि बताय।
मुनि भाषैं सुनि मनवचकाय, जो प्राणी ऋषि को दुःखदाय ॥
ते नाना दुःख पावै सही, मुनि निन्दा सम अघको नही।
कन्या ईनि पूरब भवमांहिं, मुनि दुःखायो थो अधिकाहिं ॥
ता करि तिरजगमे दुःख पाय, भई वधिकके कन्या जाय।
सो इह देखि फिरतु है बाल, मुनि सशय भागो ततकाल ॥

दोहा—पुनि गुरुसे इम शिष्य कहैं, अब किमि इनि अघजाय।
मुनि बोले जिन-धर्म कों, धारे पाप पलाय ॥३२॥

चौपाई—गुरु शिष्य वचन सुता इम सुन्यो, उपशम भाव सुखाकर गुन्यो।
पञ्च अभक्ष फल त्यागे जबै, अनन मिले लागो शुभ तबै ॥
गुरु भाव सों छोरे प्रान, नगर उज्जैनी श्रेणिक जान।
तहां दरिद्री द्विज इक रहै, पाप उदै करि बहु दुःख लहै ॥
वा द्विज के यह पुत्री भई, पिता मात जम के वसि थई।
तब यह दुःखवती अति होय, पाप समान न वैरी कोय ॥
कष्ट-कष्ट करि वृद्धि जु भई, एक समय सो वन में गई।
तहां सुदर्शन थे मुनिराय, अजितसेन राजा तिहिं जाय ॥
धर्म सुन्यो भूपति सुखकार, इह पुनि गई तहां तिहि बार।
अधिक लोक कन्या कूं जोय, पाप थकी ऐसो फल होय ॥

दोहा—आन तबै इह कन्यका, घासपुञ्ज सिरधारि।
खड़ी मुनि वच सुनत थी, पुनि निज भार उतारि ॥३८॥

चौपाई—मुनि मुखतें सुण कन्या भाय, पूरब भव सुमरण जब थाय।
याद करी पिछली वेदना, मूर्छा खाय परी दुःख घना ॥
तब राजा उपचार कराय, चेत करी फुनि पूछि बुलाय।
पुत्री तूं ऐसे क्यूं भई, सुणि कन्या तब यू वरनई ॥
पूरब भव विरतन्त बताय, मैं जु दुःखायो थो मुनिराय।
कटुक तूंबिका को जु आहार, दियो मुनिकू अति दुःखकार ॥
सो अघ अबलों पणि मुझ दहै, इम सुनि नृप मुनिवर सों कहै।
इह किन विधि सुख पावै अबै, तब मुनिराज बखान्यू तबै ॥

जब सुगन्ध दशमी व्रत धरै, तब कन्या अघ सचय हरै।
कैसी विधि याकी मुनिराय, तब ऋषि भादवमास बताय ॥
सुदि पञ्चमि दिनसों आचरै, यथाशक्ति नवमीलों करै।
दशमी दिन कीजै उपवास, ता करि होय अधिक अघनास ॥
शुक्ल पक्ष दशमी दिन सार, दश पूजा करि वसु परकार।
दश स्तोत्र पढ़िये मनलाय, दश मुख का घटसार बनाय ॥
ता में पावक उत्तम धरै, धूप दशांग खेय अघ हरै।
सप्त धान्य को साथ्यो सार, करि तापरि दश दीपक धार ॥
ऐसे पूज करै मनलाय, सुखकारी जिनराज बताय।
तातैं इह विधि पूजा करै, सो भवि जीव भवोदधि तरै ॥

दोहा—जिनकी पूज समान फल, हुवो न ह्वैसी कोय।
स्वर्गादिक पद को करै, पुनि देहै शिव जोय ॥ ४८ ॥

चौपाई—दश संवत्सरलों जो करै, ताही कै जिन गुण अवतरै।
करै बहुरि उद्यापन राय, सुनहु सुविधि तुम मन वचकाय ॥
महाशान्तिक अभिषेक करेय, जिनवर आगै पुहुप धरेय।
जो उपकरण धरे जिन थान, ताको भेद सुणू चित आन ॥
दश जु वर्णको चन्दवो लाय, सो जिन विम्ब उपरि तणवाय।
और पताका दश ध्वज सार, बाजै घण्टानाद अधार ॥
मुक्ति माल की शोभा करै, चमर युगल छवि अनुपम धरै।
और सुणूं आगैं मनलाय, प्रभु की भक्ति किये सुख थाय ॥
धूपदहन दश आरति आनि, सिंह पीठि आदिक पहचानि।
इत्यादिक उपकरण मंगाय, भक्ति भाव जुत भव्य चढ़ाय ॥

दान आहार आदि उच देय, ताकरि भवि अधिकौ फल लेय।
आर्याकौ अम्बर दीजिये, कुण्डी श्रुत नजरे कीजिये॥
यथा योग्य मुनि को दे दान, इत्यादिक उद्यापन जान।
जो नहिं इतनी शक्ति लगार, थोरो ही कीजे हितधार॥
जो न सर्वथा घर में होय, तो दूणू कीजे व्रत सोय।
पणि व्रत तौ करिये मनलाय, जो सुर मोक्ष सुथानक दाय॥

दोहा—शाक पिण्ड के दानतैं, रतन वृष्टि ह्वै राय।
यहां द्रव्य लागो कहां, भावनिकौ अधिकाय॥ ५७॥
तातैं भक्ति उपायकै, स्वातम हित मनलाय।
व्रत कीजै जिनवर कह्यो, इम सुणि करि तब राय॥ ५८॥

चौपाई—द्विज कन्या को भूप बुलाय, व्रत सुगन्ध दशमी बतलाय।
राय सहाय थकी व्रत करयो, पूरव पाप सकल तब हरयो॥
उद्यापन करि मन वच काय, और सुणू आगे मन लाय।
एक कनकपुर जाणो सार, नाम कनकप्रभु तसु भूपाल॥
नारि कनकमाला अभिराम, राजसेठ इक जिनदत्त जु नाम।
जाकै जिनदत्ता वर नारि, तिहि ताकै लीन्हूं अवतारि॥
तिलकमती नामा गुण भरी, रूप सुगन्ध महा सुन्दरी।
क्यूं इक पाप उदै पुनि आय, प्राण तजे ताकी तब माय॥
जननी विन दुःख पावै बाल, और सुणू श्रेणिक भूपाल।
जिनदत्त यौवनमय थौ जबै, अपनो व्याह विचारो तबै॥
इक गौर्धनपुर नगर सुजान, वृषभदत्त वाणिज तिहिं थान॥
ताकै एक सुता शुभ भई, बन्धुमती तसु संज्ञा दई॥

तासों कीन्हूं सेठ विवाह, बाजा बाजे अधिक उछाह।
परणि सुघर लायो सुख भार, आगे और सुणू विस्तार॥

दोहा—भोग शर्म करती भई, कन्या इक लखि माय।
नाम धर्यो तब मोदतैं, तेजोमती सुभाय॥ ६६॥

छन्द—प्यारी माताकू लागै, नहिं तिलकमती सों रागै।
नाना विधि करि दुःख द्यावे, ताकै मनसा नहीं भावै॥६७॥
तब तात सुतासु निहारी, कन्या इह दुःखित विचारी।
तब दासी आदिक नारी, तिनसों इमि सेठ उचारी॥६८॥
याकी सेवा सुख कारी, कीज्यो तुम भक्ति विथारी।
ऐसे सुणि सो सुख पावै, तब नीकी भांति खिलावै॥६९॥

चौपाई—एक समय कञ्चन प्रभ राय, दीपान्तर जिन दत्त पठाय।
नारीसों तब भाखै जाय, हमकू राजा दीपि भिजाय॥
तातैं एक सुनो तुम बात, इह दो परणाज्यो हरषात।
अष्ट गुणां युत जो वर होय, इनकौ करि दीज्यो अब लोय॥
इम कहि दीपि चल्यो तत्काल, और सुणू श्रेणिक भूपाल।
आवै करन सगाई कोय, तिलकमती जाचै तब सोय॥
बन्धुमती भाखै जब आय, यामें अवगुण हैं अधिकाय।
मम पुत्री गुणवन्ती घणी, रूप आदि शुभ लक्षण भणी॥
तातैं मो कन्या शुभ जान, वर नक्षत्र व्याहौ तुम आन।
इनकी मानै नाहीं बात, तिलकमती जाचै शुभ गात॥
व्याह समय कन्या मम सार, करदेस्यूं व्याहित जिहिंवार।
करी सगाई आनन्द होय, व्याह समै आये तब सोय॥

बन्धुमती फेरांकी बार, तिलकमती बहु भांति सिंगार।
घडी दोय रजनी जब गई, तिलकमतीकूं निज संग लई॥
जबहि मसाण भूमि मधि जाय, पुत्रीकूं तिंहि थान बैठाय।
तहां दीप जोये शुभ चारि, पूरे तेल उद्योत अपारि॥
चौगिरधा दीपक चउधरे, मध्य तिलकमती थिरता करे।
तिलकमतीसों भाषी जहां, तौ भरता आवैगो यहां॥
ताहि विवाहि आवजे बाल, इमि कहि कर चाली तत्काल।
आधी रात गये तब राय, महल थकी लखि वितरक लाय॥
नृप ने मन इम निश्चय कियो, अवशि देखिये जो कछु भयो।
देवसुता वा यक्षिन कोय, ना जानैं वा किन्नर होय॥
कै इह नारी इहां को आय, ऐसी विधि चितवन करि राय।
हस्त खड्गले चालो तहां, तिलकमती तिष्ठे थी जहां॥

दोहा—जाय पूछियो रायजी, तूं कुण है इनि थान।
तिलकमती सुण के तबै, ऐसी भांति बखानि॥ ८२॥
भूपति मेरे तातकूं, रतन सुदीप पठाय।
मोकूं मम माता इहां, थापि गई अब आय॥ ८३॥

चौपाई—भाखि गई इनि थानिक कोय, आवेगो ते भरता सोय।
यातैं तुम आये अब धीर, मैं नारी तुम नाथ गहीर॥
सुणि राजा तब व्याहसु कर्‌यो, रैनि रह्यो तैंठे सुख धर्‌यो।
राजा प्रात समै अब लोय, निज मन्दिरकूं आवनि होय॥
तिलकमती ऐसे तब कही, अब तो तुम मेरे पति सही।
सर्प जेमि डसि जावो कहां, सुनि इमि भाषैं भूपति तहां॥

मैं निशि-निशि आस्यू तुझि पास, तू तो महा शर्म की राशि।
तिलकमती पूछै सिरनाय, कहा नाम तुम मोहि बताय॥
राजा गोप कह्यो निज नाम, इम सुणि तिय पायो सुखधाम।
यू कहि अपने थानिक गयो, तबसे ही परभात सु भयो॥
बन्धुमती कहि कपट विचार, तिलकमती है अति दुःखकार।
व्याह समय उठि गई किनि थान, जन जनसे पूछे दुःखमान॥

दोहा—देखो ऐसी पापिनी, गई कहां दुःखदाय।
ढूढत-ढूढ़त कन्यका, लखी मसाणां जाय॥ ६० ॥
जाय कहै दुःखदा सुता, इनि थानिक किमि आय।
भूत प्रेत लागो कहां, ऐसी विधि बतलाय॥ ६१ ॥

चौपाई—तिलकमती भाषै उमगाय, तैं भाख्यो सो कीन्हूं माय।
बन्धुमती कहि त्वङ्ग पुकार, देखो तो इह असत्य उचार॥
जानूं कहा करै इह आय, व्याह समै दुःख दिया अघाय।
तेजोमती विवाहित करी, सावा की समये नहिं टरी॥
पुनि भाषी उठि चल घर अबै, ले आई अपने घर जबै।
तिलकमती सों पूछैं मात, तै कैसो वर पायो रात॥
सुता कह्यो वरियो हम गोप, रैनि परणि परभात अलोप।
बन्धुमती भाषी ततकाल, री! तैं वर पायौ गोपाल॥

दोहा—घर इक गेह समीपथो, सो दीन्हों दुःखपाय।
नित प्रति रजनी के विषै, आवै तहां सुराय॥ ६६ ॥
दीप निमित्त नही तेल दे, तबही अन्धेरे मांहि।
राजा तैठेही रहै, सुख पावै अधिकांहि॥ ६७ ॥

चौपाई—कछुइक दिन पुनि ऐसे गये, बन्धुमती तब यूं वच कहे।
तोहि गुवाल्या तैं कहि जाय, दोय बुहारी तो दे लाय॥
तिलकमती आरे करि लई, रात्रि भये निज पतिपै गई।
करि क्रीड़ा सुख वचन उचार, नाथ सुणूं अरदास हमार॥
जुगल बुहारी मेरी माय, जाची हैं तुमपै हरपाय।
यातैं ला दीज्यो तुम देव, अङ्गी कीन्हूं भूप स्वमेव॥
सभा जाय बैठ्यो तब राय, स्वर्णकार तब सार बुलाय।
तिनतैं कही बुहारी दोय, अब करयो जो उत्तम होय॥
इम सुनि तबहीं कञ्चनकार, लागि गये गढ़ने अधिकार।
स्वर्णसींक सबके मन मोहि, रत्न जड़ित मूठ्यो अति सोहि॥
षोड़श भूषण और मंगाय, डाबा में धरि चाल्यो राय।
एक वेश उत्तम करि लियो, रजनी समय नारि ढिग गयो॥
रतन जड़ित की कोर जु सार, शोभै सारी के अधिकार।
भूषण वेश दये नृप जाय, दोय बुहारी लखित सुहाय॥
नारि चरण नृप के तब धोय, सिरकेशनि से पूछत थोय।
क्रीड़ा करि बहुते सुख पाय, प्रात भये नृप तो घरि जाय॥
तिलकमती अति हर्षित होय, जाय दई सु बुहारी दोय।
और दिखाये भूषण वेश, माहीं देख्यो सार जु वेश॥
मन में दुःखित वचन इमि कह्यो, तेरो भरता तस्कर भयो।
राजा के भूषण अरु वेश, लाय दये तोकूं जु अशेष॥
इम सबकूं दुःखदासी सोय, इम कहि खोसि लये दुःखि होय।
यह दलगीर भई अधिकाय, रात विषैं पति सों कहि जाय॥

भूषण वेश खोसि लये माय, निज पासे राखे दुःख पाय।
राय तबै सम्बोधी जोय, मन चिन्ता राखो मति कोय॥
और घणेही देहूं लाय, इम सुणि तिलकमती सुख पाय।
दीप थकी जिनदत्त जु आय, बन्धुमती पतिसों बतलाय॥
तिलकमती के अवगुण घणां, कहा कहूँ पति अब वा तणां।
व्याह समै उठिगी किनि थान, परण्यो चोर तहां सुख ठान॥
सो तस्कर भूपति कै जाय, भूषण वेश चोर कर लाय।
याकूं वह दीन्हें तब राय, खोसि रखे मो ढिग में लाय॥
सेठ देख कम्पित मन मांहि, तब ही राज स्थानक जाय।
धरे जाय राजा के पाय, सब विरतन्त कह्यो सुणि राय॥
कह्यो वेश भूषण तौ आय, परि वह चोर आनियौ लाय।
इहि विधि सेठ सुणी नृप बात, चाल्यो निज घर कम्पित गात॥
साह सुतासों इह वच कह्यो, तू हमकू यह कुण दुःख दियो।
पतिकूं जाणे है अकि नाहिं, कह्यो द्वीप बिन जाणूं काहि॥
कबहूं दीपक हेति सनेह, मोकू मम माता नहिं देह।
सेठ कहैं किसही विधि जान, तिलकमती जब बहुरि बखान॥
इक विधि कर मैं जानू तात, सो इह सुण हमारी बात।
जब पति आवे मो ढिग यहां, तब उनि पद धोवत थी तहां॥
धोवत चरण पिछानू सही, और इलाज इहां अब नहीं।
सेठ कही भूपतिसों जाय, कन्या तौ इस भांति बताय॥
ऐसे सुणि तब बोल्यो भूप, इहतौ विधि तुम जाणि अनूप।
तस्कर ठीक करण के काज, तुम घर आवेंगे हम आज॥
सेठ तबै अति प्रसन्न भयौ, जाय तैयारी करतो भयो।
तब राजा परिवार बुलाय, तबही सेठ तणैं घर जाय॥

प्रजा जु सकल इकट्ठी भई, तिलकमती बुलवाय सु लई।
नेत्र मूदि पद धोवत जाय, यह भी नहीं नहीं पति आय ॥
जब नृप के चरणाम्बुज धोय, कहती भई यही पति होय।
राजा हंसि इम कहतो भयो, इनि हमकूं तस्कर कर दियो ॥
तिलकमती पुनि ऐसे कही, नृप हो वा अन्य होई सही।
लोक हसन लागे जिहि वार, भूप मने कीन्हे ततकार ॥
वृथा हास्य लोकां मति करो, मैं ही पति निश्चय मन धरो।
लोक कहैं कैसे इह बणी, आदि अन्तलौं भूपति भणी ॥
तबही लोक सकल इम कह्यो, कन्या धन्य भूप पति लह्यो।
पूरव इन व्रत कीन्हूं सार, ताको फल इह फल्यो अबार ॥
भोजन अन्तर कर उत्साह, सेठ कियो सब देखत व्याह।
ताकू पटराणी नृप करी, भूपति मन मे साता धरी ॥
एक समै पतियुत मों नार, गई सु जिनके गेह मझार।
वीतराग मुख देख्यो सार, पुन्य उपायो सुखदातार ॥
सभा विषै श्रुतिसागर मुनी, बैठे ज्ञान निधी बहु गुनी।
तिनको प्रणमि परम सुख पाय, पूछै मुनिवर सों इमि राय ॥
पूरव भव मेरी पट नार, कहा सुव्रत कीन्हु विधि धार।
जाकर रूपवती इह भई, अधिक सम्पदा शुभ करि लई ॥
योगी पूरव सब विरतन्त, मुनि निन्दादिक सर्व कहन्त।
अरु सुगन्ध दशमी व्रत सार, सो इनि कीन्हूं सुखदातार ॥
ताको फल इह जाणूं सही, ऐसे मुनि श्रुति सागर कही।
तबही आयो एक विमान, जिन श्रुत गुरु वन्दे तजि मान ॥
मुनिकू नमस्कार करि सार, फेर तहां नृप देवि निहार।
तिलकमती के पांवा पर्यो, अरु ऐसे सु वचन उच्चर्यो ॥

दोहा—स्वामिनी ! तुम परसाद तैं मैं पायो फल सार ।
व्रत सुगन्ध दशमी कियो, पूरब विद्या धार ॥ १३३ ॥
ता व्रत के परभावतैं, देव भयो मैं जाय ।
तुम मेरी साधर्मिणी, जुग क्रम देखनि आय ॥ १३४ ॥
इमि कहि वस्त्राभरण तैं, पूज करी मनलाय ।
अरु सुर पुनि ऐसे कहो, तुम मेरी वर माय ॥ १३५ ॥

चौपाई—थुतिकर सुर निज थानिक गयो, लोकां इह निश्चय लखि लियो ।
धन्य सुगन्ध दशमी व्रत सार, ताको फल है अनन्त अपार ॥
तब सबही जन यह व्रत धर्यो, अपनू कर्म महाफल हरयो ।
तिलकमती कञ्चन प्रभु राय, मुनिकू नमि अपने घरि जाय ॥
देती पात्रनि को शुभ दान, करती सज्जन जन सन्मान ।
नित प्रति पूजै श्री जिनराय, अरु उपवास करै मनलाय ॥
पति व्रत गुण की पालनहार, पुनि सुगन्ध दशमी व्रत धार ।
अन्त समाधि थकी तजि प्रान, जाय लयो ईशान सु थान ॥
सागर दोय जहां थिति लई, शुभ तैं भयो सुरोत्तम सही ।
नारी लिङ्ग निन्द्य छेदियो, चय शिववासी जिनवर्णयो ।
जहां देव सेवा बहु करे, निरमल चमर तहां शिर ढरै ।
और विभव अधिकौ जिहिं जान, पूरब पुन्य भये तिहि आन ॥
इह लखि सुगन्ध दशैं व्रत सार, कीजै हो ! भवि शर्म विचार ।
जे भवि नर-नारी व्रत करैं, ते संसार समुद्र सौं तिरैं ॥

दोहा—श्रुतसागर ब्रह्मचारी को, ले पूरब अनुसार ।
भाषा सार बनाय के, सुखित 'खुशाल' अपार ॥ १४३ ॥

रविव्रत कथा

श्री सुखदायक पार्श्व जिनेश, सुमति सुगति दाता परमेश।
सुमरों शारदपद अरविन्द, तिनकर व्रत प्रगट्यो सानन्द॥ १ ॥
बानारसि नगरी सु विशाल, प्रजापाल प्रगट्यो भूपाल।
मतिसागर तहं सेठ सु जान, ताको भूप करे सन्मान॥ २ ॥
तासु त्रिया गुण सुन्दरी नाम, सात पुत्र ताके अभिराम।
षट् सुत भोग करें परणीत, लघुरूप गुणधर सु विनीत॥ ३ ॥
सहसकूट शोभित जिन धाम, आये यतिपति खण्डित काम।
सुनि मुनि आगम हर्षित भये, सर्व लोग वन्दन को गये॥ ४ ॥
गुरु वाणी सुनि के गुणवती, सेठिन सर्व करे विनती।
प्रभो सुगम व्रत देहु बताय, जासों रोग शोक भय जाय॥ ५ ॥
करुणानिधि भाषहिं मुनिराय, सुनो भव्य तुम चित्त लगाय।
जब आषाढ़ शुक्ल पक्ष विचार, तब कीजे अन्तिम रविवार॥ ६ ॥
अनशन अथवा अल्प अहार, लवणादिक जु करे परिहार।
नव फल घृत पञ्चामृत धार, बहु प्रकार पूजा मनहार॥ ७ ॥
उत्तम फल इक्यासी जान, नव श्रावक घर दीजे आन।
या विधि कर नव वर्ष प्रमाण, जातें होय सर्व कल्याण॥ ८ ॥
अथवा एक वर्ष इस सार, कीजे रविव्रत मनहि विचार।
सुनि साहुन निज घरको गई, व्रत निन्दा करि निन्दित भई॥ ९ ॥
व्रत निन्दातें निर्धन भये, सातहिं पुत्र अवधपुर गये।
तहां जिनदत्त सेठ घर रहें, पूरब दुष्कृत का फल लहें॥१०॥
मात-पिता गृह दुःखित सदा, अवधि सहित मुनि पूछे तदा।
दयावन्त मुनि ऐसे कह्यो, व्रत निन्दा से तुम दुःख लह्यो॥११॥
सुनि गुरु वचन बहुरि व्रत लयो, पुण्य थयो घरमें धन भयो।
भविजन सुनो कथा सम्बन्ध, जहं रहते थे वे सब नन्द॥१२॥

एक दिवस गुणधर सुकुमार, घास लेन आयो गृह द्वार।
क्षुधावन्त भावज पै गयो, दन्त बिना नहिं भोजन दयो ॥१३॥
बहुरि गयो जहाँ भूल्यो दन्त, देख्यो तासों अहि लिपटन्त।
फणिपति की तहं विनती करी, पद्मावति प्रगटी तिहिं घरी ॥१४॥
सुन्दर मणिमय पारसनाथ, प्रतिमा एक दई तिहिं हाथ।
देकर कह्यो कुंवर कर भोग, करो क्षणक पूजा संजोग ॥१५॥
आनबिंब निज घर मे धरयो, तिहंकर तिनको दारिद्र हरयो।
सुख विलास सेवें सब नन्द, नित प्रति पूजें पार्श्व जिनन्द ॥१६॥
साकेता नगरी अभिराम, सुन्दर बनवायो जिन-धाम।
करी प्रतिष्ठा पुण्य संयोग, आये भविजन सब सु लोग ॥१७॥
सङ्घ चतुर्विधि का सनमान, कियो दियो मनवाछित दान।
देख सेठ तिनकी सम्पदा, जाय कही भूपतिसों तदा ॥१८॥
भूपति तब पूछ्यो विरतन्त, सत्य कह्यो गणधर गुणवन्त।
देख सुलक्षण ताको रूप, अति आनन्द भयो सो भूप ॥१९॥
भूपति गृह तनुजा सुन्दरी, गुणधर को दीनों गुण भरी।
कर विवाह मङ्गल सानन्द, हय गज पुरजन परमानन्द ॥२०॥
मनवांछित पाये सुख भोग, विस्मित भये सकल पुर लोग।
सुखसों रहत बहुत दिन भये, तब सब बधु बनारस गये ॥२१॥
मात-पिता के परसे पाँय, अति आनन्द हिरदे न समाय।
विघट्यो सबको विषय वियोग, भयो सकल पुरजन संयोग ॥२२॥
आठ सात सोलह के अङ्क, रविव्रत कथा रची अकलङ्क।
थोड़ो अर्थ ग्रन्थ विस्तार, कहे कवीश्वर ओ गुणसार ॥२३॥
यह व्रत जो नर-नारी करैं, कबहूं दुर्गति में नहिं परैं।
भाव सहित ते शिवसुख लहै, भानु कीर्ति मुनिवर इमि कहैं ॥२४॥

श्री वासुपूज्य जिन-पूजा

(वृन्दावन कृत)

छन्द रूप कवित्त

श्रीमत वासुपूज्य जिनवर-पद, पूजन हेतु हिये उमगाय।
धारो मन-वच-तन सुचि करिके, जिनकी पाटल-देव्यामाय॥
महिप-चिह्न पद लसे मनोहर, लाल-वरन-तन समता-दाय।
सो करुना-निधि-कृपा-दृष्टि, करितिष्ठहु सुपरितिष्ठ यहँआय॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरण।

अष्टक

छन्द जोगीरासा

गंगा-जल भरि कनक-कुंभ मे, प्रासुक गन्ध मिलाई,
करम-कलंक विनाशन कारन, धार देत हरषाई।
वासुपूज्य वसु-पूज-तनुज-पद, वासव सेवत आई,
बाल ब्रह्मचारी लखि जिनको, शिव-तिय सनमुख धाई।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु मलयागिरि चदन, केशरसग घसाई,
भव आताप विनाशन कारन, पूजो पद चितलाई॥ वासु०॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।

देवजीर सुखदास शुद्ध वर, सुवरन-थार भराई,
पुज धरत तुम चरनन आगें, तुरित अखय-पद पाई।
वासुपूज्य वसु-पूज-तनुज-पद, वासव सेवत आई,
बाल ब्रह्मचारी लखि जिनको, शिव-तिय सनमुख धाई॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतानि निर्वपामीति स्वाहा।

पारिजात सतान कल्पतरु, जनित सुमन बहु लाई,
मीनकेतु-मत-भजन-कारन तुम पद-पद्म चढाई॥ वासु०॥

ॐ ह्री श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय कामबाणविध्वसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा।

नव्य गव्य आदिक रस-पूरित, नेवज तुरित उपाई,
क्षुधा-रोग-निरवारन-कारन, तुम्हे जजों शिर-नाई॥ वासु०॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक-जोत उदोत होत वर, दश दिशमे छवि छाई।
तिमिर-मोह-नाशक तुमको लखि, जजो चरन हरषाई॥ वासु०॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा।

दशविध गध मनोहर लेकर, वातहोत्र मे डाई।
अष्ट करम ये दुष्ट जरतु हैं, धूम सु धूम उडाई॥ वासु०॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा।

सुरस सुपक्व सुपावन फल ले, कञ्चन-थार भराई।
मोक्ष-महाफल-दायक लखि प्रभु, भेंट धरों गुन गाई॥ वासु०॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा।

सित भादव चौदशि लीनो, निरवार सुथान प्रवीनों।
पुर चपा थानकसेती, हम पूजत निज-हित हेती ॥ ५ ॥

ॐ ह्री श्री भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्या मोक्षमगलप्राप्ताय श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा—चपापुर मे पचवर, कल्याणक तुम पाय।
सत्तर धनु तन शोभनो, जे जे जे जिनराय ॥ १ ॥

छन्द मोतियादाम वर्ण १२

महासुख-सागर आगर ज्ञान, अनत-सुखामृत-भुक्त महान्।
महाबल-मडित खडत-काम, रमा-शिव-संग सदा विसराम ॥
सुरिंद फनिंद खगिंद नरिंद, मुनिंद जजै नित पादरविंद।
प्रभू तुव अन्तर-भाव विराग, सुबालहते व्रत-शीलसो राग ॥
कियो नहिं राज उदास-सरूप, सुभावन भावत आतम-रूप।
अनित्य शरीर प्रपच समस्त, चिदातम नित्य सुखाश्रित वस्त ॥
अशर्न नही कोउ शर्न सहाय, जहाँजिय भोगत कर्म-विपाय।
निजातमके परमेसुर शर्न, नही इनके विम आपद-हर्न ॥
जगत्त जथा जलबुदबुद येव, सदा जिय एक लहै फलमेव।
अनेक-प्रकार धरी यह देह, भ्रमें भव-कानन आन न नेह ॥
अपावन सात कुधात भरीय, चिदातम शुद्ध-सुभाव धरोय।
धरै इनसो जब नेह तबेव, सुआवत कर्म तबे वसुभेव ॥

जबै तन-भोग-जगत्त-उदास, धरे तब संवर-निर्जर-आस।
करै जब कर्म कलंक विनाश, लहै तब मोक्ष महासुखराश॥
तथा यह लोक नराकृत नित्त, विलोकिय ते षट द्रव्य-विचित्त।
सुआतम-जानन-बोध-विहीन, धरे किन तत्त्व-प्रतीत प्रवीन॥
जिनागम-ज्ञानरु संजम भाव, सबै-निज ज्ञान बिना विरसाव।
सुदुर्लभ द्रव्य सुदेश सुकाल, सुभाव सबै जिहतें शिव हाल॥
लयो सब जोग सुपुन्य वशाय, कहो किमि दीजिय ताहि गँवाय।
विचारत यों लवकांतिक आय, नमे पद-पंकज पुष्प चढ़ाय॥
कह्यो प्रभु धन्य कियो सुविचार, प्रबोधि सु येम कियो जु विहार।
तबै सब धर्म तनो हरि आय, रच्यो शिविका चढ़ि आप जिनाय॥
धरे तप पाय सुकेवल-बोध, दियो उपदेश सुभव्य सँबोध।
लियो फिर मोक्ष महासुख-राश, नमैं नित भक्त सोई सुख आश॥

घत्तानन्द

नित वासव-वंदत, पाप-निकंदत, वासुपूज्य व्रत-ब्रह्म-पती।
भव संकट खंडित, आनंद मंडित, जै जै जै जैवंत जती॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वासुपूज-पद सार, जजों दरवविधि भावसों।
सो पावै सुखसार, भुक्ति मुक्ति को जो परम॥

[इत्याशीर्वादः। परिपुष्पांजलिं क्षिपामि]

भक्तामर-भाषा

(लेखक — हजारीलाल 'काका' बुन्देलखण्डी)

(वीरवाणी, पाक्षिक पत्र के वर्ष ३५, अक ८ एव ६ से सामार उद्धृत)

देवों के मुकुटो की मणियाँ, जिन चरणो में जगमगा रही,
जो पाप रूप अँधियारे को दिनकर बन कर के भगा रही,
जो भव सागर में पडे हुये जीवो के लिये सहारे हैं,
मन-वच-तन से उन श्री जिन के चरणो में नमन हमारे हैं ॥ १ ॥

श्रुतज्ञानी सुरपति लोकपति जिनके गुण गाते हर प्रकार,
स्तोत्र विनय पूजन द्वारा वन्दन करते हैं बार-बार,
आश्चर्य आज मैं मन्द बुद्धि उन आदिनाथ के गुण गाता,
उनकी भक्ति में भक्तामर भाषा मे लिख कर हर्षाता ॥ २ ॥

जो देवो द्वारा पूज्य प्रभु, मैं उनके गुण गाने आया,
होकर अल्पज्ञ ढीठता ही, अपनी दिखलाने को लाया,
मतिमद हूँ उस बालक समान जिसके कुछ हाथ न आता है,
प्रतिबिम्ब चन्द्र का जल में लख लेने को हाथ डुबाता है ॥ ३ ॥

जब प्रलयकाल की वायु से सागर लहराता जोरो से,
तिस पर भी मगरमच्छ घूमें मुँह बाये चारो ओरो से
ऐसे सागर का पार भुजाओ से क्या कोई पा सकता,
बस इसी तरह मैं मन्द बुद्धि प्रभु के गुण कैसे गा सकता ॥ ४ ॥

जिस तरह सिंह के पजे मे बच्चा लख हिरणी जाती है,
ममता वश सिंह समान बली को अपना रोष जताती है,
बस इसी तरह से शक्ति मेरी मुनिनाथ न स्तुति करने की,
जो कहा भक्तिवश ही स्वामी है शक्ति न भक्ति करने की ॥ ५ ॥

ज्यों आम्र मजरी को लख कर कोयल मधुराग सुनाती है,
वैसे ही तेरी भक्ति प्रभु जबरन गुण गान कराती है,
है अल्प ज्ञान विद्वानो के सन्मुख यह दास हँसी का है,
तेरी भक्ति की शक्ति ने जो कहा ये काम उसी का है ॥ ६ ॥

जब जग के ऊपर छा जाता भँवरे-सा काला अन्धकार,
सूरज की एक किरण उसको छण मे कर देती छार-छार,
वैसे ही भव भव के पातक जो भी सञ्चय हो जाते हैं,
तेरी स्तुति के द्वारा ही सब क्षण में क्षय हो जाते हैं। ७।

ज्यों कमल पत्र के ऊपर पड़ जल की बूंदें मन हरती हैं
मोती समान आभा पाकर जो जगमग-जगमग करती हैं,
बस उसी तरह यह स्तुति भी तेरे चरणों का दल पाकर,
विद्वानों का मन हर लेगी मुझ अल्प बुद्धि द्वारा गाकर। ८।

हे जिनवर तेरी कथा ही जब हर व्यथा दूर कर देती है,
फिर स्तुति का कहना ही क्या जो कोटि पाप हर लेती है,
जैसे सूरज की उजयाली जग का हर काम चलाती है,
पर उसके पहिले की लाली कमलों के झुण्ड खिलाती है। ९।

हे भुवनरत्न। हे त्रिभुवनपति जो तेरी स्तुति गाते हैं,
आश्चर्य नही इसमें कुछ भी वो तुम जैसे बन जाते हैं,
जैसे उदार स्वामी पाकर सेवक धनवाले बन जाते,
है जन्म व्यर्थ जग मे उनका जो पर के काम नही आते। १०।

जो चन्द्र किरण सम उज्ज्वल जल मीठा क्षीरोदधि पान करे,
वह लवणोदधि का खारा जल पीने का कभी न ध्यान करे,
वैसे ही तेरी वीतराग मुद्रा जो नेत्र देख लेते,
तो उन्हें सरागी देव कभी अन्तर में शान्ति नही देते। ११।

जितने परमाणु शुद्ध जग में उनसे निर्मित तेरी काया,
इसलिये आप जैसा सुन्दर दूजा न कोई नजर आया
देवा की अति सुन्दर कान्ति जो नेत्रो में गड़ जाती है
पर वही कान्ति तेरे सन्मुख आते फीकी पड़ जाती है। १२।

हे नाथ आप का मुख मण्डल सुर नर के नेत्र हरण करता,
दुनिया की सुन्दर उपमायें कर सकें नही जिसकी समता,
जो कान्तिहीन चन्दा दिन में बस ढाक पत्र-सा लगता है,
वह भी जिन के सुन्दर मुख की उपमा कैसे पा सकता है। १३।

है त्रिभुवनपति तुम में सब ही उत्तम गुण दिये दिखाई हैं,
हैं पूर्ण चन्द्र से कलावान जो त्रिभुवन को सुखदाई हैं,
इसलिये उन्हे इच्छानुसार विचरण से कौन रोक सकता,
जो त्रिभुवनपति के आश्रय हैं उनको फिर कौन टोक सकता ॥ १४ ॥

जो प्रलयकाल की तेज वायु पर्वत करती कम्पायमान,
वह पर्वतपति सुमेर राज कर सकती नही चलायमान,
बस उसी तरह से जो देवी देवों का मन हर सकती है,
वह सभी देवियाँ मिल प्रभु को विचलित न जरा कर सकती हैं ॥ १५ ॥

हे नाथ दीप जितने जग के जो नजर हमारी आते हैं,
जलते जो तेल बाति द्वारा वायु लगते बुझ जाते हैं,
पर नाथ आप वह दीपक हैं जो त्रिभुवन के प्रकाशक हो,
निर्धूम जला करते निशदिन त्रिभुवन के सभी उपासक हो ॥ १६ ॥

हैं सतत् प्रकाशी सूर्य आप ग्रस सके न राहू पाप रूप,
इक समय एक सग तीन लोक का प्रकाशित होता स्वरूप,
यह सूर्य मेघ से आच्छादित होकर दिन मे छिप जाता है,
पर हे मुनीन्द्र वह सूर्य आप जो सदा प्रकाश दिखाता है ॥ १७ ॥

मुखचन्द्र आप का हे स्वामी मोहान्धकार का नाश करे,
राहू मेघो से दूर सदा नित त्रिभुवन में प्रकाश करे,
पर यह साधारण चन्द्र प्रभु राहू मेघो से घिर जाता,
इतने पर भी यह सिर्फ रात में ही प्रकाश कुछ दे पाता ॥ १८ ॥

जब धान्य खेत में पक जाता जल की रहती परवाह नही,
जल भरे बादलों को जग की रहती फिर किंचित चाह नही,
बस उसी तरह मुखचन्द्र तेरा अज्ञान तिमिर जब हर लेता,
तो सूर्य चन्द्रमा को पाने पर कोई ध्यान नही देता ॥ १९ ॥

मणियो पर पडने से प्रकाश की आभा जितनी बढ़ जाती,
वह छटा काँच के टुकड़ों पर पड़ने से कभी न आ पाती,
बस उसी तरह हे देव आपका स्वपर प्रकाशक तत्व ज्ञान,
वह अन्य देवताओ से है कितना उज्ज्वल कितना महान ॥ २० ॥

[illegible] । २१ ।

[illegible],
[illegible],
[illegible],
[illegible] की [illegible] । २२ ॥

[illegible]
[illegible]
[illegible],
[illegible] । २३ ।

[illegible],
[illegible],
[illegible],
[illegible] । २४ ।

[illegible],
[illegible],
[illegible] को [illegible],
[illegible] । २५ ।

[illegible] नाथ आप को नमस्कार,
[illegible] नाथ आप को नमस्कार,
[illegible] नाथ आप को नमस्कार,
[illegible] नाथ आप को नमस्कार । २६ ।

[illegible] भारी,
[illegible] भारी,
[illegible] आप का [illegible] नहीं,
[illegible] जा सका नहीं । २७ ।

उन्नत अशोक तरु के नीचे निर्मल शरीर अतिशय कारी,
अति कान्तिवान जगमगा रहा झाँकी लगती है अति प्यारी,
यह हृदय देख लगता मानो तम ने उजियाला पाया हो,
या फिर मेघों को चीर सूर्य का बिम्ब निकल आया हो ॥ २८ ॥

हे प्रभु ये मणिमय सिंहासन जिसकी किरणें जगमगा रही,
सुवरण से ज्यादा कान्तिवान तन की शोभा अति बढ़ा रही,
ऐसा लगता उदयाचल पर सोने का सूरज बना हुआ,
जिस पर किरणों का कांतिवान सुन्दर चन्दोवा तना हुआ ॥ २९ ॥

जब समोशरण मे भगवन के सोने समान सुन्दर तन पर,
ढुरते हैं अति रमणीक चँवर जो कुन्द पुष्प जैसे मनहर,
तब ऐसा लगता है सुमेर पर जल की धारा बहती हो,
चन्द्रमा समान उज्ज्वल राशि झरझर झरनों से झरती हो ॥ ३० ॥

शशि के समान सुन्दर मन हर रवि ताप नाश करनेवाले,
मोती मणियो से जड़े हुये शोभा महान देनेवाले,
प्रभु के सर पर शोभायमान त्रय छत्र सभी को बता रहे,
ये तीनलोक के स्वामी हैं जगमग कर जग को बता रहे ॥ ३१ ॥

गम्भीर उच्च रुचिकर ध्वनि से जो चारो दिशा गुञ्जाते हैं,
सत्सग की महिमा तीनलोक के जीवो को बतलाते हैं,
जो तीर्थङ्कर की विजय घोषणा का यश गान सुनाते हैं,
गुञ्जायमान जो नभ करते वह दुन्दुभि देव बजाते हैं ॥ ३२ ॥

जो पारिजात के दिव्य पुष्प मन्दार आदि से लेकर के,
करते हैं सुरगण पुष्पवृष्टि गन्दोदविन्दु को दे कर के,
ठण्डी बयार में कुसुमावलि जब कल्प वृक्ष से गिरती है,
तब लगता प्रभु की दिव्यध्वनि ही पुष्प रूप मे खिरती है ॥ ३३ ॥

जो त्रिभुवन में देदीप्यमान की दीप्ति जीतनेवाली है,
जो कोटि सूर्य की आभा को भी लज्जित करनेवाली है,
जो शशि समान हो शान्ति सुधा जग को वर्षानेवाली है,
उस भामण्डल की दिव्य चाँदनी से भी छटा निराली है ॥ ३४ ॥

हे प्रभु आप की दिव्य-ध्वनि जब समवशरण में खिरती है,
तब सभी मोक्ष प्रेमी जीवों का अनायास मन हरती है,
परिणमन आप की वाणी का खुद हो जाता हर बोली में,
जो भी प्राणी आकर सुनता है समवशरण की टोली में ॥ ३५ ॥

नूतन कमलों-सी कान्तिवान चरणों की शोभा प्यारी है,
नख की किरणों का तेज स्वर्ण जैसा लगता मनहारी है,
ऐसे मनहारी चरणों को जिस जगह प्रभुजी धरते हैं,
उस जगह देव उनके नीचे कमलों की रचना करते हैं ॥ ३६ ॥

हे श्री जिनेन्द्र तेरी विभूति सचमुच ही अतिशयकारी है,
धर्मोपदेश की सभा आप जैसी न और ने धारी है,
जैसे सूरज का उजियाला सारा अम्बर चमकाता है,
वैसे नक्षत्र अनेकों पर सूरज को एक न पाता है ॥ ३७ ॥

मदमस्त कली के गण्डस्थल पर जब भौंरे मँडराते हैं,
उस समय क्रोध से हाथी के दोउ नयन लाल हो जाते हैं,
इतने विकराल रूपवाला हाथी जब सन्मुख जाता है,
ऐसे सङ्कट के समय आप का भक्त नहीं घबराता है ॥ ३८ ॥

जो सिंह मदान्ध हाथियों के सिर को विदीर्ण कर देता है,
शोणित से लथपथ गज मुक्ता पृथ्वी को पहिना देता है,
ऐसा क्रूर वनराज शत्रुता छोड़ मित्रता धरता है,
जब उसके पंजे में भगवन कोई भक्त आप का पड़ता है ॥ ३९ ॥

हे प्रभो प्रलय का पवन जिसे धू-धू कर के धधकाता हो,
ऐसी विकराल अग्नि ज्वाला जो क्षण में नाश कराती हो,
उसको तेरे वचनामृत जल पल भर में शान्ति प्रदान करे,
जो भक्तिभाव कीर्तन रूपी तेरा पवित्र जल पान करे ॥ ४० ॥

हे प्रभु नागदमनी से ज्यों सर्पों की एक न चल पाती,
विषधर की डँसने की सारी शक्ति क्षण में क्षय हो जाती,
बस उसी तरह श्रद्धा से जो तेरा गुण गान किया करते,
वह डरते नहीं क्रुद्ध काले नागों पर कभी पैर धरते ॥ ४१ ॥

'जैसे सूरज की किरणों से अँधियारा नजर नही आता,
भीषण से भीषण अन्धकार का कोई पता नही पाता,
बस उसी तरह से हे जिनवर जो गाता तेरी गुण गाथा,
उसको सशक्त हय गज वाले राजा टेका करते माथा ॥ ४२ ॥

रण मे भाले से जरियो का जब रुधिर वेग से बहता है,
वह रुधिर धार कर पार वेग से हर योद्धा तत्पर रहता है,
ऐसे दुर्जय शत्रु पर भी वह विजय पताका फहराते,
हे प्रभु आप के चरण कमल जिनके द्वारा पूजे जाते ॥ ४३ ॥

सागर की भीषण लहरो से जब नैया डगमग करती है,
या फिर प्रलयकारी स्वरूप अग्नि जब अपना धरती है,
उस वक्त आपका ध्यान मात्र जो भक्त हृदय से करते हैं,
इन आकस्मिक विपदाओ में हर समय देव गण रहते हैं ॥ ४४ ॥

हे प्रभो जलोदर से जिनकी काया निर्बल हो जाती है,
जीने की आशा छोड़ दशा जब शोचनीय हो जाती है,
उस समय आपके चरणों की रज जो बीमार लगाते हैं,
वह फिर से कामदेव जैसा सुन्दर स्वरूप पा जाते हैं ॥ ४५ ॥

जो लौह श्रृङ्खलाओ द्वारा पग से गर्दन तक जकड़ा हो,
जकड़न से जङ्घाओं पर का चमड़ा भी कुछ-कुछ उखड़ा हो,
ऐसा मानव भी बन्धन से पल में मुक्ति पा जाता है,
'जो तेरे नाम मन्त्र को प्रभु अपने अन्तर मे ध्याता है ॥ ४६ ॥

हे प्रभु आप की यह विनती जो भक्ति भाव से गाते हैं,
दावानल सिंह सर्प हाथी हर विघ्न दूर हो जाते हैं,
तिर जाते गहरे सागर से तन के बन्धन कट जाते हैं,
हर रोग दूर हो जाते जो भक्तामर पाठ रचाते हैं ॥ ४७ ॥

यह शब्द सुमन से गूथी है श्री जिनवर के गुण की माला,
वह मोक्ष लक्ष्मी पाता है जिसने भी इसे गले डाला,
श्री मानतुङ्ग मुनिवर ने ये स्तोत्र रचा सुखदाई है,
कवि 'काका' ने भाषा द्वारा हर कण्ठो तक पहुँचाई है ॥ ४८ ॥

दोहा—

भक्तामर स्तोत्र का करे भव्य जो जाप, मनोकामना पूर्ण हो मिटे सभी सताप ।
विघ्न हरन मगल करन सभी सिद्धि दातार, 'काका' भक्तामर नमो भव दधि तारनहार ।

समाधिमरण भाषा

बन्दों श्री अरहत परमगुरु, जो सबको सुखदाई,
इस जग मे दुःख जो मैं भुगते, सो तुम जानो राई।

अब मैं अरज करू प्रभु तुमसे, कर समाधि उर मांही।
अन्त समय में यह वर मांगू, सो दीजे जग-राई ॥ १ ॥

भव भव में तनधार नया मैं, भव भव शुभ सग पायो,
भव भव मे नृपरिद्धि लई मैं, मात पिता सुत थायो।
भव भव में तन पुरुषतनों धर, नारी हूँ तन लीनो,
भव भव मे मैं भया नपुंसक, आतम गुण नहि चीन्हो ॥ २ ॥

भव भव मे सुरपदवी पाई, ताके सुख अति भोगे,
भव भव मे गति नरकतनो धर, दुःख पायो विधि योगे।
भव भव में तिर्यञ्च योनिधर, पायो दुःख अति भारी,
भव भव मे साधर्मीजनको, सग मिल्यो हितकारी ॥ ३ ॥

भव भव मे जिनपूजन कीनी, दान सुपात्रहिं दीनो,
भव भव में मैं समवसरण मे, देखो जिनगुण भीनो।
एती वस्तु मिली भव भव में, सम्यकगुण नहिं पायो,
नहिं समाधियुत मरण कियो मैं, तातैं जग भरमायो ॥ ४ ॥

काल अनादि भयो जग भ्रमतैं, सदा कुमरणहि कीनो,
एकबार हूँ सम्यकयुत मैं, निज आतम नहिं चीनो।
जो निज पर को ज्ञान होय तो, मरण समय दुःख कोई,
देह विनासी मे निज भासो, ज्योति स्वरूप सदाई ॥ ५ ॥

विषय कषायन के वश होकर, देह आपनो जान्यो,
कर मिथ्या सरधान हिये विच, आतम नाहि पिछान्यो।
यों कलश हियधार मरणकर, चारों गति भरमायो,
सम्यकदर्शन-ज्ञान-चरन ये हिरदे मे नहिं लायो ॥ ६ ॥

अब या अरज करू प्रभु सुनिये, मरण समय यह मांगो,
रोगजनित पीडा मत होवे, अरु कषाय मत जागो।
ये मुझ मरण समय दुखदाता, इन हर साता कीजे,
जो समाधियुत मरण होय मुझ, अरु मिथ्यामद छीजे ॥ ७ ॥

यह सब मद मोह बढावनहारे, जियकी दुर्गति दाता,
इनसे ममत निवारो जियरा, जो चाहो सुख साता।
मृत्युकल्पद्रुम पाय सयाने, मांगो इच्छा जेती,
समता धरकर मृत्यु करो तो, पावो सम्पति तेती ॥१५॥

चौआराधन सहित प्राण तज, तो या पदवी पावो,
हरि प्रतिहरि चक्री तीर्थेश्वर, स्वर्गमुक्ति में जावो।
मृत्युकल्पद्रुम सम नहिं दाता, तीनो लोक मझारे,
ताको पाय कलेश करो मत, जन्म जवाहर हारे ॥१६॥

इस तन मे क्या राचै जियरा, दिन दिन जीरन हो है,
तेजकांति बल नित्य घटत है, या सम अथिर सु को है।
पाचो इन्द्री शिथिल भई अब, स्वास शुद्ध नहिं आवै,
तापर भी ममता नहिं छोडै, समता उर नहि लावै ॥१७॥

मृत्युराज उपकारी जियको, तनसौं तोहि छुड़ावै,
नातर या तन बन्दीगृह में, परयो परयो बिललावै।
पुद्गल के परमाणु मिलके, पिण्डरूपतन भासी,
याही मूरत में अमूरती, ज्ञानजोति गुणवासी ॥१८॥

रोगशोक आदिक जो वेदन, ते सब पुद्गल लारै,
मैं तो चेतन व्याधि बिना नित, है सो भाव हमारे।
या तनसों इस क्षेत्रसम्बन्धी, कारन आन बन्यो है,
खान-पान दे याको पोष्यो, अब सम भाव ठन्यो है ॥१९॥

मिथ्यादर्शन आत्मज्ञान बिन, यह तन अपनो मान्यो,
इन्द्री भोग गिने सुख मैंने, आपो नाहिं पिछान्यो।
तन विनशनतैं नाश जानि निज, यह अयान दुखदाई,
कुटुम्ब आदि को अपनो जान्यो, भूल अनादि छाई ॥२०॥

अब निज भेद जथारथ समझयो, मैं हूँ ज्योतिस्वरुपी,
उपजै विनसै सो यह पुद्गल, जान्यो याको रूपी।
इष्ट अनिष्ट जेते सुख-दुख हैं, सो सब पुद्गल लागैं,
मैं जब अपनो रूप विचारो, तब वे सब दुख भागैं ॥२१॥

जिन समता [illegible], तिनने ये दुख पाया,
इससे तुम अनन्त भव [illegible], नाना [illegible] ।
अब [illegible] नाहिं, उर मूर्छा ममता [illegible] ,
[illegible] ॥२२॥

जिन समाधि ये दुख सहे, अब [illegible] उर समता लाइ,
मृत्युराज को भय नहिं मानो, देवे तन सुखदाई ।
यातें जब लग मृत्यु न आवे, तब लग जप तप कीजे,
जप तप बिन इस जग के माँही, कोई भी नहिं सीझे ॥२३॥

स्वर्ग सम्पदा तपसों पावे, तपसों कर्म नसावे
तपहीसों शिवकामिनिपति ह्वै, यासों तप चित लावे ।
अब मैं जानी समता बिन, मुझ कोउ नाहिं सहाई,
मात पिता सुत बान्धव तिरिया, ये सब हैं दुखदाई ॥२४॥

मृत्यु समय में मोह करें, ये तातैं आरत हो हैं,
आरततैं गति नीची पावे, यों लख मोह तज्यो है ।
और परिग्रह जेते जग में, तिनसों प्रीति न कीजे,
परभव में ये संग न चालैं, नाहक आरत कीजे ॥२५॥

जे जे वस्तु लसत हैं ते पर, तिनसों नेह निवारो,
परगति में ये साथ न चालैं, ऐसो भाव विचारो ।
जो परभव में संग चलें तुझ, तिनसे प्रीति सु कीजे,
पंच पाप तज समता धारो, दान चार विधि कीजे ॥२६॥

दश लक्षणमय धर्म धरो उर, अनुकम्पा उर लावो,
षोडशकारण नित्य चिन्तवो, द्वादश भावना भावो ।
चारों परवी प्रोषध कीजे, अशन रातको त्यागो,
समता धर दुरभाव निवारो, संयमसों अनुरागो ॥२७॥

अन्तसमय में ये शुभ भावहि, होवें आनि सहाई
स्वर्ग मोक्षफल ताहि दिखावे, रिद्धि देहि अधिकाई ।
खोटे भाव सकल जिय त्यागो, उरमें समता लाके,
जासेती गति चार दूर कर, बसो मोक्षपुर जाके ॥२८॥

मन थिरता करके तुम चिन्तो, चौ आराधन भाई,
वे ही ताको सुख की दाता, और हितू कोउ नाही।
आगे बहु मुनिराज भये है, तिन गहि थिरता भारी,
बहु उपसर्ग सहे शुभ भावन, आराधन उर धारी ॥२९॥

तिनमे कछुइक नाम कहूँ मै, सुनो जिया चित लाके,
भावसहित अनुमोदे तासे, दुर्गति होय न जाके।
अरु समता निज उर में आवे, भाव अधीरज जावे,
यो निशदिन जो उन मुनिवर को, ध्यान हिये बिच लावे ॥३०॥

धन्य-धन्य सुकुमाल महामुनि, कैसे धीरज धारी,
एक श्यालनी युगबच्चायुत, पांव भख्यो दुखकारी।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दुख है, मृत्यु महोत्सव बारी ॥३१॥

धन्य-धन्य जु सुकौशल स्वामी, व्याघ्री ने तन खायो,
तो भी श्रीमुनि नेक डिगो नहि, आतमसो हित लायो।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दुख है। मृत्यु महोत्सव बारी ॥३२॥

देखो गजमुनि के सिर ऊपर, विप्र अगिनि बहु बारी,
शीश जले जिमि लकडी तनको, तो भी नाहि चिगारी।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी,
तो तुमरे जिय कौन दुख है, मृत्यु महोत्सव बारी ॥३३॥

सनतकुमार मुनि के तन मे, कुष्ठ वेदना व्यापी,
छिन्नभिन्न तन तासो हूवो, तब चिन्त्यो गुण आपी।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तो तुमरे जिय कौन दुख है, मृत्यु महोत्सव बारी ॥३४॥

श्रेणिकसुत गगा में डूब्यो, तब जिन नाम चितारयो,
धर सलेखना परिग्रह छोड्यो, शुद्ध भाव उर धारयो।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तो तुमरे जिये कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव बारी ॥३५॥

समन्तभद्र मुनिवर के तन मे क्षुधावेदना आई,
तो दुख मे मुनि नेक न डिगियो, चित्यो निजगुण भाई।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तौ तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव बारी ॥३६॥

ललितघटादिक तीस दोय मुनि, कौशाम्बीतट जानो,
नदी मे मुनि बहकर डूबे, सो दुख उन नहि मानो।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तौ तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव बारी ॥३७॥

धर्मकोष मुनि चम्पानगरी, बाह्य ध्यान धर ठाढ़ो,
एक मास की कर मर्यादा, तृषा दुख सह गाढ़ो।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तौ तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव बारी ॥३८॥

श्रीदत्तमुनि के पूर्व जन्म को, बैरी देव सु आके,
विक्रिय कर दुख शीततनो, सो सह्यो साधु मनलाके।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तौ तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव बारी ॥३९॥

वृषभसेन मुनि उष्ण शिला पर, ध्यान धरयो मनलाई,
सूर्य धाम अरु उष्ण पवन की, वेदन सहि अधिकाई।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तौ तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव बारी ॥४०॥

अभयघोष मुनि काकदीपुर, महावेदना पाई,
बैरी चन्डने सब तन छेद्यो, दुख दीनो अधिकाई।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तौ तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव बारी ॥४१॥

विद्युत चर ने बहु दुख पायो, तो भी धीर न त्यागी,
शुभ भावना से प्राण तजे निज, धन्य और बड़भागी।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तौ तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव बारी ॥४२॥

पुत्र चिलातो नामा मुनि को, बैरी ने तन घातो,
मोटे-मोटे कीट पडे तन, तापर निज गुण रातो।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तो तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्युमहोत्सव वारी ॥४३॥

दण्डकनामा मुनि की देही, बाणन कर अति भेदी,
तापर नेक डिगे नहि वे मुनि, कर्म महारिपु छेदी।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तो तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव वारी ॥४४॥

अभिनन्दन मुनि आदि पांच सौ, घानि पेलि जु मारे,
तो भी श्रीमुनि समता धारी, पूरब कर्म विचारे।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तो तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव वारी ॥४५॥

चाणक मुनि गोधर के मांही, मन्द अननि पर जाल्यो,
श्रीगुरु उर समभाव धारके, अपनो रूप सम्हाल्यो।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तो तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव वारी ॥४६॥

सात शतक मुनिवर ने पायो, हस्तनापुर मे जानो,
बलिब्राह्मण कृत घोर उपद्रव, सो मुनिवर नहि मानो।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तो तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव वारी ॥४७॥

लोहमयी आभूषण गढके, ताते कर पहराये,
पांचो पाण्डव मुनि के तन में, तो भी नांहि चिगाये।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी,
तो तुमरे जिय कौन दुख है? मृत्यु महोत्सव वारी ॥४८॥

और अनेक भये इस जग मे, समता रस के स्वादी,
वे ही हमको हो सुखदाता, हर हैं टेव प्रमादी।
सम्यक्-दर्शन ज्ञान चरन तप, ये आराधन चारो,
ये ही मोक्ष सुख के दाता, इन्हे सदा उर धारो ॥४९॥

यो समाधि उरमाही लावो, अपनो हित जो चाहो,
तज ममता अरु आठो मदको, जोतिस्वरूपी ध्यावो।
जो कोई नित करत पयानो, ग्रामान्तर के काजे,
सो भी शकुन विचारैं नीके, शुभ के कारण साजे ॥५०॥

मातादिक अरु सर्व कुटुम्ब सौ, नीको शकुन बनावे,
हलदी धनिया पुङ्गी अक्षत, दूब दही फल लावे।
एक ग्राम के कारण एते, करैं शुभाशुभ सारे,
जब परगति को करत पयानो, तब नहि सोचैं प्यारे ॥५१॥

सर्व कुटुम्ब जब रोवन लागे, तोहि रुलावैं सारे,
ये अपशकुन करैं सुन तोको, तू यो क्यो न विचारे।
अब परगति को चालत बिरिया, धर्मध्यान उर आनो,
चारो आराधन आराधो, मोहतनो दुख हानो ॥५२॥

ह्वै निःशल्य तजो सब दुविधा आतमराम सुध्यावो,
जब परगति को करहु पयानो, परम तत्व उर लावो।
मोह जालको काट पियारे, अपनो रूप विचारो,
मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, यो उर निश्चय धारो ॥५३॥

दोहा—मृत्युमहोत्सव पाठको पढो सुनो बुधिवान।
सरधा धर नित सुख लहो, सूरचन्द्र शिवथान ॥
पञ्च उभव नव एक नभ, सवतै सो सुखदाय।
आश्विन श्यामा सप्तमी, कह्यो पाठ मनलाय ॥



श्री शांतिनाथ जिन पूजा

(कवि श्री रामचन्द्रजी कृत)

अडिल्ल

शान्ति जिनेश्वर नमूँ तीर्थ वसु दुगुण ही,
पचमचक्री अनग दुविध षट् सुगुण ही।
तृणवत रिधि सब छारि धारि तप शिव वरी,
आह्वाननविधि करू वारत्रय उच्चरी॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर सवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन।
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

नाराच छन्द

शैल हेमतैं पतत आपिका सुव्योमही।
रत्नभृन्गधारि नीर सीत अग सो मही॥
रोग सोग आधि व्याधि पूजते नसाय हैं।
अनत सौख्यसार शांतिनाथ सेय पाय हैं॥१॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल नि०

चदनादि कुकमादि गधसार ल्यावही
भृग वृद गुजतैं समीर सग ध्यावही॥ रोग सोग० ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय ससारतापविनाशनाय चन्दन निर्व०

इदु कुद हारतैं अपार स्वेत साल ही।
दुति खडकार पुज धारिये विशाल ही॥ रोग सोग० ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथभगवज्जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्०

पचवरन पुष्पसार ल्याइये मनोग्य ही।
स्वर्न थाल धारिये मनोज नास जोग्यही॥ रोग सोग० ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथभगवज्जिनेन्द्राय कामबाणविध्वसनाय पुष्प०

[illegible] हरि।

[illegible] हरि ॥ [illegible] ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०

दीप ज्योतिमय उद्योत [illegible]।

[illegible] मोह [illegible] ॥ [illegible] ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि०

[illegible]।

[illegible] ॥ रोग नाश० ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०

[illegible]।

[illegible] ॥ [illegible] ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०

छप्पय—[illegible] सुतीर्थ उद्भव [illegible]।

चन्दन [illegible] ॥

सुर तरु के [illegible]।

दीप रतनमय ज्योति धूपतें मधु [illegible]कारें ॥

तहँ फल उत्तम अरघ करि शुभ 'रामचन्द्र' कर ध्यान धरि।

श्री शान्तिनाथ के चरण जुग वसु विधि अरचैं माथ धरि ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व०

पञ्च कल्याणक अर्घ्य

दोहा— सर्वारथ सिधितें चये, भाद्रव सप्तमी स्याम।

ऐरादे उर अवतरे, जजूं गर्भ अभिराम ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री भाद्रकृष्णासप्तम्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जेठ चतुरदसि कृष्णको, जनम श्रीभगवान।

सनपन करि सुरपति जजे, मैं जजहूँ धरि ध्यान ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जेठ असित चउदसि धरचो, तप तजि राज महान ।
सुर नर खगपति पद जजैं, है जज हूँ भगवान ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्या तपोमगलमडिताय श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पोस सुकल ग्यारसि हने, घाति कर्म सुखदाय ।
केवल लहि वृष भाखियौ, जजू शांति पद ध्याय ॥ ४ ॥

ॐ ह्री श्री पौषशुक्लैकादश्या ज्ञानमगलमडिताय श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृष्ण चतुरदसि जेठकी, हनि अघाति सिवथान ।
गये समेदाचल थकी, जजू मोक्ष कल्यान ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्या मोक्षमगलमडिताय श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

सोरठा—शांति जिनेश्वर पाय, बदू मन वच कायतै ।
देहु सुमति जिनराय, ज्यौं विनती रुचिौं करौं ॥ १ ॥

(चाल ससार सासरियो भाई दोहिलो)

शांति करम वसुहानिकै, सिद्ध भये सिव जाय ।
शांति करो सब लोक मे, अरज यहै सुखदाय ॥
शांति करो जगशांतिजी ॥ १ ॥

धन्य नयरि हथनापुरी, धन्य पिता विश्वसेन ।
धन्य उदर अयरा सती, शांति भये सुख देन ॥ शांति० ॥२॥

भादव सप्तमि स्यामहि, गर्भकल्याणक ठानि ।
रतन धनद वरषाइये, षट नव मास महान ॥ शांति० ॥३॥

जेठ असित चउजस विषैं, जनम कल्याणक इद ।
मेरु करचौ अभिषेककौं, पूजि नचे सुरवृन्द ॥ शांति० ॥४॥

हेम वरन तन सोहना, तुग धनुष चालीस ।
आयुवरसलख नरपति, सेवत सहस बतीस ॥ शांति० ॥५॥

षटखड नवविधि तियसवे, चउदहरतन भडार।
कछुकारण लखिके तजे, पणचव जसिय अगार ॥ शांति० ॥ ६ ॥

देव रिषि सब आयकैं, पूजि चले जिन वोधि।
लेय सुरा शिवका धरो, विरछ नदीश्वर सोधि ॥ शांति० ॥ ७ ॥

कृष्ण चतुरदसि जेठकी, मनपरजै लहि ज्ञान।
इद कल्याणक तप कररलो, ध्यान धरचा भगवान ॥ शांति० ॥ ८ ॥

षष्ठम करि हित असनके, पुर सोमनस मभार।
गये दयो पय मित्तजी, वरषे रतन अपार ॥ शांति० ॥ ९ ॥

मौनसहित वसु दुगुणही, बरस करे तप ध्यान।
पौष सुकह ग्यारसि हने, घाति लह्यो प्रभु ज्ञान ॥ शांति० ॥१०॥

समवसरन धनपति रच्यो, कमलासनपर देव।
इन्द्र नरा षटद्रव्यकी, सुति थिति शुति करि एव ॥ शांति० ॥११॥

धन्य जगलपद सो तनो, आयौ तुम दरबार।
धन्य उभ चखि ये भये, वदन जिनन्द निहारि ॥ शांति० ॥१२॥

आज सफल कर ये भये, पूजत श्रीजिन पाय।
सीस सफल अब ही भयो, धोक्यो तुम प्रभु आय ॥ शांति० ॥१३॥

आज सफल रसना भई, तुम गुणगान करन्त।
धन्य भयौ हिय मो तनौं, प्रभुपदध्यान धरन्त ॥ शांति० ॥१४॥

आज सफल जग मो तनो, श्रवन सुनत तुमवैन।
धन्य भये वसु अग ये, नमत लयौ अति चैन ॥ शांति० ॥१५॥

राम कहै तुम गुणतणा, इन्द लहै नहि पार।
मैं मति अलप अजान हूँ, होय नही विसतार ॥ शांति० ॥१६॥

बरस सहस पचीसही, षोडस कम उपदेश।
देय समेद पधारिये, मास रहे इक सेस ॥ शांति० ॥१७॥

जेठ असित चउदसि गये, हनि अघाति सिवथान।
सुरपति उत्सव अति करे, मगल मोछि कल्यान ॥ शांति० ॥१८॥

सेवक अरज करै सुनो, हो करुणानिधि देव।
दुखमय भवदधि तैं मुझै, तारि करू तुम सेव ॥ शांति० ॥१६॥

घत्ता छन्द

इति जिन गुणमाला अमल रसाला जो भविजन कंठे धरई।
हुय दिवि अमरेस्वर, पुहमि नरेस्वर, शिवसुन्दरि ततछिन वरई ॥
ॐ ह्री श्री शांतिनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षोडशकारण व्रत जाप

समुच्चय — ॐ ह्री श्री दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारण भावनाभ्यो नम।
(१) ॐ ह्री श्री दर्शन विशुद्धये नम (२) ॐ ह्री श्री विनय सम्पन्नतायै नम (३) ॐ ह्री श्री शीलव्रतेष्वनतिचाराय नम (४) ॐ ह्री श्री आभीक्ष्णज्ञानो पयोगाय नम (५) ॐ ह्री श्री सवेगाय नम (६) ॐ ह्री श्री शक्तितस्त्यागाय नम (७) ॐ ह्री श्री शक्तितस्तपसे नम (८) ॐ ह्री श्री साधुसमाधये नम (९) ॐ ह्री श्री वैयाव्रत्य करणाय नम (१०) ॐ ह्री श्री अर्हद्भक्त्यै नम (११) ॐ ह्री श्री आचार्य भक्त्यै नम (१२) ॐ ह्री श्री बहुश्रुतभक्त्यै नम (१३) ॐ ह्री श्री प्रवचनभक्त्यै नम (१४) ॐ ह्री श्री आवश्यकापरिहाणयै नम (१५) ॐ ह्री श्री मार्गप्रभावनायै नम (१६) ॐ ह्री श्री प्रवचन-वत्सलत्वाय नम।

* भजन *

सांवलिया पारसनाथ शिखर पर भले विराजे जी।
भले विराजे, भले विराजे, भले विराजे जी ॥ साव० ॥१॥
टोंक टोंक पर ध्वजा विराजे झालर घंटा बाजे जी।
झालर की झंकार सुनो जब अनदह बाजे बाजे जी ॥ साव० ॥२॥
दूर दूर से यात्री आवें मन में लेकर चाव।
अष्ट द्रव्य से पूजा कीनी, पुष्प दिये चढाय ॥ सांव० ॥३॥
पैंड पैंड पर सिंह दहाडे जहाँ भीलों का वासा।
जहाँ प्रभु तुम मोक्ष गये थे वहाँ लियो निरवासा ॥ साव० ॥४॥
दूर दूर से भील भी आये जिनकी मोटी चोटी।
जिन के दया धर्म नहीं मन में उनकी किस्मत खोटी ॥ सांव० ॥५॥

❀ आरती ❀

इह विधि मंगल आरती कीजे, पंच परमपद भज सुख लीजे। टेक।
पहली आरती श्री जिनराजा, भवदधि पार उतार जिहाजा। यह०।
दूसरी आरती सिद्धन केरी, सुमरन, करत मिटे भव फेरी। यह०।
तीजी आरती सूर मुनिन्दा, जनम मरण दुःख दूर करिन्दा। यह०।
चौथी आरती श्री उवज्झाया, दर्शन देखत पाप पलाया। यह०।
पाचवीं आरती साधु तिहारी, कुमति विनाशन शिव अधिकारी॥
छट्ठी ग्यारह प्रतिमा धारी, श्रावक बन्दौं आनन्दकारी। यह०।
सातवीं आरती श्री जिनवाणी, 'द्यानत' स्वर्ग मुक्ति सुखदानी।
सध्या करके आरती कीजे, अपनो जनम सफल कर लीजे।
जो कोई आरती करे करावे, सो नर नारी अमर पद पावे॥

❀ चौबीसों भगवान की आरती ❀

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति पदम सुपार्श्व की जय हो।
जिनराजा, दीनदयाला, श्री महाराज की आरती। टेक।
चन्द्र पहुप शीतल श्रेयांशा, वासुपूज्य महाराज की जय हो। जिन०
बिमल अनन्त धर्म जस उज्ज्वल, शान्तिनाथ महाराज की जय हो। जिन०
कुंथुनाथ, अरि, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमिनाथ महाराज की जय हो। जिन०
नेमिनाथ प्रभु पार्श्व शिरोमणि, वर्द्धमान महाराज की जय हो। जिन०
जिन चौबीसों की आरती करो, म्हारो आवागमन, म्हारो जामण मरण मिटावो महाराज जी, जय हो जिनराजा,
दीनदयाला श्री महाराज की आरती।

॥ श्री महावीर स्वामी की आरती ॥

जय महावीर प्रभो स्वामी जय महावीर प्रभो।
कुण्डलपुर अवतारी, त्रिशलानन्द विभो॥
ओम जय महावीर प्रभो॥

सिद्धारथ घर जन्मे, वैभव था भारी स्वामी वैभव था भारी
बाल ब्रह्मचारी, व्रत पाल्यो तपधारी। १। ओम जय

आतम ज्ञान विरागी, सम दृष्टि धारी।
माया मोह विनाशक, ज्ञान ज्योति जारी। २। ओम जय

जग में पाठ अहिंसा, आपही विस्तार्यो।
हिंसा पाप मिटा कर, सुधर्म परिचार्यो। ३। ओम जय

यहि विधि चांदनपुर में अतिशय दरशार्यो।
ग्वाल मनोरथ पुर्यो दूध गाय पार्यो। ४। ओम जय

अमरचन्द को स्वपना, तुमने प्रभु दीना।
मन्दिर तीन शिखिर का, निर्मित है कीना। ५। ओम जय

जयपुर नृप भी तेरे, अतिशय के सेवी।
एक ग्राम तिन दिनों, सेवा हित यह भी। ६। ओम जय

जो कोई तेरे दर पर, इच्छा कर आवे।
मनवांछित फल पावै, संकट मिट जावे। ७। ओम जय

निशि दिन प्रभु मन्दिर में जगमग ज्योति जरे।
सेवक प्रभु चरणों में, आनन्द मोद भरे। ८।
ओम जय महावीर प्रभो॥

पार्श्वनाथ की आरती

रचयिता—जियालाल जैन

जय पारस देवा प्रभु जय पारस देवा।
सुर नर मुनि जन तव चरनन की करते नित सेवा ॥ टेक

पौष बदी ग्यारसी, काशी मे आनन्द अति भारी।
अश्वसेन घर वामा के उर लीनो अवतारी ॥ जय० ॥ १ ॥

श्याम वरण नव हाथ काय पग उरग लखन सोहै।
सुरकृत अति अनुपम पट भूषण सबका मन मोहै ॥ जय० ॥ २ ॥

जलते देख नाग नागिनी को पच नवकार दिया।
हरा कमठ का मान ज्ञान का भानु प्रकाश किया ॥ जय० ॥ ३ ॥

मात-पिता तुम स्वामी मेरे आश करूँ किसकी।
तुम बिन दूजा और न कोई शरण गहूँ जिसकी ॥ जय० ॥ ४ ॥

तुम परमातम तुम अध्यातम तुम अन्तर्यामी।
स्वर्ग मोक्ष पदवी के दाता त्रिभुवन के स्वामी ॥ जय० ॥ ५ ॥

दीनबन्धु दुखहरण जिनेश्वर तुम ही हो मेरे।
दो शिवपुर का वास दास हम द्वार खड़े तेरे ॥ जय० ॥ ६ ॥

विषय विकार मिटाओ मन का अर्ज सुनो दाता।
'जियालाल' कर जोड प्रभु के चरणो चित लाता ॥ जय० ॥ ७ ॥

अथ शांति मंत्र प्रारभ्यते

ॐ नमः सिद्धेभ्यः। श्री वीतरागाय नमः। ॐ नमोऽर्हते भगवते, श्रीमते पार्श्वतीर्थङ्कराय द्वादशगणपरिवेष्टिताय, शुक्लध्यान पवित्राय, सर्वज्ञाय स्वयंभुवे, सिद्धाय, बुद्धाय, परमात्मने, परमसुखाय, त्रैलोकमहीव्याप्ताय, अनन्तसंसारचक्रपरिमर्दनाय, अनन्तदर्शनाय, अनन्तवीर्याय, अनन्तसुखाय, सिद्धाय, बुद्धाय, त्रैलोक्यवशङ्कराय, सत्यज्ञानाय, सत्यब्रह्मणे, धरणेन्द्रफणामण्डलमण्डिताय, ऋष्यार्यिका श्रावक श्राविका प्रमुख चतुस्सङ्घोपसर्गविनाशनाय, घातिकर्म विनाशनाय, अघातिकर्म विनाशनाय। अपवाय छिधि-छिधि भिधि-भिधि। मृत्युं छिधि-छिधि भिधि-भिधि। अतिकामछिधि २ भिधि २। रतिकाम छिधि-छिधि भिधि भिधि। क्रोध छिधि-छिधि भिधि-भिधि। अग्नि छिधि-छिधि भिधि-भिधि। सर्वशत्रु छिधि २ भिधि २। सर्वोपसर्ग छिधि २ भिधि २। सर्वविघ्न छिधि २ भिधि २। सर्वभय छिधि २ भिधि २। सर्वराजभय छिधि २ भिधि २। सर्वचौरभय छिधि २ भिधि २। सर्वदुष्टभय छिधि २ भिधि २। सर्वमृगभय छिधि २ भिधि २। सर्वमात्मचक्रभय छिधि २ भिधि२। सर्वपरमन्त्र छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वशूलरोग छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वक्षयरोग छिन्धि २ भिन्ध २। सर्वकुष्ठरोग छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वक्रूररोग छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वनरमारीं छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वगजमारीं छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वाश्वमारीं छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वगोमारीं छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वमहिषमारिं छिन्धि २ भिन्धि२। सर्वधान्यमारिं छिन्धि २ भिन्धि २। सर्ववृक्षमारिं छिन्धि २

भिन्धि २। सर्वगलमारि छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वपत्रमारि छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वपुष्पमारि छिन्धि २ भिन्धि २ सर्वफलमारि छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वराष्ट्रमारि छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वदेशमारि सिन्धि २ भिन्धि २। सर्वविषमारि छिन्धि २ भिन्धि २। वेतालशाकिनीभय छिन्धि २ भिन्धि २ सर्ववेदनीय छिन्धि २ भिन्धि २। सर्वमोहनीय छिन्धि २ भिन्धि २ सर्वकर्माष्टक छिन्धि २ भिन्धि २।

ॐ सुदर्शन महाराज चक्रविक्रम तेजोवल शौर्यवीर्य शान्ति कुरुकुरु। सर्वजनानन्दन कुरुकुरु। सर्वभव्यानन्दन कुरुकुरु। सर्व गोकुलानन्दन कुरुकुरु। सर्वग्राम नगरखेट कर्वटमट वपत्तनद्रोण मुर सवाहानन्दन कुरुकुरु। सर्वलोकानन्दन कुरुकुरु। सर्वदेशानन्दन कुरुकुरु सर्वजयमानानन्दन कुरुकुरु। सर्वदु ख हन हन, दह दह, पच कुट कुट, शीघ्र शीघ्र। यत्सुख त्रिषुलोकेपु व्याधिव्यसनवर्जित।

अभय क्षेममारोग्य स्वतिरस्तुविधीयते॥ शिवमस्तु। कुलगोत्रधन धान्य सदास्तु। चन्द्रप्रभु वासुपूज्य मल्लिवर्द्धमान पुष्पदन्तशीतल मुनिसुव्रत नेमिनाथ पार्श्वनाथ इत्येभ्यो नमः॥ इत्यनेन मन्त्रेण नवग्रहार्थं गन्दोघ धारा वर्षणम्॥

अष्टाह्निका व्रत जाप

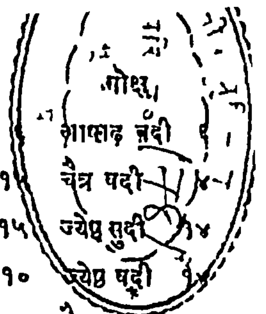
समुच्चय — ॐ ह्री श्री नन्दीश्वर द्वीपस्थद्वापचाशज्जिन चैत्यालयेभ्यो नम।

(१) ॐ ह्री श्री नन्दीश्वर सज्ञाय नम (२) ॐ ह्री श्री अष्टमहाविभूति सज्ञाय नम
(३) ॐ ह्री श्री त्रिलोकसार सज्ञाय नम (४) ॐ ह्री श्री चतुर्मुख सज्ञाय नम
(५) ॐ ह्री श्री स्वर्गसोपान सज्ञाय नम (६) ॐ ह्री श्री सिद्धचक्र सज्ञाय नम
(७) ॐ ह्री श्री पञ्चमहालक्षण सज्ञाय नम (८) ॐ ह्री श्री इन्द्रध्वज सज्ञाय नम

श्री चौबीस तीर्थङ्करों के पञ्च-कल्याणक तिथियां

श्रावकों को नीचे लिखे दिनों में पूजन और स्वाध्याय करना चाहिये, ऐसा करने से पुण्य बंध होता है।

स०	नाम तीर्थङ्कर	गर्भ		जन्म		तप		ज्ञान		मोक्ष	
१	श्री आदिनाथ जी	आषाढ़ कृष्ण	२	चैत्र वदी	९	चैत्र वदी	९	फाल्गुन वदी	११	माघ वदी	१४
२	श्री अजितनाथ जी	ज्येष्ठ वदी	१५	माघ सुदी	१०	माघ सुदी	१०	पौष सुदी	४	चैत्र सुदी	५
३	श्री सम्भवनाथ जी	फाल्गुन सुदी	८	कार्तिक सुदी	१५	मगसिर सुदी	१५	कार्तिक वदी	४	चैत्र सुदी	६
४	श्री अभिनन्दननाथ जी	वैसाख सुदी	६	माघ वदी	१२	माघ सुदी	१२	पौष सुदी	१४	वैसाख सुदी	६
५	श्री सुमतिनाथ जी	श्रावण सुदी	२	चैत्र सुदी	११	चैत्र सुदी	११	चैत्र सुदी	११	चैत्र सुदी	११
६	श्री पद्मप्रभु जी	माघ वदी	६	कार्तिक सुदी	१३	कार्तिक सुदी	१३	चैत्र सुदी	१५	फाल्गुन वदी	४
७	श्री सुपार्श्वनाथ जी	भादों सुदी	६	ज्येष्ठ सुदी	१२	ज्येष्ठ सुदी	१२	फाल्गुन वदी	६	फाल्गुन वदी	७
८	श्री चन्द्रप्रभु जी	चैत्र वदी	५	पौष वदी	११	पौष वदी	११	फाल्गुन वदी	७	फाल्गुन सुदी	७
९	श्री पुष्पदन्त जी	फाल्गुन वदी	९	मगसिर सुदी	१	मगसिर सुदी	१	कार्तिक सुदी	२	आसोज सुदी	८
१०	श्री शीतलनाथ जी	चैत्र वदी	८	माघ वदी	१२	माघ वदी	१२	पौष वदी	१४	आसोज सुदी	८
११	श्री श्रेयांसनाथ जी	ज्येष्ठ वदी	८	फाल्गुन वदी	११	फाल्गुन वदी	११	माघ वदी	१	श्रावण सुदी	१५
१२	श्री वासुपूज्य जी	आषाढ़ वदी	६	फाल्गुन वदी	११	फाल्गुन वदी	१४	भादों वदी	२	भादों सुदी	१४



सं०	नाम तीर्थङ्कर	गर्भ	जन्म	तप	ज्ञान	मोक्ष
१३	श्री विमलनाथ जी	ज्येष्ठ वदी १०	माघ सुदी १४	माघ सुदी १४	माघ सुदी [illegible]	आषाढ़ सुदी [illegible]
१४	श्री अनन्तनाथ जी	कार्तिक वदी १	ज्येष्ठ वदी १२	ज्येष्ठ वदी १२	चैत्र वदी १[illegible]	चैत्र वदी ४
१५	श्री धर्मनाथ जी	वैसाख सुदी ८	माघ सुदी १३	माघ सुदी १३	पौष सुदी १५	ज्येष्ठ सुदी ४
१६	श्री शान्तिनाथ जी	भादों वदी ७	ज्येष्ठ वदी ४	ज्येष्ठ वदी १४	पौष सुदी १०	ज्येष्ठ वदी १४
१७	श्री कुन्थुनाथ जी	श्रावण वदी १०	वैशाख सुदी १	वैसाख सुदी १	चैत्र सुदी ३	वैसाख सुदी १
१८	श्री अरहनाथ जी	फाल्गुन सुदी ३	मगसिर सुदी १४	मगसिर सुदी १४	कार्तिक सुदी १२	चैत्र सुदी ११
१९	श्री मल्लिनाथ जी	चैत्र सुदी १	मगसिर सुदी ११	मगसिर सुदी ११	पौष वदी २	फाल्गुन सुदी ५
[illegible]	श्री मुनिसुव्रतनाथ जी	श्रावण वदी २	वैशाख वदी १०	वैसाख वदी १०	वैसाख वदी ९	फाल्गुन वदी १२
[illegible]	श्री नमिनाथ जी	आसोज वदी २	आषाढ़ वदी १०	आषाढ़ वदी १०	मगसिर सुदी ११	वैसाख वदी १४
[illegible]	श्री नेमिनाथ जी	कार्तिक सुदी ६	श्रावण सुदी ६	श्रावण सुदी ६	आसोज सुदी १	आषाढ़ सुदी ८
३	श्री पार्श्वनाथ जी	वैसाख वदी २	पौष वदी ११	पौष वदी ११	चैत्र वदी ४	श्रावण सुदी १
४	श्री महावीर जी	आषाढ़ सुदी ६	चैत्र सुदी १३	मगसिर वदी १०	वैसाख सुदी १०	कार्तिक वदी १५